इकाई 1 - निर्देशन का अर्थ, कार्यक्षेत्र एवं महत्व

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 निर्देशन का अर्थ
1.4 निर्देशन की परिभाषाएँ
1.5 निर्देशन के उद्देश्य
1.6 निर्देशन की प्रकृति
1.7 निर्देशन का कार्य क्षेत्र
1.7.1 शैक्षिक निर्देशन
1.7.2 व्यावसायिक निर्देशन
1.7.3 व्यावहारिक निर्देशन
1.7.4 विकासात्मक निर्देशन
1.7.5 उप- व्यावसायिक निर्देशन
1.7.6 स्वास्थ्य निर्देशन
1.8 निर्देशन का महत्व
1.9 सारांश
1.10 शब्दावली
1.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
1.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

मनुष्य के भीतर एक ऐसी क्षमता विद्यमान है जिससे वह दूसरों से परामर्श ले सकता है और दूसरों को परामर्श एवं निर्देशन प्रदान कर सकता है। वह अपने सामान्य एवं संकट के क्षणों में एक-दूसरे की मदद करने के लिए अपेक्षित निर्देशन देता है जिससे उसकी वैयक्तिक एवं सामाजिक जीवनधारा

निर्वाध रूप से चलती रहती है। निर्देशन अर्थात दिशा दिखाने की प्रवृत्ति हर सामाजिक व्यवस्था में किसी न किसी रूप में कार्यशील रही है। इसका वर्तमान स्वरूप 20वीं शताब्दी की देन है।

वैसे तो निर्देशन का अर्थ बताने के लिए भिन्न-भिन्न मत देखने को मिलते हैं फिर भी निर्देशन को परिभाषित करते हुए कहा जा सकता है कि निर्देशन एक ऐसी क्रिया है जिसमें कुछ विशेष प्रकार के निर्देशन कर्मियों के माध्यम से व्यक्ति को उसकी समस्या तथा विकल्प बिन्दुओं से निपटने में अपेक्षित राय एवं सहायता प्रदान की जाती है। निर्देशन एक ऐसी अवस्था है जिसमें व्यक्ति को अपने आप को समझ पाने अपनी योग्यताओं तथा सीमाओं के अन्तर्निहित सामर्थ्य को समझने एवं उसी स्तर के कार्य-कलापों को करने में सक्षम बनाता है। निर्देशन प्रत्येक अवस्था की समस्याओं के समाधान में सहायक सिद्ध होने के अतिरिक्त आगामी समस्याओं की पूर्व तैयारी में भी विशेष सहायक होता है। निर्देशन किसी व्यक्ति की आयु या अवस्था से बँधा हुआ नहीं होता है। यह जीवन पर्यन्त विद्यमान रहने वाली आवश्यकता है।निर्देशन बच्चों, किशोर, प्रौढों एवं वृद्धों सभी के लिए महत्वपूर्ण होता है। निर्देशन की प्रक्रिया के अन्तर्गत निर्देशन प्राप्त करने वाले व्यक्ति में निहित विशेषता को तथा शैक्षिक, व्यावसायिक एवं वैयक्तिक क्षेत्र से सम्बन्धित जानकारी का समन्वित अध्ययन आवश्यक है। कुछ विद्वान् निर्देशन और शिक्षा दोनों को ही एक दूसरे के पूरक मानते हैं।

निर्देशन का महत्व मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में होता है। निर्देशन व्यक्ति की पूर्णता के साथ-साथ उसके समस्त विकास, उसकी प्रसन्नता, समाज में उसकी सार्थकता बढ़ाने के उद्देश्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वर्तमान में निर्देशन की उपयोगिता के आधार पर उसका कार्यक्षेत्र बढ़ता ही जा रहा है। शिक्षा, व्यक्तिगत समस्याएँ, व्यावसायिक, स्वास्थ्य, विकास की प्रक्रिया एवं चिकित्सा ये विभिन्न क्षेत्र हैं, इन सभी क्षेत्रों में निर्देशन की विशेष आवश्यकता होती है।

निर्देशन का व्यक्ति के जीवन में महत्व अत्यधिक बढ़ता जा रहा है। जैसा ऊपर वर्णन किया जा चुका है, कि जीवन के अनेक क्षेत्रों में आज इसकी उपयोगिता बढ़ गई है। चाहे व्यवसाय का क्षेत्र हो या सामाजिक क्षेत्र, व्यक्तिगत समस्याओं के समाधान में भी निर्देशन की आवश्यकता पड़ती है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. निर्देशन के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।
2. निर्देशन के प्रमुख उद्देश्यों से परिचित हो सकेंगे।
3. निर्देशन की प्रकृति एवं उसके कार्य क्षेत्रका वर्णन कर सकेंगे।

4. व्यक्ति के जीवन मेंनिर्देशन के महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे ।

1.3 निर्देशन का अर्थ

निर्देशन का अर्थ है, एक व्यक्ति द्वारा किसी अन्य व्यक्ति को निर्देशित करना। निर्देशन आदेश से भिन्न होता है, क्योंकि आदेश में अधिकार भाव की प्रधानता होती है। जबकि निर्देशन एक प्रकार का सलाह या सुझाव होता है। निर्देशन का तात्पर्य होता है किसी व्यक्ति या बालक को दी जाने वाली सहायतार्थ सलाह। निर्देशन बुद्धिमत्तापूर्ण चयन एवं समायोजन के लिए दिया जाता है। निर्देशन किसी व्यक्ति द्वारा माँगे जाने पर या व्यक्ति की आवश्यकता को ध्यान में रखकर न माँगे जाने पर भी स्वतः उपलब्ध कारायी जाने वाली सहायता होती है, जो व्यक्ति को विभिन्न प्रकार की समस्याओं के समाधान हेतु समर्थ बनाती है।

निर्देशन एक ऐसा समप्रत्यय है जो न तो सरल है और न ही आसानी से समझे जाने योग्य है। निर्देशन किसी व्यक्ति की आयु या अवस्था से बँधा हुआ नहीं होता है। प्रत्येक अवस्था में निर्देशन उस अवस्था विशेष की समस्याओं के समाधान में सहायक सिद्ध होने के अतिरिक्त अगली अवस्थाओं की सम्भावित समस्याओं के लिए पूर्व तैयारी हेतु भी सहायता देता है।

निर्देशन की प्रक्रिया के अन्तर्गत निर्देशन प्राप्त करने वाले व्यक्ति में निहित विशेषताओं तथा शैक्षिक, व्यावसायिक एवं वैयक्तिक क्षेत्र से सम्बन्धित जानकारी का समन्वित अध्ययन आवश्यक है। कुछ विद्धानों के अनुसार निर्देशन एवं शिक्षा दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं। निर्देशन को सहायता प्रदान करने वाली प्रक्रिया के रूप में भी प्रदर्शित किया जाता है। जब निर्देशन को शिक्षा की उपप्रक्रिया के रूप में स्वीकार करते हैं तब निर्देशन की भूमिका का विशेष महत्व होता है। शिक्षा के क्षेत्र में निर्देशन के इस रूप का उद्देश्य छात्रों हेतु निर्धारित किए गए लक्ष्यों की प्राप्ति करना माना जाता है।

निर्देशन के उपर्युक्त अर्थ को स्पष्ट करने के अतिरिक्त इसके तात्पर्य के सम्बन्ध में कुछ परिभाषाओं का भी उल्लेख किया जा सकता है यद्यपि अभी तक निर्देशन की कोई सर्वमान्य परिभाषा प्रस्तुत नहीं की जा सकी है, परन्तु इन परिभाषाओं के आधार पर निर्देशन के अर्थ को समझने में सहायता प्राप्त हो सकेगी।

1.4 निर्देशन की परिभाषाएँ

निर्देशन को परिभाषित करने वाले कुछ विद्वानों के कथन इस प्रकार हैं –

शर्ले हैमरिन के अनुसार - ''व्यक्ति के स्वयं को पहचानने में इस प्रकार सहायता प्रदान करना, जिससे वह अपने जीवन में आगे बढ़ सके। इस प्रक्रिया को निर्देशन कहा जाता है''।

लेस्टर डी क्रो ने-अपनी पुस्तक 'एन इन्ट्रोडक्सन टू गाइडेन्स'' में निर्देशन को परिभाषित करते हुए लिखा है - ''निर्देशन से तात्पर्य, निर्देशन के लिए स्वयं निर्णय लेने की अपेक्षा निर्णय कर देना नहीं है और न ही दूसरे के जीवन का बोझ ढोना है। इसके विपरित योग्य एवं प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति को चाहे वह किसी भी आयु वर्ग का हो अपनी जीवन क्रियाओं को स्वयं गठित करने, अपने निजी दृष्टिकोण विकसित करने, अपने निर्णय स्वयं ले सकने तथा अपना भार स्वयं वहन करने में सहायता करना ही वास्तविक निर्देशन है।''

आर्थर जे0 जॉन्स के शब्दों में - ''निर्देशन एक प्रकार की सहायता है, जिसके अर्न्तगत एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को उसके समक्ष आए विकल्पों के चयन, समायोजन एवं समस्याओं के समाधान के प्रति सहायक होता है। यह निर्देशन प्राप्त करने वाले व्यक्ति में स्वाधीनता की प्रवृत्ति एवं अपने उत्तरदायी बनने की योग्यता में वृद्धि लाती है। यह विद्यालय अथवा परिवार की परिधि में आबद्ध न रहकर एक सार्वभौम सेवा कारूप स्वयं धारण कर लेती है। यह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र यथा परिवार व्यापार एवं उद्योग, सरकार, सामाजिक जीवन, अस्पताल व कारागृहों में व्यक्त होती है। वस्तुतः निर्देशन का क्षेत्र प्रत्येक ऐसी परिस्थिति में विद्यमान होता है जहां इस प्रकार के व्यक्ति हों जिन्हें सहायता की आवश्यकता हो और जहाँ सहायता प्रदान करने की योग्यता रखने वाले व्यक्ति हों।''

गाइडेन्स कमेटी ऑफ सॉल्ट लेक सिटी स्कूल ने निर्देशन को परिभाषित करते हुऐ लिखा है कि ''वास्तविक अर्थ में प्रत्येक प्रकार की शिक्षा के अन्तर्गत किसी न किसी प्रकार का निर्देशन व्याप्त है। इसके द्वारा शिक्षा को वैयक्तिक बनाने की चेष्टा प्रकट होती है। इसका अभिप्राय यह है कि प्रत्येक शिक्षक का यह उत्तरदायित्व है कि अपने छात्र की रूचियों, योग्यताओं एवं भावनाओं को समझे, वह उसकी आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए शैक्षिक कार्यक्रमों में अनुकूल परिवर्तन लाये।'' दूसरे अर्थ में, निर्देशन को एक विशेष प्रकार की सेवाओं की श्रृंखला कहा जाता है। इसके अर्न्तगत विद्यालयी कार्यक्रम को प्रभावी बनाने के लिए वे क्रियायें सम्मिलित की जाती हैं जो छात्रों की आवश्यकताओं को पूरा करसकें इसके अन्तर्गत निम्नलिखित योजनाएँ उल्लेखनीय हैं-

1. छात्रों की वास्तविक आवश्यकताओं एवं समस्याओं की जानकारी प्राप्त करना।
2. छात्रों के सम्बन्ध में प्राप्त सूचनाओं के आधार पर उनकी वैयक्तिक आवश्यकताओं के अनुदेशन को अनुकूलित करने में सहायता प्राप्त करना।

3. शिक्षकों में बालक की वृद्धि एवं विकास के सम्बन्ध में अधिकाधिक अवबोध की क्षमता का विकास करना।
4. विशिष्ट सेवाएं यथा-अभिविन्यास, वैयक्तिक तालिका, उपबोधन, व्यावसायिक सूचना, समूह निर्देशन, स्थापन्न स्नातकों व शिक्षा से वंचित छात्रों के अनुवर्तन इत्यादि का प्रावधान करना।
5. कार्यक्रम की सफलता ज्ञात करने वाले शोधों का संचालन।

डब्लू0 एल0 रिन्कल व आर0 एल0 गिलक्रिस्ट के अनुसार - ''निर्देशन का आशय है - छात्र में उपयुक्त एवं प्राप्त हो सकने योग्य उद्देश्यों के निर्धारण कर सकने तथा उन्हें प्राप्त करने हेतु वांछित योग्यताओं का विकास करसकने में सहायता प्रदान करना व प्रेरित करना ।इसके आवश्यक अंग इस प्रकार हैं-उद्देश्य का निरूपण ,अनुकूल अनुभवों का प्रावधान करना ,योग्यताओं का विकास करना तथा उद्देश्यों की प्राप्ति करना।बुद्धिमत्तापूर्ण निर्देशन के अभाव में शिक्षण को उत्तम शिक्षा की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता है तथा अच्छे शिक्षण के अभाव में दिया गया निर्देशन भी अपूर्ण होता है। इस प्रकार शिक्षण एवं निर्देशन एक दूसरे के पूरक हैं ।''

अमेरिका की वोकेशनल गाइडेन्स एसोसिएशन ने निर्देशन को परिभाषित करते हुए लिखा है-"निर्देशन वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा व्यक्ति को विकसित करने, अपने सम्बन्ध में पर्याप्त व समन्वित करने तथा कार्य क्षेत्र में अपनी भूमिका को समझने में सहायता प्राप्त होती है। साथ ही इसके द्वारा व्यक्ति अपनी इस धारणा को यथार्थ में परिवर्तित कर देता है।''

मायर्स के अनुसार- "निर्देशन व्यक्ति की जन्मजात शक्तियों व प्रशिक्षण से अर्जित क्षमताओं को संरक्षित रखने का एक मूल प्रयास है। इस संरक्षण के लिए वह व्यक्ति को उन समस्त साधनों से सम्पन्न बनाता है, जिससे वह अपनी तथा समाज की संतुष्टि के लिए अपनी उच्चतम शक्तियों का अन्वेषण कर सके।''

ट्रेक्सर के अनुसार-"निर्देशन वह है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को अपनी योग्यताओं एवं खामियों को समझने, उन्हें यथासम्भव विकसित करने, उन्हें जीवन लक्ष्यों से संयुक्त करने तथा अंततः अपनी समाजिक व्यवस्था के वांछनीय सदस्य की दृष्टि से एक पूर्ण एवं परिपक्व आत्म-निर्देशन की स्थिति तक पहुँचने में सहायक होता है।

स्किनर के अनुसार- "निर्देशन नवयुवकों को अपने से, दूसरों से और परिस्थितियों से सामंजस्य करना सीखने के लिए सहायता देने की प्रक्रिया है।''

निर्देशन के सन्दर्भ में उपलब्ध जो अनेक परिभाषाएँ ऊपर प्रस्तुत की गई हैं उसके कुछ महत्वपूर्ण बिन्दु अग्रलिखित हैं-

1. निर्देशन का परम् उद्देश्य लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में गति करना है।
2. निर्देशन एक शैक्षिक, सतत्, सुव्यवस्थित व क्रमबद्ध प्रक्रिया होती है।
3. निर्देशन एक व्यक्ति द्वारा अन्य दूसरे व्यक्ति को दी जाने वाली ऐसी सहायता है जिसे एक व्यक्ति प्राप्त करना चाहता है और दूसरा व्यक्ति देने को तत्पर होता है।
4. निर्देशन देने वाला पर्याप्त सामर्थ्य, बौद्धिक तथा प्रभावशाली व्यक्तित्व का होना चाहिए, जबकि निर्देशन प्राप्त करने वाला व्यक्ति ग्रहीता स्वभाव का होना आवश्यक है।
5. निर्देशनदाता पर्याप्त प्रशिक्षण एवं योग्यता प्राप्त होना चाहिए।
6. निर्देशन किसी आयु वर्ग या अवस्था विशेष तक सीमित नहीं है और उसे किसी भी व्यक्ति को दिया जा सकता है।
7. निर्देशन प्रक्रिया में अनेक अभिग्रह या मान्यताएँ व अभिमत तथा सिद्धान्त भी सम्मिलित किए जाते हैं। अर्थात् निर्देशन में इन सबका भी ध्यान रखा जाता है।
8. निर्देशन आदेश, नियन्त्रण तथा पर्यवेक्षण में पूरी तरह अलग प्रकार की प्रक्रिया है।
9. निर्देशन में व्यक्ति में सम्मान, स्वतंत्रता, अधिकार, गरिमा (प्रतिष्ठा) योग्यता आदि का भी पर्याप्त ध्यान दिया जाता है।
10. निर्देशन एक प्रकार की विभिन्न साधनों हेतु व्यक्ति की सामर्थ्य तथा उसकी योग्यता को विकसित करने वाली प्रक्रिया मात्र है।
11. निर्देशन से व्यक्ति को आत्मसंतुष्टि व आत्मसिद्धि जैसा संतोष भी प्राप्त होता है जो कि उसके मनोबल वृद्धि में सहायक होता है।
12. निर्देशन शिक्षा की एक आवश्यक कड़ी है जिसके बिना शिक्षण-प्रशिक्षण सम्भव नहीं हो सकता है ।

1.5 निर्देशन के उद्देश्य

निर्देशन के प्रकार्यात्मक पक्ष के वर्णन में निर्देशन के उद्देश्यों का उल्लेख सहायक सिद्ध होगा। क्रिब्बिन ने निर्देशन के उद्देश्यों को परम् उद्देश्यों और समीपस्थ उद्देश्यों के रूप में दो वर्गो में विभाजित किया है।-
निर्देशन के परम उद्देश्य

1. व्यक्ति का पूर्णतः परिष्कृत विकास
2. व्यक्ति का सर्वोत्तम विकास
3. अधिकतम सम्भव विकास

4. पूर्ण एवं संतुलित विकास
5. शारीरिक, बौद्धिक, सांवेगिक, सामाजिक और नैतिक विकास
6. विस्तृत विकास
7. आत्म निर्देशनात्मक विकास और वैयक्तिक परिपक्वता का विकास
8. व्यक्ति को बेहतर जीवन जीना सिखाना
9. वैयक्तिक प्रसन्नता और सामाजिक निपुणता
10. व्यक्ति को आत्मावलम्बी बनाना
11. व्यक्ति को आत्म-संयमी बनाना
12. व्यक्ति को आन्तरिक संसाधनों से परिपूर्ण बनाना

निर्देशन के समीपस्थ उद्देश्य

निर्देशन के समीपस्थ उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

1. छात्रों को अपने लक्ष्यों का बुद्धिमत्तापूर्ण ढंग से चयन करने की क्षमता का विकास करना।
2. छात्रों में पहल शक्ति, जिम्मेदारी, आत्मदिशा एवं आत्मनिर्देशन का विकास करना।
3. छात्रों को स्वयं अपने विषय, विद्यालय के बारे में अभिज्ञान का विकास कराना तथा इस योग्य बनाना कि विद्यालय में छात्र अपनी उपलब्धियों आदि के कारण जाना जाए।
4. छात्रों के जीवन में आने वाले संकटों के पूर्वानुमान करने, उनका परिहार करने तथा उनसे बचाव करने की योग्यता का विकास करना।
5. अध्यापकों को अधिक प्रभावी शिक्षण सम्पन्न करने हेतु सहयोग प्रदान करना।
6. छात्रों को विद्यालय तथा जीवन के अन्य क्षेत्रों में समायोजन स्थापित करने हेतु सहायता प्रदान करना।
7. छात्रों को उनकी अपनी समस्याओं की पहचान करने के योग्य बनाना। समस्याओं को समझने तथा समाधान करने की प्रक्रिया में उनकी सहायता करना।
8. जीवन की संकटकालीन परिस्थितियोंमें विवेकपूर्ण चयन करने योग्य बनाने तथा परिस्थितियों की व्याख्या करने में छात्रों को सहयोग देना।
9. छात्रों के भावी जीवन में समुत्पन्न होने वाली अनेक समस्याओं के समाधान हेतु आवश्यक अन्तर्दृष्टि एवं तकनीकी सामर्थ्य अर्जित करने के लिए सहयोग प्रदान करना।

10. नागरिकों को जीवन की लोकतांत्रिक प्रक्रिया में भाग लेने एवं उसके प्रति अपने योगदान हेतु उन्हें विकसित करना।
11. विद्यालय के सभी कार्यक्रमों के प्रति अपना अधिकतम योगदान सम्भव बनाने हेतु विद्यालय प्रबन्धकों को अधिक दक्षतापूर्वक प्रशासन सम्पादित करने के लिए सहायता देना।
12. इनके अलावा निर्देशन के अन्य समीपस्थ लक्ष्यों के अन्तर्गत परिवारों की सहायता करना, नैतिक चरित्र के विकास में समुदायों की सहायता करना, बेहतर मानवीय सम्बन्धों को प्रोत्साहन देना और पोषण करना, तथा अन्तर्राष्ट्रीय समझदारी के विकास को भी निर्देशन के समीपस्थ उद्देश्यों के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. छात्रों को अपने लक्ष्यों का बुद्धिमत्तापूर्ण ढंग से चयन करने की _____का विकास करना।
2. आत्म निर्देशनात्मक विकास और वैयक्तिक _____का विकासकरना।

1.6 निर्देशन की प्रकृति

निर्देशन एक प्रक्रिया है तथा इसका मूर्त स्वरूप एक विशेष प्रकार की सेवा में परिलक्षित होता है। इसके अन्तर्गत एक से अधिक जानकार, कुशल एवं प्रबुद्ध व्यक्ति अपने से कम जानकार व्यक्ति को उसके व्यक्तिगत, शैक्षिक, व्यावसायिक, सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में मदद प्रदान करता है तथा उसमें उपेक्षित जानकारी एवं निपुणता विकसित कर उसकी प्रभाविकता एवं सफलता की सम्भावना को अधिक से अधिक बढ़ाता है।

निर्देशन की प्रकृति दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक तथा समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्यों में सहजता से आंकी जा सकती है। दार्शनिक परिप्रेक्ष्य में इसे व्यक्ति के पूर्णतम विकास का पोषक, उसकी स्वाभाविक शक्तियों का संरक्षक तथा जीवनपर्यन्त चलने वाली गतिशील प्रक्रिया का द्योतक माना जाता है। इस रूप में निर्देशन को व्यक्ति के जीवन की अटूट धारा के रूप में उपकल्पित किया जाता है। मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में निर्देशन एक अन्तः क्रियात्मक व्यापार है जिसके जरिये एक विशेषज्ञता प्राप्त व्यक्ति एक कम जानकार व्यक्ति को परामर्श एवं अपेक्षित जानकारी प्रदान कर उसकी सामाजिक, व्यावसायिक एवं शैक्षिक परिस्थितियों से समंजन की प्रक्रिया को सरल एवं सहज बनाने में मदद देता है।

समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में निर्देशन एक सामाजिक कार्य है, जिसके तहत एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति का सहायक बनकर समाज कल्याण के अवसरों में विस्तार करता है।

उपर्युक्त विवरण के आधार पर निर्देशन की प्रकृति के बारे में निम्नलिखित विशेषताओं का उल्लेख किया जा सकता है-

1. निर्देशन की कार्यपद्धति 'व्यक्ति' या 'समूह' दोनों पर केन्द्रित हो सकती है।
2. निर्देशन क्रिया का स्वरूप एक जैसा न होकर बहुपक्षीय होता है।
3. निर्देशन का तात्कालिक लक्ष्य सेवार्थी की मौजूदा समस्या का हल प्राप्त कर सकने में मदद देना है, जबकि इसका चरम उद्देश्य उसे "आत्म निर्देशन" की ओर अग्रसर करना है।
4. निर्देशन का सम्बन्ध व्यक्ति के व्यक्तित्व सम्बन्धी सभी पक्षों यथा शारीरिक, मानसिक, सांवेगिक एवं सामाजिक से है। इसके अर्न्तगत व्यक्ति की अभिरूचियों एवं आकर्षणों पर विशेष ध्यान अपेक्षित है।
5. किसी भी परिस्थिति में निर्देशन की सेवाओं का उद्देश्य व्यक्ति का किसी कार्य विशेष से समायोजन कायम करना है।
6. निर्देशन का वस्तुनिष्ठ स्वरूप तब निखरता है जब इसके अन्तर्गत व्यक्ति को अपने बारे में जानकारी बढ़ाने का आधार किसी न किसी प्रकार की परीक्षा या परख पर निर्भर करता है।
7. निर्देशन में व्यक्ति एवं समाज दोनों के कल्याण सुनिश्चित करने पर बल दिया जाता है, जिससे यह मूलतः सामाजिक प्रक्रिया के रूप में गतिशील होता है।

1.7 निर्देशन का कार्यक्षेत्र

निर्देशन एक आन्दोलन के रूप में व्यक्ति के व्यावसायिक एवं समायोजनात्मक विकास हेतु आरम्भ किया गया था। लेकिन धीरे-धीरे निर्देशन के क्षेत्र का विस्तार होता गया और निर्देशन, शिक्षा प्रणाली का अभिन्न अंग बन गया है। निर्देशन व्यक्ति की पूर्णता के साथ, उसके समग्र विकास के साथ, उसकी प्रसन्नता के साथ, समाज में व्यक्ति को महत्वपूर्ण बनाने के उद्देश्य के साथ जुड़ गया। इस प्रकार निर्देशन के कार्य क्षेत्र का विकास अनेक दिशाओं में सम्पन्न हुआ। निर्देशन के क्षेत्र को छः प्रमुख की श्रेणियों के अन्तर्गत विभाजित किया जाता है-

1. शैक्षिक निर्देशन
2. व्यावसायिक निर्देशन
3. व्यक्तिगत निर्देशन
4. विकासात्मक निर्देशन
5. उपव्यावसायिक निर्देशन या विश्रामकाल सम्बन्धी निर्देशन या मनोरंजन निर्देशन

6. स्वास्थ्य निर्देशन।

1.7.1 शैक्षिक निर्देशन - जार्ज एफ0 मायर्स ने शैक्षिक निर्देशन को एक प्रक्रिया बतलाया है। जिसका सम्बन्ध एक ओर अपनी समस्त प्रभेदक विशिष्टताओं सहित एक विद्यार्थी और दूसरी ओर अवसरों एवं आवश्यकताओं के विभिन्न समूह के मध्य व्यक्ति के विकास या शिक्षा हेतु अनुकूल विन्यास स्थापित करने से है। शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता तब पड़ती है जब विद्यार्थी के सामने और भी पर्याप्त विकल्प होते हैं।

शैक्षिक निर्देशन के क्षेत्र में निर्देशन प्रक्रिया का उपयोग अनेक प्रकार से किया जाता है-

1. वांछित पाठ्यक्रम पर आधारित विषयों का चयन करने में।
2. पाठ्य सहगामी क्रियाओं के चयन हेतु।
3. नवीन पाठ्यक्रम के सम्बन्ध में निर्णय लेने में।
4. अधिगम प्रक्रिया के निरन्तर अपेक्षित उपलब्धिबनाएरखने की दृष्टि से।
5. राष्ट्रीय एकता पर आधारित कार्यक्रमोंमें भाग लेने हेतु प्रेरित करने की दृष्टि से।
6. अपव्यय एवं अवरोधन की समस्या का समाधान करने के लिए।
7. प्रौढ़शिक्षा पर आधारित कार्यक्रमों की दिशा में प्रेरित करने हेतु आदि।

1.7.2 व्यावसायिक निर्देशन

मायर्स के अनुसार - ''व्यावसायिक निर्देशन मूलतः युवकों की अमूल्य क्षमताओं तथा विद्यालयों द्वारा उन्हें प्रदान किए जाने वाले महँगे प्रशिक्षण को संरक्षित करने का प्रयत्न है। यह मानवीय संसाधनों में से सर्वाधिक कीमती संसाधन को संरक्षित करने हेतु व्यक्ति को वहाँ उस क्षेत्र में निवेश करने और उपयोग करने में सहयोग प्रदान करता है, जहाँ उसे अपने लिए सर्वाधिक प्रसन्नता एवं संतुष्टि और समाज को सर्वाधिक लाभ हो।''

व्यावसायिक निर्देशन का उद्देश्य व्यक्ति तथा समाज या व्यावसायिक संगठन दोनों के हितों की रक्षा करना है। इस प्रकार के निर्देशन से व्यक्ति को जीविका/व्यवसाय सम्बन्धी समस्याओं के समाधान हेतु निर्देशन दिया जाता है। इसके अन्तर्गत व्यक्ति को जीविकोपार्जन के माध्यम/व्यवसाय के चयन करने, व्यवसाय हेतु तैयारी करने, उसमें प्रविष्ट होने तथा उसमें सहयोग प्रदान किया जाता है।

1.7.3 व्यक्तिगत निर्देशन - इसके अन्तर्गत व्यक्ति से सम्बन्धित शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं सांवेगिक विकास से जुड़ी हुई विशेषताओं का अध्ययन व्यक्ति की विशेष परिस्थितियों का जाएजा तथा अपसमंजनकारी के मूल्यांकन पर बल दिया जाता है।

रॉबर्ट एच0 मैथ्यूसन के अनुसार - व्यक्तिगत निर्देशन व्यक्तियों को चयन करने, नियोजन और समायोजन तथा प्रभावशाली आत्म निर्देशन करने और व्यक्तिगत जीवन की समस्या का सामना करने में प्रदान किए जाने वाले व्यवस्थित व्यावसायिक सहयोग की प्रक्रिया है।''

निर्देशन के इस क्षेत्र विशेष के अन्तर्गत-

i. विद्यालय/कालेज/विश्वविद्यालय के प्रांगण में विद्यार्थियों के समक्ष प्रकट होने वाली सांवेगिक समस्याएँ।
ii. व्यक्तिगत जीवन के अन्दर की उलझनें।
iii. सामाजिक जीवन में आने वाली समायोजनात्मक समस्याओं को सम्मिलित किया जाता है। इस प्रकार सामाजिक समायोजन पारिवारिक समायोजन, वैवाहिक समायोजन, अवकाश के क्षणों के साथ समायोजन, भविष्य एवं अल्पकालिक कार्य क्षेत्रों में समायोजन, स्वास्थ्य समायोजन आदि अनेक क्षेत्र व्यक्तिगत समायोजन की सीमा में सम्मिलित किए जाते हैं।

1.7.4 विकासात्मक निर्देशन - विकास प्रक्रिया में सम्बन्धित समस्याओं या प्रश्नों के समाधान के लिए दिए जाने वाले निर्देशन को विकासात्मक निर्देशन कहते हैं। इसमें निर्देशन व्यक्ति को अपने सर्वोतम ढंग से विकसित होने में सहयोग करता है।

व्यक्ति की विकास प्रक्रिया में निम्न बिन्दुओं पर मुख्यतः निर्देशन किया जा सकता है-

i. सामाजिक रूप में स्वयं को विकसित कर वयस्कता अर्जित करना।
ii. जीवकोपार्जन हेतु स्वयं को तैयार करना।
iii. वयस्कों व बड़ों से सांवेगिक स्वतंन्त्रता प्राप्त करना।
iv. आर्थिक रूप से स्वावलम्बन व स्वतंत्रता को प्राप्त करना।
v. पारिवारिक व वैवाहिक जीवन तथा उसके उक्त दायित्यों को समझना एवं स्वयं को उसके लिए तैयार करना।
vi. बौद्धिक क्षमता व सम्प्रत्यय स्तर को तैयार करना।
vii. व्यक्ति के विविध मूल्यों तथा नैतिकता आदि की पृष्ठभूमि को तैयार करना।
viii. सामाजिक भूमिका को महिला पुरूष की विविधता के साथ अर्जित करना अर्थात् स्त्री पुरूष दोनों की सामाजिक भूमिका को पूर्णता से जानना।
ix. अपने आयुवर्ग के साथ या विषम लिंगियों के साथ उपयुक्त व स्वास्थ्य सम्बन्ध को सहजता से विकसित करना।

1.7.5 उप-व्यावसायिक निर्देशन - निर्देशन के इस क्षेत्र को उपव्यावसायिक निर्देशन के अतिरिक्त अवकाश काल निर्देशन या मनोरंजन निर्देशन भी कहते हैं। व्यक्ति के जीवन में प्रतिदिन कुछ घण्टे अथवा सप्ताह या महीने में कुछ एक दिन फुर्सत के होते हैं, जबकि उसे अपनी दैनिक व्यस्तता, शिक्षा या व्यवसाय से अवकाश प्राप्त रहता है, जिसमें वह मनोरंजन प्राप्त करने के अतिरिक्त अन्य अनेक प्रकार के कार्य करता है। कोई व्यक्ति अपना अवकाश कैसे व्यतीत करता है, अवकाश काल कितने उपयोगी एवं सुखदायी ढंग से व्यतीत करता है, उसका महत्व कार्य काल के लिए भी होता है। यदि फुर्सत के क्षणों को प्रभावशाली ढंग से मनोरंजन, शौक, शारीरिक-सामाजिक गतिविधियोंमें इस प्रकार व्यतीत किया जाए की व्यक्ति को सुख की अनुभूति प्राप्त हो समाज के अन्य वर्गो को लाभ पहुँचे और समय का सदुपयोग होने की अनुभूति अर्जित हो तो कार्य के समय व्यक्ति के निष्मादन स्तर में भी सुधार होता है। इसलिए उपव्यावसायिक निर्देशन महत्वपूर्ण है।

1.7.6 स्वास्थ्य निर्देशन - स्वास्थ्य के सन्दर्भ में दिया जाने वाला निर्देशन स्वास्थ्य निर्देशन कहलाता है। स्वास्थ्य निर्देशन जीवनशैली के विकृत रूप में अति महत्वपूर्ण होता जा रहा है। आज आधिकांश व्यक्ति शारीरिक या मानसिक अथवा दोनों ही प्रकार से कम या अधिक रूप में स्वास्थ्य समस्याओं में घिरा हुआ है। स्वास्थ्य हेतु निम्न उद्देश्यों के आधार पर निर्देशन की आवश्कता पड़ती है-

1. रोग निदान व उपचार के बाद उस विकृति के दुबारा होने की संभावना उसके बचाव के लिए क्या-क्या सावधानियाँ अपनायी जाए, इत्यादि में निर्देशन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।
2. आरोग्य व दीर्घजीवी जीवन की जीवनशैली किस रूप में होनी चाहिए आदि स्वास्थ्य सम्बन्धी जिज्ञासाओं को निर्देशन के रूप में समाधान दिया ज़ा सकता है।
3. वर्तमान समय की अस्त-व्यस्त जीवन शैली व्यक्ति की स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं की महत्वपूर्ण कारण होती है। यथा-आहार-विहार या खानपान रहन-सहन, कार्य सक्षमशीलता या व्यायाम को जीवन में व्यवस्थित स्वरूप देना।
4. लैंगिंक विकृतियों का मुख्य कारण व्यक्ति का अनुचित या विकृत व्यवहार ही होता है। अतः इस सन्दर्भ में व्यक्ति को समुचित रूप से निर्देशन प्रदान करना।
5. विभिन्न रोग बचाव की विधियों से व्यक्तियों को अवगत कराना तथा उन्हें अपनाने के लिए प्रेरित करना। रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने वाली जीवन शैली के प्रति प्रेरित करना।

6. किसी रोग या विकृति के लिए आवश्यक उपचार किस प्रकार तथा कहाँ से प्राप्त किया जाए, किस रोग में क्या उपचार लेना अधिक लाभकारी होगा आदि विकल्पों के चयन में व्यक्ति की मदद करना।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

3. निर्देशन के क्षेत्र को छः प्रमुख की श्रेणियों के अन्तर्गत_____किया जाता है
4. व्यावसायिक निर्देशन का उद्देश्य व्यक्ति तथा समाज या व्यावसायिक संगठन दोनों के हितों की _____करना है।
5. शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता तब पड़ती है जब विद्यार्थी के सामने और भी पर्याप्त _____होते हैं।

1.8 निर्देशन का महत्व

जिस प्रकार से मानव जीवन में विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं का अनुभव एवं समाज की मान्यताओं, आदर्शो एवं मूल्यों में तीव्र गति से परिवर्तन हो रहा है, संयुक्त परिवार विघटित होते जा रहे हैं। जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि हो रही है, बेरोजगारी, निर्धनता जैसी गम्भीर समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं, ऐसी स्थिति में निर्देशन का महत्व बढ़ जाता है। व्यक्ति मूलतः एक सामाजिक प्राणी है। व्यक्ति व समाज का महत्व निरन्तर बना रहे इसके लिए यह आवश्यक है कि दोनों ही एक दूसरे के लिए जीना सीखे। आज व्यक्ति और समाज दोनों के लिए ही तनावग्रस्त स्थिति उत्पन्न होने की सम्भावनाओं में तेजी से वृद्धि हो रही है। इस प्रकार की स्थिति से मुक्त रहने के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति एवं समाज का समन्वित विकास केवल उन्हीं दिशाओं में होता रहे जो दोनों के लिए कल्याणकारी हो। इस उद्देश्य की प्राप्ति में शिक्षा एवं निर्देशन ही अधिक सहायक हो सकते हैं।

निर्देशन का महत्व शैक्षिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक एवं राजनैतिक दृष्टिकोण से अत्यधिक है। छात्र असंतोष की समस्या का समाधान करने, शैक्षिक उपलब्धि का वांछित स्तरबनाएरखने, परिवार की परिवर्तित स्थिति में भी सामंजस्य बना रहे, अवकाश का समुचित उपयोग हो, वैयक्तिक भिन्नताओं के अनुसार व्यक्तित्व का विकास हो, संवेगात्मक संतुलन बना रहे। राष्ट्रीय एकता की भावना विकसित करने, प्रजातंत्र एवं देश की रक्षा की भावना विकसित हो इन दृष्टियों से निर्देशन का और भी महत्व बढ़ जाता है।

1.9 सारांश

निर्देशन एक व्यवस्थित एवं निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। निर्देशन प्रक्रिया सेवाओं के उस समूह से सम्बद्ध है जो व्यक्तियों को विभिन्न क्षेत्रों में सन्तोषजनक व्यवस्थापन के लिए आवश्यक होती है। निर्देशन के अन्तर्गत वे सभी प्रक्रियाएँ आ जाती है जो व्यक्ति की आत्मसिद्धि में सहायक होती है। निर्देशन एक व्यक्ति द्वारा अन्य दूसरे व्यक्ति को दी जाने वाली ऐसी सहायता है जिसे एक व्यक्ति प्राप्त करना चाहता है तथा दूसरा देने को तत्पर होता है। निर्देशन से व्यक्ति को आत्मसंतुष्टि एवं आत्मसिद्धि जैसा सन्तोष भी प्राप्त होता है, जो उसके मनोबल वृद्धि में सहायक होता है। निर्देशन का परम उद्देश्य लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में गति प्राप्त करना होता है।

निर्देशन की क्रिया चाहे व्यवस्थित हो या अव्यवस्थित औपचारिक हो या आनुसंगिक इसके कुछ महत्वपूर्ण उद्देश्य हैं जैसे- निर्देशन का उद्देश्य व्यक्ति की आत्मभिज्ञता को बढ़ाना है। निर्देशन का चरम उद्देश्य व्यक्ति की मदद करना ही न होकर समाज कल्याण तथा बेहतर समाज की रचना भी है। निर्देशन का उद्देश्य व्यवसायों तथा व्यक्ति की उनसे संगति बनाना तथा व्यक्ति और उस व्यवसाय के मध्य पाई जाने वाली विसंगतियों को कम से कम बनाना है। निर्देशन का उद्देश्य व्यक्ति के लिए सही प्रकार की शिक्षा, शिक्षा प्रणाली, पाठ्यक्रम तथा शिक्षण अधिगम की विधि का चुनाव करने में मदद देना है। निर्देशन का कार्य व्यक्ति की समस्याओं के समझने एवं उनका प्रभावी हल निकालने में मदद देना भी है। निर्देशन का लक्ष्य प्रभावी व्यक्ति एवं प्रभावी पर्यावरण के सृजन तथा विकास की प्रक्रिया को सुगम, सुन्दर एवं वास्तविक रूप देने में सहयोग प्रदान करना है।

निर्देशन की प्रकृति दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक तथा समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में यदि हम देखें तो कह सकते हैं कि यह व्यक्ति के पूर्णतम विकास का पोषक तो है ही जीवन पर्यन्त चलने वाली गतिशील प्रक्रिया भी है। निर्देशन एक अंतःक्रियात्मक व्यापार है। यह एक सामाजिक कार्य है जिसके तहत एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति का सहायक बनकर समाज कल्याण के अवसरों में विस्तार करता है।

निर्देशन वास्तव में एक सेवा है, जो व्यक्ति को स्वयं के बारे में जानने में सहायता प्रदान करता है तथा इसके साथ-साथ व्यक्ति को अधिकतम विकास करने में सहायक होता है। आज निर्देशन का क्षेत्र काफी विस्तृत हो चुका है। प्रमुख रूप से शिक्षा, व्यवसाय, व्यक्तिगत समायोजन, व्यक्ति की विकास की प्रक्रिया, उपव्यावसायिक क्षेत्र, स्वास्थ्य एवं चिकित्सा जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्र हो गए हैं। इन क्षेत्रों में निर्देशन का आज विशेष रूप से महत्व बढ़ गया है।

1.10 शब्दावली

1. **निर्देशन-** निर्देशन शैक्षिक प्रक्रिया की उस व्यवस्थित एवं गठित अवस्था को कहा जाता है जो व्यक्ति को अपने जीवन में ठोस बिन्दु व दिशा प्रदान करने की क्षमता को बढ़ाने में सहायता प्रदान करता है। निर्देशन मानव जीवन के विकास एवं समायोजन की महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जो जीवन पर्यन्त निरन्तर चलती है। निर्देशन शिक्षा का अभिन्न अंग है जो व्यक्ति के सभी प्रकार की समस्याओं तथा समायोजन के समाधान में सहायक होती है।
2. **शैक्षिक निर्देशन-** शैक्षिक निर्देशन का उद्देश्य व्यक्ति के लिए उचित कार्यक्रम को बनाना तथा उसमें प्रगति करने में सहायता देना है।
3. **व्यवसायिक निर्देशन-** व्यावसायिक निर्देशन की प्रक्रिया के अन्तर्गत व्यावसायिक चार्ट, व्यावसायिक विवरण पत्रिका, वार्ता एवं अन्य माध्यमों की सहायता से सेवार्थी की व्यावसायिक रुचि के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त की जाती है तथा उसकी रुचि के अनुसार व्यवसाय चुनने हेतु निर्देशित किया जाता है।
4. **व्यक्तिगत निर्देशन-** इसके अन्तर्गत व्यक्ति की व्यक्तिगत समस्याओं को जानने के पश्चात् उसका समाधान करने के उपरान्त ही उसे एक सन्तुलित जीवन जीने हेतु निर्देशित किया जाता है।
5. **विकासात्मक निर्देशन**- विकास प्रक्रिया में सम्बन्धित समस्याओं या प्रश्न के समाधान के लिए दिए जाने वाले निर्देशन को विकासात्मक निर्देशन कहते हैं। इसमें निर्देशन व्यक्ति को अपने सर्वोत्तम ढ़ग से विकसित होने में सहयोग करता है।
6. **उपव्यावसायिक निर्देशन-** इसे अवकाश काल या मनोरंजन निर्देशन भी कहते हैं। व्यक्ति के जीवन में प्रतिदिन कुछ घण्टे फुर्सत के होते हैं जिसमें व्यक्ति मनोरंजन प्राप्त करने के अतिरिक्त अन्य प्रकार के कार्य करता है। व्यक्ति का अवकाश काल सुखदायी हो समाज के अन्य वर्गों को लाभ भी पहुँचाए। ऐसी स्थिति में उपव्यावसायिक निर्देशन महत्वपूर्ण है। उपव्यावसायिक या अवकाश-काल निर्देशन काक्षेत्र व्यापक होता है। इनमें व्यक्ति के ऐसे कार्य-कलापों का चयन करना होता है जो उसकी विशेषताओं और क्षमताओं के अनुरूप हो।
7. **स्वास्थ्य निर्देशन-** स्वास्थ्य के सन्दर्भ में दिया जाने वाला निर्देशन स्वास्थ्य निर्देशन कहलाता है। इसके अन्तर्गत व्यक्ति को यह निर्देशित किया जाता है कि वह ऐसी जीवन शैली अपनाये जिससे उसका स्वास्थ्य समुचित रूप से बना रहे।

1.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. क्षमता
2. परिपक्वता
3. विभाजित
4. रक्षा
5. विकल्प

1.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. आलम, डॉ0 शाह एवं गुफरान डॉ0 मुहम्मद (2011): निर्देशन एवं परामर्श का मूलभूत आधार, प्रकाशक - ज्ञानदा प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. राय, अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु (2006, तृतीय संस्करण): निर्देशन एवं परामर्श, प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
3. शर्मा, डॉ0 आर0ए0 एवं चतुर्वेदी डॉ0 शिखा (2010): निर्देशन एवं परामर्श के मूलतत्व, प्रकाशक - विनय रखेजा ब्ध्व आर0 लाल बुक डिपो, निकट राजकीय इण्टर कालेज मेरठ।
4. शर्मा एस0एन0 एवं सोलंकी एम0 के0 (2011): निर्देशन एवं परामर्श, प्रकाशन-माधव प्रकाशक, ए-23 इन्द्रपुरी कालोनी, न्यू आगरा, आगरा।

1.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1. निर्देशन का क्या अर्थ है ? इसकी प्रकृति व स्वरूप को स्पष्ट कीजिए।
2. निर्देशन के प्रमुख क्षेत्रों का वर्णन कीजिए।
3. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए-
   (क) शैक्षिक निर्देशन
   (ख) व्यावसायिक निर्देशन
   (ग) व्यक्तिगत निर्देशन
   (घ) स्वास्थ्य निर्देशन

इकाई 2- निर्देशन के दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक एवं समाजशास्त्रीय आधार

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 निर्देशन के दार्शनिक आधार
2.4 निर्देशन के मनोवैज्ञानिक आधार
2.5 निर्देशन के समाजशास्त्रीय आधार
2.6 सारांश
2.7 शब्दावली
2.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
2.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

निर्देशन का महत्व प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में होता है आधुनिक निर्देशन का स्वरूप वैज्ञानिक है। प्लेटो का मत था कि किसी भी व्यक्ति को अपने व्यवसाय का चयन अपनी रूचि एवं योग्यतानुसार करना चाहिए। "The Republic (द्वितीय) में उन्होंने समाज को तीन श्रेणियों जैसे-दार्शनिक, योद्धा एवं श्रमिक में विभाजित किया है, जो निर्देशन के ही सिद्धान्त पर आधारित है। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि यूनान के लोग भी उनकी रूचि तथा योग्यता के अनुसार निर्देशन देते थे। पुराने जमाने के विभिन्न दार्शनिकों ने भी निर्देशन एवं परामर्श के कार्य को अच्छी तरह से समझा और उसको एक रूप दिया। ये दार्शनिक लोगों को अपने विचार और व्यवहार से प्रभावित करते थे। लोग उनको देखकर एवं सुनकर अपने व्यवहार एवं विचारधारा में परिवर्तन लाते थे।

औद्योगिक क्रान्ति के जहां एक ओर उनके उपयोगी परिणाम सामने आए वहीं दूसरी ओर इसके अनेक गम्भीर प्रभाव भी हुए। मानव जीवन में विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं का अनुभव हुआ तथा समाज की मान्यताओं आदर्शों एवं मूल्यों में तीव्र गति से परिवर्तन होते चले गए। संयुक्त परिवार का विघटन, बेरोजगारी, जनसंख्या कीवृद्धि, निर्धनता जैसी गम्भीर समस्याएं इस औद्योगीकरण का ही परिणाम है। इसमें सन्देह नहीं है कि औद्योगिक प्रगति के कारण अनेक सुविधाएं तो प्राप्त हुई

लेकिन साथ ही मानवीय सम्बन्धों को मधुर बनाने वाले स्रोतों का विनाश भी हुआ है। इस प्रकार की स्थिति से मुक्त रहने के लिए शिक्षा एवं निर्देशन की अधिक आवश्यकता होती है।

अतः उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि निर्देशन के अपने दार्शनिक, मानोवैज्ञानिक एवं सामाजिक आधार हैं।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

1. निर्देशन के दार्शनिक आधारों का वर्णन कर पाएंगे।
2. निर्देशन के मनोवैज्ञानिक आधार को स्पष्ट कर पाएंगे।
3. निर्देशन के समाजशास्त्रीय आधारों की व्याख्या कर सकेंगे।

2.3 निर्देशन के दार्शनिक आधार

दर्शनशास्त्र सारे शास्त्रों की जननी है और शिक्षा या निर्देशन इस बात का अपवाद नही हो सकता। दार्शनिकरूप से शिक्षा का उद्देश्य आत्म अनुभूति या आत्म-निर्देशन है। हमारे संविधान में मूल अधिकारों के अंन्तर्गत हर व्यक्ति के प्रति सम्मान एवं मर्यादा की बात कही गई थी। इसलिए प्रत्येक राज्य केलिएयह अनवार्य है कि वह हर व्यक्ति को चुनाव की आजादी एवं समान अवसर उपलब्ध कराए। स्वतंत्रता का तात्पर्य विकल्पों की जानकारी होने से है, जिसे विद्यार्थी पूरी तरह से लोकतांत्रिक माहौल में काम करके ग्रहण करते हैं। यह कार्य निर्देशन के माध्यम से ही सम्भव है, क्योंकि सारे निर्देशन कार्यक्रम विकल्प चुनने की आजादी की परिकल्पना पर आधारित होते हैं। निर्देशन का उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति के खुद समझने-परखने की योग्यता का विकास करना है। कुछ ऐसे ही प्रमुख आधार इस प्रकार से वर्णित हैं -

1. **निर्देशन का लोकतांत्रिक मूल्यों का आधार -** निर्देशन या मार्गदर्शन की जड़ें समता, समानता एवं व्यक्तिगत भेद रूपी लोकतांत्रिक सिद्धान्तों में होती है, जो लोकतांत्रिक जीवन शैली के मूलभूत सिद्धान्त होते हैं। लोकतंत्र राजनीति की एक पद्वति होने के बजाए वास्तव में एक जीवन शैली है। यह व्यक्ति से व्यक्तित्व के भेद को स्वीकार करता है, जो वास्तव में मनोवैज्ञानिक आधार पर टिकी होती है न कि जाति, धर्म, वर्ग या सम्बन्ध पर। इस प्रकार लोकतंत्र का दर्शन ही निर्देशन एवं मार्ग दर्शन के दर्शन का आधार है। एक लोकतांत्रिक समाज में विविध प्रकार के व्यवसाय होते हैं और उसमें समाज के समुचित विकास एवं आर्थिक संसाधनों के अधिकतम उपयोग केलिएप्रत्येक

मानव संसाधन को अच्छी तरह से प्रशिक्षित करने की जरूरत होती है, तथापि व्यक्ति को इस प्रकार से निर्देशित करते समय इस बात का ख्याल रखा जाना चाहिए कि वह ऐसे व्यवसाय का चयन करे जो उसकी व्यक्तिगत जरूरतों, रूचियों हेतु एवं अभिक्षताओं के अनुरूप हो। इसलिएइन उद्देश्यों कि प्राप्ति केलिएनिर्देशन के तरीकों का प्रयोग किया जाता है। अतः लोकतंत्र एवं निर्देशन दोनों का एक ही आधार है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि निर्देशन व्यक्ति को सफलता एवं विकास केलिएविकल्पों की जानकारी कराने का कार्य करता है। इसलिए यह स्पष्ट है कि व्यक्ति का महत्व एवं सम्मान ही लोकतंत्र का आधार है और यही निर्देशन का भी आधार है।

2. **व्यक्तिगत जिम्मेदारी -** निर्देशन मूलतः इस व्यावहारिक दर्शन पर आधारित है कि प्रत्येक व्यक्ति में सुधरने कि प्रवृत्ति है और उसके व्यवहार में सकारात्मक सुधार व्यवस्थित रूप से किया जा सकता है। हर एक व्यक्ति अपने व्यवहार में परिवर्तन लाने कि प्राकृतिक योग्यता रखता है। और निर्देशन एवं शिक्षा इस परिर्वतन को मूर्तरूप प्रदान करने में मदद करती है। इस उद्देश्य को पूरा करने केलिएनिर्देशन व्यक्ति को स्वतः के बारे में सही ज्ञान प्राप्त कर अपनी योग्यता का विकास करना है, जिससे अपने जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में वह खुद निर्णय ले पाता है।
3. **व्यक्ति अध्ययन में वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग-** निर्देशन का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त यह कि व्यक्ति की समस्याओं के कारणों का सही पता लगाकर एवं उनके व्यवहार का वैज्ञानिक अध्ययन कर उसमें सुधार लाना पूर्णतः सम्भव है। इस प्रक्रिया में व्यक्ति एवं उसके पर्यावरण के बारे में सूचना वैज्ञानिक रूप से एकत्रित की जाती है। इसी आधार पर उनके कार्य के बारे में बुद्धिमान एवं योग्य बनाकर स्वतः सही निर्णय लेने में मदद प्रदान की जाती है। व्यक्ति का अध्ययन ही मूल आधार है प्रत्येक व्यक्ति अपने आप में अद्वितीय है। अतः उसे अधिकतम विकास के मार्ग पर अग्रसर करने केलिएउसका वैज्ञानिक तरीके से अध्ययन अति आवश्यक है। इसी उद्देश्य हेतु प्रशिक्षणकर्ता उसके आन्तरिक योग्यताओं एवं कमजोरियों का परीक्षण व गैर परीक्षण तकनीकों के माध्यम से आंकलन करने का प्रयास करते हैं।
4. **निर्देशन शिक्षा का मान्य स्रोत -** व्यापक अर्थों में सभी निर्देशन को शिक्षा कहा जा सकता है। किन्तु सभी शिक्षा को किसी भी अर्थ में निर्देशन नहीं कहा जा सकता है। शिक्षा के तमाम क्षेत्र यथा प्रशासन, निर्देशन, प्रबन्धन, पाठ्यक्रम नियोजन आदि निर्देशन के दायरे से बाहर आते हैं। शिक्षा वास्तव में वह समग्र प्रक्रिया है जो व्यक्ति को अपना जीवन पूर्ण लोकतांत्रिक रूप से जीने व आनन्द लेने केलिएतैयार करती है। इसके अलावा शिक्षा के कुछ ऐसे क्षेत्रों जैसे प्रशासनिक

व्यवस्था में अपनी समस्याओं का सफलतापूर्वक सामना करने केलिएव्यक्ति को तैयार करने में भी निर्देशन अपनी अहम् भूमिका निभाता है।

5. **सही कार्य केलिएसही व्यक्ति-**इस कथन में अर्न्तनिहित विचार यह है कि सभी प्रकार के कार्य को समान क्षमता एवं प्रभावशीलता के साथ नहीं कर सकते। इसके बावजूद इसका कोई कारण पता नहीं लग पाया है कि कुछ ऐसे भी व्यक्ति होते हैं, उनको छोड़कर जो या तो पागल हैं या जिनको सिखाया नहीं जा सकता, जो कोई कार्य नहीं कर सकते। यदि सही व्यकित से सही कार्य करवाया जाए तो इससे न केवल उसके कार्यक्षमता में ही वृद्धि होती है बल्कि इससे उसके पूरे परिवार, पास पड़ोस एवं समाज सभी को आनन्द मिलता है। व्यावसायिक एवं दिशा निर्देशन सेवाओं से युक्त शिक्षण पद्वति के माध्यम से ही इस लक्ष्य को हासिल किया जा सकता है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि लोकतांत्रिक व्यवस्था एवं समाजिक मूल्य व्यक्ति की स्वाभाविक सुधारवादी प्रवृत्ति, उसके अध्ययन की वैज्ञानिक विधियों, व्यक्ति का व्यक्तित्व, यह विचार कि निर्देशन को व्यक्तियों पर थोपा नहीं जा सकता, निर्देशन एक व्यावसायिक कार्य है एवं सही कार्य केलिएसही व्यक्ति का चयन आदि कुछ ऐसे दार्शनिक विचार हैं जिनसे निर्देशन एवं दिशा निर्देशन सेवाओं की आधारशिला का निर्माण होता है।

2.4 निर्देशन के मनोवैज्ञानिक आधार

मनोवैज्ञानिक रूप से निर्देशन एक अन्तः क्रियात्मक पद्वति हैं जिसमें एक अनुभवी, प्रशिक्षित एवं परिपक्व व्यक्ति अपने सामाजिक, व्यावसायिक एवं शैक्षणिक क्षमताओं का समायोजन सरल एवं प्रभावशाली तरीके से करने केलिएअपरिपक्व व्यक्तियों को सहायता प्रदान करती है। निर्देशन मूलतः व्यक्तियों के अर्न्तभेद की परिकल्पना पर आधारित है। तमाम शोधों से यह सिद्ध हो चुका है कि दो व्यक्ति पूर्णतः एक समान नहीं हो सकते। वे एक दूसरे से शरीर, मस्तिष्क, रूचि, स्वभाव आदि में काफी भिन्न होते हैं। अतः शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति केलिएव्यक्तिगत क्षमताओं का विश्लेषण अध्ययन के दौरान आवश्यक है। व्यक्ति के स्वभाव के अध्ययन व मनोवैज्ञानिक व्यक्तियों के अनुप्रयोग में निर्देशन से मदद प्राप्त होती है। आज का युवा पिछली पीढ़ी कि युवा की तुलना में घर व समाज दोनों जगहों पर भावनात्मक तनाव से ज्यादा ग्रस्त रहता है। स्कूलों में शरारती एवं उदण्ड बच्चों की संख्या दिनों दिन बढ़ रही है। इस प्रकार निर्देशन केवल अनुशासनहीन एवं असमान्य बच्चों के समस्याओं का समाधान करने में ही नहीं बल्कि सामान्य बच्चों को भी सही मार्गदर्शन देकर गुणवत्तापूर्ण, सफल एवं सुखद जीवन व्यतीत करने में मदद करता है, ताकि वे समाज के अच्छे नागरिक बन सकें और स्वयं के साथ

एवं समाज के साथ अच्छी तरह तालमेल बना सकें। संक्षेप में निम्नलिखित बिन्दु प्रशिक्षण के मनोवैज्ञानिक आधार पर प्रकाश डालते हैं-

1. **वैयक्तिक भिन्नताएं-** दो व्यक्ति एक समान नहीं हो सकते हैं। वे एक दूसरे से शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक एवं भावनात्मक गुणों में अलग-अलग होते हैं। उनके निजी प्रतिभाओं एवं गुणों के अधिकतम विकास केलिएनिर्देशन की जरूरत पड़ती है। विशेषतः अपवाद स्वरूप बच्चों यथा प्रतिभासंपन्न, पिछड़े हुए, असामान्य एवं विकलांग बच्चों को इसकी ज्यादा जरूरत पड़ती है।
2. **मनोवैज्ञानिक समस्याएं -** बहुत सारे विद्यार्थी भावनात्मक समस्याओं से ग्रस्त होते हैं। यह समस्याएं अक्सर निराशा, विवाद व विभिन्न प्रकार के दबाओं व तनाव से पैदा होती हैं। विकासशील समाज के दबाव एवं तनावों से बचाने केलिएयुवाओं को निर्देशन प्रदान करना आवश्यक है।
3. **संतोषजनक समायोजन -** निर्देशन से व्यक्ति को संतोषजनक मनोवैज्ञानिक समायोजन स्थापित करने में मदद मिलती है। समुचित समायोजन के अभाव से शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य को काफी नुकसान पहुँचता है।
4. **खाली समय का सदुपयोग -** ''खाली दिमाग शैतान का घर'' एक प्रचलित कहावत है। लोगों को खाली समय का समुचित प्रयोग करना सिखाने केलिएप्रभावशाली निर्देशन एक सशक्त माध्यम है।
5. **व्यक्तित्व का समुचित एवं समग्र विकास-**व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य है। किसी व्यक्ति का व्यक्तित्व उसके शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक एवं समाजिक गुणों का सम्पूर्ण योग है, जो उसके व्यवहार एवं भाव, दृष्टिकोण, मूल्य, आस्था तथा स्वभाव में परिलक्षित होती है। व्यक्ति के सम्पूर्ण एवं सर्वांगीण व्यक्तित्व के विकास केलिएएक सुव्यवस्थित निर्देशन कार्यक्रम की अहम् जरूरत पड़ती है।
6. **विकासगति में भेद-** अलग-अलग व्यक्तियों में शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक एवं समाजिक गुणों का विकास अलग-अलग तरीके से होता है। ऐसे में उसके विकास के तरीके से जीवन की विभिन्न समस्याओं का हल ढूंढने में मार्गदर्शन प्राप्त होता है। यह भी एक सच है कि अलग-अलग विद्यार्थियों में बौद्धिक विकास अलग-अलग होता है जो उनके शैक्षिक व सहशैक्षणिक उपलब्धियों में दिखायी पड़ता है। ऐसे में यह जरूरी हो जाता है कि नया अध्यापक अपने पाठ्य सामग्री को विद्यार्थियों की अलग-अलग भौतिक जरूरतों के अनुसार संयोजित करे। इस उद्देश्य

केलिएशैक्षणिक एवं सहशैक्षणिक कार्यक्रमों के सुप्रबन्धन केलिएनिर्देशन काफी कारगर साबित होता है।

7. **आत्म अवधारणा का स्पष्टीकरण-** हर व्यक्ति खुद के बारे में एक अवधारणा का निर्माण कर लेता है, जो जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उसके व्यवहार को संचालित करता रहता है। वास्तव में निर्देशन की सभी समस्याएं अन्ततः आत्म अवधारणा के स्पष्टीकरण की समस्याएं हैं। कुछ लोगों की आत्म अवधारणायें उनके वास्तविक व्यक्तित्व की तुलना में काफी ऊँची होती हैं। ऐसे लोग समाज में सामंजस्य कि समस्या से ग्रस्त रहते हैं। इसी तरह कुछ लोग ऐसे होते हैं जो अपने बारे में वास्तविकता से कम की अवधारणा पाल लेते हैं, वे भी सामंजस्य निर्माण की प्रक्रिया में काफी दिक्कतें झेलतेहैं। ऐसे दोनों प्रकार के विद्यार्थी हीनता की भावना के शिकार हो जाते हैं, जो उनके व्यवहार को नष्ट कर देता है। किसी की आत्मअवधारणा के विपरीत की समस्याओं पर कार्य करना बहुत कठिन होता है चाहे वह उसके ज्यादा हित में ही क्यों न हो। अतः व्यक्ति को उसकी रोजमर्रा की व्यावहारिक समस्याओं का सफलतापूर्वक सामना करना सिखाने के लिए उसके आत्म अवधारणाओं का विधिवत अध्ययन आवश्यक है। इसी प्रकाश में उसे निर्देशन सेवाएं प्रदान करना आसान होगा तथा उसके आत्म अवधारणा को निम्न या उच्च जैसी भी स्थिति हो, कर उसे अधिक बुद्धिमान बनाकर अपनी योग्यताओं, दृष्टिकोणों एवं मूल्यों के अनुसार सही निर्णय लेने के लायक बनाने में मदद मिलेगी। इस प्रकार आत्म अवधारणाओं का स्पष्टीकरण निर्देशन के मूलभूत कार्यों में से एक है, जिसे यह मनोविज्ञान के द्वारा प्रदत्त ज्ञान के माध्यम से सम्पन्न करता है।
8. **परीक्षण व गैर परीक्षण तकनीक-** किसी भी निर्देशन कार्यक्रम केलिएव्यक्ति का समग्र अध्ययन एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। कभी-कभी ऐसा अध्ययन कुछ गैर परीक्षण तरीको से किया जाता है। जैसे-निरीक्षण, संचयी अभिलेख, साक्षात्कार आदि जिनमें निर्देशक को अपनी मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर निर्भर रहना पड़ता है। इस तरह निर्देशन के माध्यम से व्यक्ति के स्वभाव के अध्ययन के दौरान तमाम मनोवैज्ञानिक युक्तियों के प्रयोग में मदद मिलती है।

2.5 निर्देशन के समाजशास्त्रीय आधार

सामाजिक आधार निर्देशन एवं परामर्श कार्यक्रम का बहुत मजबूत पक्ष है। किसी भी समाज की प्रगति इस तथ्य पर आधारित है कि उसमें प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यता,सम्भावना एवं क्षमता के अनुरूप कार्य करने में निपुण है। फिर भी जनसंख्या विस्फोट एवं प्रौद्योगिकी व विज्ञान जैसे ज्ञान के सभी क्षेत्रों

में आयी क्रांति ने बहुत से लोगों केलिएऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी है कि वे समाज में परिणामस्वरूप उत्पन्न परिवर्तनों से तालमेल बनाने में कामयाब हो पाए हैं और तमाम समस्याओं में जकड़े हुए हैं। ये समस्याएं उनके निजी सामंजस्य में ही नहीं अपितु उनके परिवारिक जीवन में भी दिखाई पड़ती हैं। ऐसे लोगों की मदद करने में निर्देशन एवं परामर्श सेवा एक अहम् भूमिका निभा सकता है।

निर्देशन कार्यक्रमों का सामाजिक पहलू इतना मजबूत है कि इसके सामाजिक आधार के बिना इसकी कल्पना नहीं की जा सकती, क्योंकि व्यक्ति का प्रशिक्षण अन्ततः उसके सामाजिक सामंजस्य केलिएही किया जाता है। इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि देशकाल, परिस्थिति के बिना उसका विस्तार से कोई मार्गदर्शन या निर्देशन नहीं किया जा सकता। समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष में प्रशिक्षण को एक सामाजिक प्रक्रिया माना जाता है, जिसमें व्यक्ति समाज के कल्याण हेतु अवसरों के विस्तार केलिएदूसरे का सहयोग करता है। बड़े पैमाने पर औद्योगिकीकरण, उपभोक्तावाद, ज्ञान विस्फोट, जनसंख्या विस्फोट, तकनीकी प्रगति, उदारीकरण, भूमण्डलीकरण आदि ने सामाजिक ढ़ाँचे को काफी बदल डाला है। लोगों की आकांक्षायें काफी बढ़ गई हैं। बढ़ती अपेक्षाओं के विस्फोट ने सामंजस्य सबन्धी अभूतपूर्व समस्याओं को जन्म दिया है, जो कि बहुत नाजुक किस्म की होती है। असामंजस्य को टालने केलिएइन समस्याओं का संतोषजनक समाधान अवश्य किया जाना चाहिए, जिससे व्यक्ति को पर्याप्त एवं समुचित रूप से सक्षम बनाया जा सके। इन कारकों की वजह से कुशल निर्देशन जरूरी हो जाता है ताकि इसके माध्यम से व्यक्ति को समाज में सामंजस्य स्थापित करने में सक्षम बनाया जा सके। प्रशिक्षण के कुछ प्रमुख सामाजिक आधारों की सूची निम्नलिखित है-

i. **समाज का मिश्रित स्वरूप-** हमारे समूचे आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक ढांचे में आमूलचूल परिवर्तन हो गया है। उपभोग, उत्पादन, वितरण एवं विनियमन की प्रक्रिया काफी मिश्रित हो गई है। हम तमाम समस्याओं से घिरे हैं और निर्देशन की मदद के बिना हमारेलिएसंतोषजनक परिणाम पाना मुश्किल है।

ii. **मानव उर्जा का संरक्षण-** मानव जीवन बहुत कीमती है। समाज के विकास व कल्याण केलिए`मानव ऊर्जा का बचाव किया जाना चाहिए एवं इसे दुरूपयोग से बचाना चाहिए। यदि लोगों को अपने आप पर छोड़ दिया जाए तो मानव ऊर्जा नष्ट हो जाएगी। निर्देशन ऊर्जा के संरक्षण के सिद्वांत पर आधारित है। जीवन को सार्थक उद्देश्य के साथ जीना चाहिए और यह कुशल निर्देशन से ही सम्भव है। निर्देशन इस कीमती ऊर्जा को बचाने में हमारी मदद कर सकता है।

iii. **जनसंख्या विस्फोट-** जनसंख्या विस्फोट अब केवल किसी एक देश की ही नहीं बल्कि समूचे विश्व की समस्या बन गई है। 1951 में हमारी जन संख्या 36.2 करोड़ थी जो 2011 में 120 करोड़ के ऊपर हो गई है। इससे स्कूल, राष्ट्रीय गतिविधि, अन्तर्राष्ट्रीय गतिविधि एवं विविध भाषा, रीति-रिवाज एवं परम्पराओं के मिश्रण की समस्याएं पैदा हो गई हैं। राष्ट्रीय गतिविधि से भिन्न-भिन्न भाषाओं में शिक्षा प्रदान करने की समस्या पैदा हो गई है, क्योंकि हमारा देश बहुभाषी है। इससे खासकर ऐसे विद्यार्थियों के लिए सामंजस्य की समस्या पैदा हो गई है जिसके माता-पिता दूसरे राज्यों में बस जाते हैं।

iv. **अपराध एवं अपचारिता की बढ़ती प्रवृत्ति-** विश्व के किसी भी देश में अपराध एवं अपचारिता का पूर्णतः अभाव नहीं है। फिर भी कुछ देशों में यह एक निश्चित दायरे में होता है और सामाजिक तानाबाना इससे दुष्प्रभावित नहीं होता है। जबकि तमाम अन्य मुल्कों मे यह सारी सीमाओं को लाँघ जाता है, जिससे समाज में भयानक समस्याएं पैदा हो जाती हैं। ऐसी स्थिति में निर्देशन कार्यक्रम की सख्त जरूरत पड़ती है। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि स्कूलों में निर्देशन कार्यक्रम का एक मजबूत सामाजिक आधार हैं।

v. **नशे के आदत की समस्या -** जनसंख्या विस्फोट, अनुत्पादक उद्देश्यों केलिएराजनेताओं द्वारा राजकोष का किया जाने वाला दुरूपयोग, भ्रष्टाचार, भाई-भजीजावाद, शैक्षणिक संस्थाओं के प्रति लापरवाही आदि जैसे तमाम कारण हैं जिसकी वजह से आज का युवा काफी निराशा और हताशा महसूस करता है। इस प्रकार की निराशा से तंग आकर वह तमाम कुप्रवृत्तियों एवं कुआदतों के तरफ बढ़ जाता है। अधिकांश तो नशे की दुनिया में चले जाते हैं, जो आज के समाज में बिल्कुल आम बात है। अब वह समय आ गया है जब हमारे देश को ऐसे युवाओं पर विशेष ध्यान देना पड़ेगा और समाज को नशे के चंगुल में जाने से बचाना पड़ेगा। इस समस्याओं से लड़ने की तमाम विधियों में से एक है स्कूलों में मजबूत निर्देशन सेवा की स्थापना।

vi. **राष्ट्रीय एकीकरण की समस्या-** हमारा समाज विविध धर्मों, वर्णों एवं भाषाओं वाला है जो हमारे युवाओं को अच्छी तरह एकीकृत बने रहने हेतु शिक्षित करने केलिएमजबूत पृष्ठभूमि की तरफ इशारा करता है। हमारे सामाजिक ढ़ाँचे में एक सशक्त निर्देशन एवं परामर्शन कार्यक्रम स्थापित करने की बहुत जरूरत है, ताकि युवावर्ग दिग्भ्रमित न हो सके। इससे राष्ट्रीय अखण्डता को एक मजबूत आधार प्रदान होगा जो हमारे सामाजिक ढ़ाँचे में गहराई से जमा हुआ है।

इस प्रकार निर्देशन के भिन्न-भिन्न आधारों के उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि निर्देशन का मूल उद्देश्य व्यक्ति को भविष्य केलिएतैयार करना है। यह उन्हें भविष्य में पूरा करने वाले कार्यों एवं जिम्मेदारियों केलिएवांछित क्षमताओं एवं योग्यताओं को प्राप्त करने में मदद करता है। इसका उद्देश्य उनकेलिएकोई निर्णय करना नहीं है बल्कि उनके अन्दर ऐसी योग्यता एवं बुद्धिमता का विकास करना है जिससे वे अपने निर्णय खुद ले सकें एवं अपने चुने मार्ग पर सफलता पूर्वक चल सकें। इस प्रकार निष्कर्ष रूप से हम कह सकते हैं कि सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं शैक्षणिक मिश्रित संरचना में निर्देशन एवं परामर्शन को अपरिहार्य बना दिया है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. सारे निर्देशन कार्यक्रम विकल्प चुनने की आजादी की_____पर आधारित होते हैं।
2. निर्देशन व्यक्ति को सफलता एवं विकास के लिए_____की जानकारी कराने का कार्य करता है।
3. व्यक्ति को तैयार करने में निर्देशन अपनी अहम भूमिका निभाता है।सत्य/असत्य
4. निर्देशन से व्यक्ति को संतोषजनक मनोवैज्ञानिक समायोजन करने में मदद मिलती है। (सत्य/असत्य)
5. अलग-अलग व्यक्तियों में शारीरिक, मानसिक आदि गुणों का विकास अलग-अलग ढंग से होता है। (सत्य/असत्य)

2.6 सारांश

इस इकाई में दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक आधारों के बारे में वर्णन किया गया है। आपने यह सीखा है कि निर्देशन एवं परामर्श दोनों लोकतांत्रिक जीवन पद्धति से पूरी तरह जुड़े हैं, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को इस तरह से विकसित किया जाना है कि वह अपनी आंतरिक प्रतिभाओं को क्षमताओं में परिवर्तन करने की स्थिति में हो और इस प्रकार सामाजिक विकास में एक अहम् सहयोगी बन सके। व्यक्ति को समाज में अपनी भूमिका निभाने हेतु उसे बुद्धिमान एवं योग्य बनाने में निर्देशन व परामर्श को अपनी जड़े दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान एवं लोगों के सामाजिक ढाँचे में जमानी पड़ेगी। उपर्युक्त वक्तव्यों से यह स्पष्ट हो गया है कि निर्देशन एवं परामर्शन हमारे जीवन की तमाम व्यावहारिक समस्याओं के निदान में अहम् भूमिका निभाते हैं।

2.7 शब्दावली

1. **वैयक्तिक भिन्नताएँ:**वैयक्तिक भिन्नताओं का अध्ययन सबसे पहले गाल्टन ने प्रारम्भ किया। कैटिल ने भी इस दिशा में विशेष कार्य किया। उसने मानसिक तथा भौतिक स्तरों के तुलनात्मक अध्ययन से वैयक्तिक भिन्नताओं के महत्व को बताया। व्यक्तियों को उनके बौद्धिक क्षमता, अभिरूचियों, अभिक्षमताओं, अभिवृतियों एवं अन्य योग्यताओं के आधार पर अलग करते हैं। दो व्यक्ति समान दिखते हुए भी असमान दिखते हैं ऐसा वैयक्तिक विभन्नता के कारण ही होता है।
2. **परामर्श:** परामर्श एक सतत् एवं अतः क्रियात्मक प्रक्रिया है जो कि परामर्शी, जिसे सहायता की आवश्यकता है और परामर्शदाता जो कि सहायता देने के लिए शिक्षित एवं प्रशिक्षित है, को जोड़ता है।
3. **अपचरिता:** इससे तात्पर्य है कर्तव्यच्युतता। कर्तव्यों का पालन न करना।

2.8 स्वमूल्यांकन प्रश्नों के उत्तर

1. परिकल्पना
2. विकल्पों
3. सत्य
4. सत्य
5. सत्य

2.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. आलम, डॉ0 शाह एवं गुफरान डॉ0 मुहम्मद (2011): निर्देशन एवं परामर्श का मूलभूत आधार, प्रकाशक - ज्ञानदा प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. राय, अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु (2006, तृतीय संस्करण): निर्देशन एवं परामर्श, प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
3. शर्मा, डॉ0 आर0ए0 एवं चतुर्वेदी डॉ0 शिखा (2010): निर्देशन एवं परामर्श के मूलतत्व, प्रकाशक - विनय रखेजा C/o आर0 लाल बुक डिपो, निकट राजकीय इण्टर कालेज मेरठ।
4. शर्मा एस0एन0 एवं सोलंकी एम0 के0 (2011): निर्देशन एवं परामर्श, प्रकाशन-माधव प्रकाशक, ए-23 इन्द्रपुरी कालोनी, न्यू आगरा, आगरा।

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. निर्देशन के दार्शनिक आधारों का वर्णन कीजिए।
2. निर्देशन के मनोवैज्ञानिक आधारों का वर्णन कीजिए।
3. निर्देशन के समाजशास्त्रीय आधारों की विस्तृत व्याख्या कीजिए।

इकाई 3 -भारत में निर्देशन सेवाओं का इतिहास

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 निर्देशन में प्राचीन भारत की भूमिका
3.4 निर्देशन की ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि
3.4.1 प्राचीन यूनान
3.4.2 फ्रांस
3.4.3 संयुक्त राज्य अमेरिका
3.4.4 जर्मनी
3.4.5 भारत
3.5 सारांश
3.6 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

मानव जीवन में निर्देशन का महत्व प्राचीन काल से ही रहा है । हमारी सभ्यता कितनी भी पुरानी रही हो उसमें निर्देशन किसी न किसी रूप में निश्चित रूप से विद्यमान रहा है। व्यक्ति के समूह, समाज या समुदाय में निर्देशन का सदैव से महत्व रहा है। प्राचीन शिक्षा व्यवस्था में गुरूजन ही निर्देशन का कार्य किया करते थे। शिष्य आदर्श संहिता को निभाना अपना धर्म मानते थे। शिक्षा समाप्ति के पश्चात् गुरु अपने शिष्य/शिष्या को उसके आगामी जीवन को आदर्श व्यक्तित्व, उच्च स्तरीय जीवन शैली जीने के लिए निर्देशित करता था तथा उसे आगामी जीवन की सफलता के लिए विस्तार रूप में निर्देशित करता था। गुरु शिष्य को यह निर्देशित करता था कि - सत्य का आचरण करो, धर्माचरण अपनाओ अपने व्यवसाय को धर्म संगत बनाए रखो। जिस प्रकार धनार्जन जीवन की आवश्यकता है उसी प्रकार परमात्मा प्राप्ति मानव जीवन का लक्ष्य है, जिसे प्राप्त करने के लिए सदैव प्रयास करना

चाहिए आदि। इस प्रकार प्राचीन काल से ही व्यक्ति के जीवन में निर्देशन व परामर्श का विशेष महत्व रहा है। राजाओं के समय में भी समस्त कार्य प्रक्रिया

निर्देशन के आधार पर ही चलती थी। प्राचीन भारत में''राजतन्त्र'' सदैव 'ऋषितन्त्र' के निर्देशन का आदर एवं अनुपालन करता था।

विश्व स्तर पर भी देखा जाए तो यूनान, इंग्लैण्ड, जर्मनी, संयुक्त राज्य अमेरिका आदि में भी निर्देशन की प्रक्रिया किसी ने किसी रूप में चलती रही है। भारत में निर्देशन का वर्तमान स्वरूप कुछ दशकों पूर्व विकसित हुआ है। 20वीं शताब्दी के चौथे दशक से ही निर्देशन ने आन्दोलन का रूप ग्रहण कर लिया है। धीरे-धीरे सरकारी और गैर सरकारी स्तर पर निर्देशन हेतु संस्थाएँ भी स्थापित होने लगीहैं।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

1. निर्देशन में प्राचीन भारत की भूमिका के विषय में जान सकेंगे।
2. निर्देशन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का वर्णन कर सकेंगे।
3. प्राचीन भारत, वर्तमान भारत एवं विश्व के अन्य देशों में निर्देशन की स्थिति की व्याख्या कर सकेंगे।

3.3 निर्देशन में प्राचीन भारत की भूमिका

प्राचीन भारत के मनीषी वर्ग ने निर्देशन के महत्व एवं सार्थकता को भली-भाँति समझा तथा उसे अपनाने के लिए लोगों को प्रेरित भी किया ये मनीषी वर्ग एवं ऋषि-महर्षि राजतंत्र को सदैव उनके हितार्थ निर्देशन दिया करते थे। व्यक्तियों के गुण, कार्य व स्वभाव के अनुसार निर्देशन का स्वरूप निर्धारित किया जाता था। वर्ण व्यवस्था में भी निर्देशन को विशेष महत्व दिया गया है। समाज के सभी वर्ण के लोगों में निर्देशन सेवाएं उपलब्ध थी और वे अपने कार्य नियोजन प्राप्त निर्देशन के आधार पर ही किया करते थे। इसका परिणाम यह था कि प्राचीन भारत में भ्रष्टाचार, व्यभीचार, असामाजिकता नाम मात्र के लिए ही थी। आज समाज की जो दयनीय स्थिति बनी हुई है इसके पीछे मूल कारण समुचित निर्देशन न मिलना और धर्म संगत मार्ग को छोड़कर स्वार्थ की सड़क पर दौड़ते जाना है।

3.4 निर्देशन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

प्राचीन काल से लेकर आजतक निर्देशन का एक लम्बा इतिहास रहा है। प्राचीन भारत के किसी भी युग की बात करें तो यही स्पष्ट होगा कि आदिकाल से ही व्यक्ति के जीवन में निर्देशन व परामर्श का विशेष महत्व रहा है। किसी राज्य की सेना हो तो सेनापति के निर्देशन में कार्य करती थी। सेनापतियों को उस राज्य का वजीर (मन्त्री) निर्देशित करता था। उसके आधार पर ही वह लक्ष्य की दिशा में सक्रिय होते थे। राजा या महाराजा अपने कुलगुरू के निर्देशन के आधार पर ही राजकीय या पारिवारिक कार्यो को किया करते थे। सभी छोटे-बड़े राज्यों में राजा का एक निर्देशक अवश्य होता था जिसे राजगुरू या कुलगुरू के नाम से जाना जाता था। प्राचीन भारत के राजतंत्र सदैव ऋषितंत्र के अनुदेशों का आदर एवं अनुपालन करता था।

भारत में निर्देशन सेवाओं की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को जानने से पूर्व अन्य देशों में इसकी क्या स्थिति रही है उसे भी जानना समीचीन होगा।

3.4.1 प्राचीन यूनान

प्राचीन यूनान - निर्देशन में दार्शनिकों के योगदान को नकारा नहीं जा सकता है। क्योंकि किसी भी निर्देशन की आधारशिला किसी दर्शन से ही होती है और यह कहना भी गलत नहीं होगा कि दार्शनिक व्यक्ति में निर्देशन का गुणधर्म पाया जाता है। सुकरात, अरस्तु और प्लेटो जैसे विचारक निर्देशन कौशल में काफी निपुण थे। जिनका विचार या निर्देशन भी आज भी बुद्धिजीवी समाज के लिए विशेष महत्व रखता है। प्लेटो ने अपनी 'रिपब्लिक' नामक पुस्तक में समाज की सर्वोत्तम व्यवस्था की रूपरेखा प्रस्तुत की है। अरस्तु के बौद्धिक चिन्तन में एक समृद्ध व सशक्त शिक्षण-प्रशिक्षण प्रणाली के बीज मिलते हैं। जिसमें शिक्षण व्यवस्था के अन्तर्गत निर्देशन को विशेष महत्व देने पर पर्याप्त बल दिया गया था। अतः यूनानी विचारकों ने भी शिक्षण व्यवस्था के आवश्यक अंग के रूप में निर्देशन को महत्वपूर्ण स्थान दिया है।

3.4.2 फ्रांस

1922 में फ्रांस में व्यवसायिक निर्देशन को राष्ट्रीय स्तर पर काफी सहयोग और समर्थन प्राप्त हुआ। जगह-जगह पर निर्देशनशालाओं की स्थापना की गई। ये व्यवसायिक निर्देशन कार्यालय विद्यालयों के शिक्षकों के सहयोग से कार्य करते थे। चिकित्सा,कार्यकर्ताओंरोजगार दफ्तरों आदि के कर्मचारियों के भी ये समय-समय पर निर्देशन दिया करते थे। पेरिस में व्यवसायिक निर्देशन के राष्ट्रीय

संस्थान को प्रारम्भ किया गया। इस संस्थान का सर्वप्रथम कार्य था व्यवसायिक परामर्शदाताओं को प्रशिक्षित करना। फ्रांस के निर्देशन आन्दोलन को वहां की स्वयंसेवी संस्थाओं ने विशेष सहयोग दिया। फ्रांस में निर्देशन का कार्य श्रम मंत्रालय के सहयोग से शिक्षा मंत्रालय देखता था।

3.4.3 संयुक्त राज्य अमेरिका

संयुक्त राज्य अमेरिका में मुख्यतः न्यूयार्क तथा बोस्टन को निर्देशन हेतु प्रारम्भिक महत्वपूर्ण केन्द्र के रूप में जाना जाता है। बोस्टन नगर में फ्रैंक पारसन्स ने 1908 में बोस्टन वोकेशनल ब्यूरो की स्थापना की। न्यूयार्क और मिशीगन में भी व्यावसायिक परामर्श केन्द्र स्थापित किएगए। अमेरिका के विभिन्न शहरों में धीरे-धीरे व्यावसायिक निर्देशन आन्दोलन का प्रसार हो गया। अमेरिका के व्यावसायिक निर्देशन से सम्बन्धित राष्ट्रीय सम्मेलनों का आयोजन बोस्टन 1910, न्यूयार्क 1912 में किया गया। 1918 में वोकेशनल गाइडेन्स बुलेटिन का प्रकाशन हुआ, जो बाद में पर्सनल एवं गाइडेन्स जर्नल के रूप में प्रकाशित होने लगा। 1913 में ग्रैण्ड रैपिड्स में आयोजित सम्मेलन में शैक्षिक, सामाजिक एवं व्यावसायिक निर्देशन क्षेत्रों पर बल दिया गया था। इस प्रकार विद्यालयों में निर्देशन कार्यक्रमों के गठन की पूरी तैयारी हो गई। भारत में भी निर्देशन के वर्तमान स्वरूप को बनाने में सभी प्रमुख आरम्भिक योगदान अमेरिका से ही आए हैं।

3.4.4 जर्मनी

जर्मनी में व्यवसायिक, एवं शैक्षिक निर्देशन में नारी संगठनों की भूमिका विशेष रूप से रही।1900 में इन नारी संगठनों ने महिलाओं के लिए व्यवसाय चुनने हेतु विशेष सूचना केन्द्रों की स्थापना की। प्रथम विश्व युद्ध का यहाँ के निर्देशन आन्दोलन पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। आगे चलकर सरकार ने एक सरकारी अभिकरण स्थापित किया जो लोगों को रोजगार एवं व्यावसायिक निर्देशन सेवाएं प्रदान करने का कार्य करता था। 1935 तक जर्मनी मे 500 से अधिक निर्देशन के सरकारी कार्यालय स्थापित किए जा चुके थे।

3.4.5 भारत

सोहनलाल और सैय्यद्दीन को भारत में निर्देशन आन्दोलन आरम्भ करने का श्रेय दिया जाता है। विश्वविद्यालयों में निर्देशन की शिक्षा प्रारम्भ करने का श्रेय कोलकाता विश्वविद्यालय को जाता है। 1938 में इस विश्वविद्यालय के व्यावहारिक मनोविज्ञान विभाग में निर्देशन को शामिल किया गया। 1941 में बाटलीबाय वोकेशनल गाइडेन्स ब्यूरो की स्थापना मुम्बई में हुई। 1945 में पटना

विश्वविद्यालय के मनोवैज्ञानिक शोध एवं सेवा विभाग द्वारा निर्देशन कार्य प्रारम्भ किया गया। 1947 में इलाहाबाद में मनोविज्ञानशाला की स्थापना की गई। 1952 में उतर प्रदेश के अनेक जिलों में जिला एवं मण्डलीय मनोवैज्ञानिक केन्द्रों की स्थापना की गई। 1959 में एम0एस0 विश्वविद्यालय बड़ोदरा में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सहयोग से पूर्णकालिक परामर्शन केन्द्र की स्थापना की गई। 1961 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय में यू0एस0 एजुकेशन फाउन्डेशन इन इण्डिया के सहयोग से परामर्श केन्द्र स्थापित किया गया। भारत के शिक्षा मंत्रालय के सहयोग से विभिन्न विश्वविद्यालयों में छात्र परामर्श ब्यूरो की स्थापना की गई। आज भारत में जो निर्देशन की स्थिति है वह 20वीं शताब्दी के चौथे दशक से ही निर्देशन आन्दोलन का रूप ग्रहण किए है। भारत सरकार द्वारा स्वतंत्रता प्राप्ति होने के पश्चात् व्यक्ति के सर्वांगीण विकास की दिशा में पर्याप्त ध्यान दिया जाने लगा। व्यक्ति की सभी क्षमताओं का पूर्ण विकास हो इसके लिए निर्देशन सेवा केन्द्रों को स्थापित किया गया। मुदालियर कमीशन ने माध्यमिक शिक्षा में सुधार हेतु निर्देशन से सम्बन्धित सुझाव दिए। भारत सरकार ने केन्द्रीय शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन ब्यूरो की स्थापना की, जिसके माध्यम से सम्पूर्ण देश में निर्देशन सेवाओं का संचालन किया जाता है। निर्देशन के क्षेत्र में आज गैर सरकारी संस्थाएँ भी कार्य कर रही हैं। भारत में निर्देशन आन्दोलन की 1951 के बाद काफी सन्तोषजनक प्रगति हुई।

माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा से सम्बन्धित अनेक आयोगों द्वारा निर्देशन सेवाओं की आवश्यकता पर विशेष बल दिया गया है। शिक्षा आयोग (1964-66) द्वारा उच्च शिक्षा के संस्थानों में निर्देशन एवं परामर्श सेवाओं की व्यवस्था एवं इसके माध्यम से व्यवसायिक निर्देशन दिए जाने की अनुशंसा की गई।

भारत में निर्देशन आन्दोलन जितनी तीव्रगति से आरम्भ हुआ उस अनुपात में बाद के दशकों में निर्देशन सेवाओं का विस्तार नहीं हुआ। 21वीं शताब्दी में निर्देशन कार्यक्रम से अनेक अपेक्षाएँ हैं। स्वास्थ्य के क्षेत्र में निर्देशन एवं परामर्श की आवश्यकता विशेष रूप से बढ़ गई है। व्यापक स्तर पर निर्देशन एवं परामर्श सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए अन्य संस्थानों के अतिरिक्त प्रशिक्षित परामर्शदाताओं का भी अभाव है। आवश्यकता इस बात की है कि वैयक्तिक, शैक्षिक, व्यावसायिक, सामाजिक एवं अन्य क्षेत्रों में निर्देशन हेतु सेवाओं का विस्तार किया जाए तथा सरकारी संगठन इस दिशा में विशेष रूप से कार्य करें।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. विश्वविद्यालयों में निर्देशन की शिक्षा प्रारम्भ करने का श्रेय _____विश्वविद्यालय को जाता है।

2. 1941 में बाटलीबाय वोकेशनल गाइडेन्स ब्यूरो की स्थापना _____ में हुई।
3. भारत में निर्देशन आन्दोलन की _____ के बाद काफी सन्तोषजनक प्रगति हुई।

3.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप निर्देशन में प्राचीन भारत की भूमिका, निर्देशन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, प्राचीन भारत से लेकर वर्तमान भारत एवं विश्व के कुछ प्रमुख देशों में निर्देशन की क्या स्थिति है तथा इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। निर्देशन का महत्व मानव जीवन में प्राचीन काल से ही रहा है। प्राचीन शिक्षा व्यवस्था में गुरूजन शिक्षा समाप्ति के पश्चात् अपने शिष्य/शिष्यों को उसके आगामी जीवन को आदर्श व्यक्तित्व, उच्चस्तरीय जीवनशैली जीने के लिए निर्देशन करता था। निर्देशन के महत्व को विश्व के समस्त देशों ने स्वीकार किया है। आज मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में निर्देशन की महती आवश्यकता है।

3.6 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. कोलकाता
2. मुम्बई
3. 1951

3.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. आलम, डॉ0 शाह एवं गुफरान डॉ0 मुहम्मद (2011): निर्देशन एवं परामर्श का मूलभूत आधार, प्रकाशक - ज्ञानदा प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. राय, अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु (2006, तृतीय संस्करण): निर्देशन एवं परामर्श, प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।.
3. शर्मा, डॉ0 आर0ए0 एवं चतुर्वेदी डॉ0 शिखा (2010): निर्देशन एवं परामर्श के मूलतत्व, प्रकाशक - विनय रखेजा ब्ध्व आर0 लाल बुक डिपो, निकट राजकीय इण्टर कालेज मेरठ।
4. शर्मा एस0एन0 एवं सोलंकी एम0 के0 (2011): निर्देशन एवं परामर्श, प्रकाशन - माधव प्रकाशक, ए-23 इन्द्रपुरी कालोनी, न्यू आगरा, आगरा।

3.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. निर्देशन के सन्दर्भ में प्राचीन भारत की भूमिका स्पष्ट कीजिए तथा निर्देशन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का वर्णन कीजिए।
2. विश्व स्तर पर निर्देशन की स्थिति एवं दशा का उल्लेख कीजिए।

इकाई 4 -निर्देशन सेवाएं प्रदान करने में सरकारी एवं गैरसरकारी संगठनों की भूमिका

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 राज्य एवं केन्द्रीयस्तर पर निर्देशन सेवाएँ प्रदान करने वाले संगठनों की आवश्यकता एवं उनके उद्देश्य
4.3.1 केन्द्रीय योजना/संगठन
4.3.2 राज्य स्तर पर निर्देशन सेवाएँ
4.4 गैरसरकारी संगठनों की निर्देशन सेवाएँ प्रदान करने में भूमिका
4.5 सारांश
4.6 शब्दावली
4.7 स्वमूल्यांकन प्रश्नों के उत्तर
4.8 संदर्भ ग्रंथ सूची
4.9 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

निर्देशन कार्यक्रम व्यक्ति के जीवन के विविध क्षेत्रों जैसे शिक्षा, व्यवसाय, पारिवारिक एवं वैवाहिक समायोजन आदि अन्य अनेक क्षेत्रों में समायोजन तथा जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में अनेक प्रकार से व्यक्ति की सहायता करता है। निर्देशन किसी व्यक्ति को उसके सर्वाधिक सम्भव विकास एवं उपर्युक्त समायोजन हेतु लक्ष्यों के निर्माण एवं उसके क्रियान्वयन हेतु विकल्पों की खोज एवं उपर्युक्त विकल्प के चयन, क्षमताओं के विकास, कमियों के निदान एवं निवारण आदि के लिए व्यक्ति के अधिकारों को सीमित किए बिना सहयोग प्रदान करता है। निर्देशन प्रक्रिया द्वारा व्यक्ति को दिया जाने वाला सहयोग विविध प्रकार की सेवाओं के निर्देशन कार्यक्रम द्वारा प्रदान किया जाता है। निर्देशन सेवाएँ ऐसी संगठित गतिविधियाँ हैं जो व्यक्ति के परीक्षण, मूल्यांकन और वास्तविकतापूर्ण व्यक्तिगत लक्ष्यों के चयन में सहायक होती है तथा लक्ष्य की सिद्धि की दिशा में प्रत्येक व्यक्ति/छात्र

का मार्गदर्शन करती हैं। ये निर्देशन सेवाएँ विभिन्न सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं एवं संगठनों द्वारा प्रदान की जाती हैं।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन केपश्चात आप-

1. निर्देशन और परामर्श केन्द्रों के उद्देश्य एवं आवश्यकता को स्पष्ट कर सकेंगे।
2. निर्देशन एवं परामर्श कार्यक्रमों के केन्द्रों के विषय में जान पाएंगे।
3. व्यक्तिगत-समाज सेवी निर्देशन संस्थाओं का वर्णन के सकेंगे।
4. निर्देशन केन्द्रों के महत्व की व्याख्या कर पाएंगे।

4.3 राज्य एवं केन्द्रीय स्तर पर निर्देशन सेवाएँ प्रदान करनेवाले संगठनों की आवश्यकता एवं उनके उद्देश्य

निर्देशन एवं परामर्श केन्द्रों की व्यक्ति के जीवन में काफी आवश्यकता एवं महत्व है तथा इन निर्देशन केन्द्रों के अपने कुछ प्रमुख उद्देश्य हैं।

निर्देशन एवं परामर्श केन्द्रों की आवश्यकता एवं महत्व

1. उद्योग सम्बन्धी कार्य प्रणाली के लिए प्रशिक्षण देकर ज्ञान एवं कौशल का विकास किया जाता है। जिससे तकनीकी विशेषज्ञोंमें गुणवत्ता लायी जाती है। मानवीय शक्ति का उत्पादन में समुचित उपयोग किया जाता है।
2. किशोरावस्था के आयुवर्ग के बालकों की विविध प्रकार की समस्याएं होती हैं। उनकी समस्याओं के समाधान में उन केन्द्रों का विशेष महत्व है। यदि समुचित ढंग से इन्हें निर्देशन दिया जाए तो इनमें सृजनात्मकता तथा सामाजिकता जैसे गुणों का समुचित विकास हो सकता है।
3. विद्यालयों में छात्र विविध प्रकार की समस्याएं लेकर आते हैं तथा विद्यालय सम्पत्ति तथा साज-सज्जा को नुकसान पहुँचाते हैं। इन निर्देशन केन्द्रों की सहायता से उनकी समस्याओं का समाधान किया जा सकता है तथा उनमें अपेक्षित गुणों का विकास किया जा सकता है।
4. इन केन्द्रों की सेवाओं से छात्रों को विकास हेतु वास्तविक सहायता प्रदान की जाती है।

5. निर्देशन एवं परामर्श केन्द्रों द्वारा छात्रों के विकास एवं समस्याओं के समाधान में सहयोग एवं सहायता प्रदान किया जाना आवश्यक है क्योंकि इन केन्द्रों को विद्यालयी जीवन से अलग नहीं किया जा सकता है।

निर्देशन केन्द्रों के उद्देश्य - निर्देशन एवं परामर्श केन्द्रों की स्थापना के उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

a. शैक्षिक निर्देशन देना।
b. व्यावसायिक निर्देशन।
c. व्यक्तिगत एवं सामाजिक निर्देशन तथा परामर्श देना।

1. शैक्षिक निर्देशन देना - शैक्षिक निर्देशन उद्देश्य को 5 विशिष्ट रूपों में दिया गया है।

1. विशिष्ट बालकों, प्रतिभाशाली बालकों तथा सर्जनात्मक बालकों की पहचान करना और उनकी आवश्यकता के अनुरूप विकास करना।
2. अधिगम असमर्थी बालकों की समस्याओं का निदान करना और उपचारात्मक अनुदेशन देना तथा साधनों की व्यवस्था करना।
3. विद्यालय में अध्ययनरत छात्रों की शैक्षिक प्रगति की देख-रेख करना।
4. छात्रों की अधिगम कठिनाइयों और उनकी क्षमताओं के प्रति सूक्ष्मता का विकास करना।
5. छात्र को आगामी शिक्षा एवं प्रशिक्षण के सम्बन्ध में सूचना देना और सहायता प्रदान करना।

2. व्यावसायिक निर्देश देना - इस उद्देश्य के तीन विशिष्ट रूप दिए गए हैं-

1. रोजगार सम्बन्धी अवसरों एवं सूचनाओं को एकत्रित करना।
2. रोजगार सूचनाओं का विश्लेषण करना और विकास करना। समुचित रोजगार, व्यवसाय का चयन करने में सहायता करना।
3. स्वयं रोजगार प्राप्त करने हेतु छात्र को सूचनाओं में सहायता प्रदान करना।

3. व्यक्तिगत एवं सामाजिक निर्देशन तथा परामर्श प्रदान करना

इसके विशिष्ट पाँच रूप दिए हैं-

1. छात्र की समायोजन सम्बन्धी समस्याओं को पहचानना और उसके समाधान में सहायता प्रदान करना।
2. छात्रों में अच्छे मूल्यों, अभिवृतियों, आदतों, कार्य करने की आदतों का समुचित विकास करना।
3. छात्रों में पारस्परिक अच्छे सम्बन्धों का विकास करना।
4. छात्रों में अवकाश या खाली समय का सदुपयोग करने की प्रवृति का विकास करना।

5. छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य कोबनाएरखने में सहायता प्रदान करना।

निर्देशन एवं परामर्श केन्द्रों के कार्य - निर्देशन एवं परामर्श केन्द्रों के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं -

1. भौतिक सुविधाओं का विकास करना।
2. निर्देशन व परामर्श की क्रियाओं की व्यवस्था करना।
3. निर्देशन एवं परामर्श केन्द्र का अन्य संस्थाओं से सम्पर्क स्थापित करना।
4. निर्देशन एवं परामर्श केन्द्र के कार्यक्रमों के संचालन एवं प्रभाव का आंकलन करना।

4.3.1 केन्द्रीय योजना/संगठन

केन्द्र सरकार द्वारा प्रशासित निर्देशन संस्थाएं/केन्द्र

1. राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली
2. केन्द्रीय प्रशासित विद्यालय
3. केन्द्रीय विद्यालय व सैनिक विद्यालय
4. नवोदय विद्यालय

राष्ट्रीय/केन्द्रीय स्तर पर निर्देशन सेवा केन्द्र एवं उनके कार्य - राष्ट्रीय एवं केन्द्रीय स्तर पर जो निर्देशन सेवा केन्द्र हैं वे निम्नलिखित हैं-

केन्द्रीय शैक्षिक एवं निर्देशन ब्यूरो - माध्यमिक शिक्षा आयोग जिसे मुदालियर आयोग भी कहते हैं। इस आयोग ने शैक्षिक एवं व्यवसायिक निर्देशन के विस्तार के लिए कुछ संस्तुतियाँ दी जो निम्नलिखित हैं-

1. शिक्षा के अन्तर्गत शैक्षिक निर्देशन पर अधिक बल देना चाहिए।
2. सभी शिक्षा संस्थानों में कैरियर मास्टरों तथा अन्य निर्देशन अधिकारियों की व्यवस्था की जानी चाहिए।
3. सभी राज्यों में निर्देशन सम्बन्धी प्रशिक्षण के लिए प्रशिक्षण केन्द्र खोलने का उत्तरदायित्व केन्द्र सरकार वहन करे।
4. छात्रों को विभिन्न उद्योगों के कार्य क्षेत्रों तथा महत्व आदि का ज्ञान कराने के लिए उद्योगों पर बनी लघु फिल्में दिखाकर उन्हें वास्तविक स्थितियों/परिस्थितियों से अवगत कराया जाना चाहिए।
5. माध्यमिक शिक्षा आयोग की उपर्युक्त सिफारिशों के आधार पर केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय ने 1954 में केन्द्रीय शिक्षा तथा व्यावसायिक ब्यूरो की स्थापना की।

राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद एवं निर्देशन सेवाएं - राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद की स्थापना 1 सितम्बर 1961 में स्वायत्त व्यवस्था के रूप में नई दिल्ली में की गई थी। मानव संसाधन भारत मंत्रालय की शैक्षिक परामर्श संस्था के रूप में बनाई गई। यह भारत शिक्षा विभाग के विद्यालयों के लिए शिक्षा नीति एवं कार्यक्रमों का प्रारूप बनाती/तैयार करती है। मंत्रालय इस परिषद के विशेषज्ञों से परामर्श भी करता है।

इस परिषद के अन्तर्गत शिक्षा मनोविज्ञान, निर्देशन एवं परामर्श, अध्यापक शिक्षा विभाग, शिक्षा तकनीकी केन्द्र आदि विभाग भी खोले गए। जिससे प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा, उच्च माध्यमिक शिक्षा में गुणवत्ता लाने का प्रयास किया जाता है।

अखिल भारतीय शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन संघ- इस संघ की राष्ट्रीय स्तर पर स्थापना की गई है। इसका मुख्य कार्य-राष्ट्रीय स्तर पर निर्देशन कार्यक्रमों तथा विचारधाराओं का प्रसार करना तथा विभिन्न निर्देशन कार्यक्रमों को समन्वित करना है। यह संघ निर्देशन साहित्य का प्रकाशन तथा वितरण भी करता है। यह संघ निर्देशन सम्बन्धी एक पत्रिका प्रकाशन भी करता है जिसका नाम Journal of Vocational and Educational Guidance है।

पुनर्वास एवं नियोजन निदेशालय- यह निदेशालय केन्द्रीय श्रम, पुर्नवास एवं नियोजन मंत्रालय के अधीन है। प्रारम्भ में (भारत के विभाजन से पहले) इस निदेशालय का कार्य पश्चिमी-पूर्वी (जो अब बंग्ला देश में है) पाकिस्तान से आए लोगों (शरणार्थियों) को पुनर्वासित करता था। वर्तमान समय में इस निदेशालय के अधीन देश के सभी रोजगार कार्यालयों से निर्देशन के बारे में विभिन्न प्रकार के साहित्य को प्रकाशित करता है। यह विभाग निर्देशन से सम्बन्धित अनुसंधान कार्य का संचालन भी करता है। इस विभाग के अतिरिक्त केन्द्र सरकार का प्रकाशन विभाग तथा अन्य मंत्रालय भी निर्देशन के क्षेत्र में कार्य करते हैं।

4.3.2 राज्य स्तर पर निर्देशन सेवाएँ

प्रायः प्रत्येक राज्य में एक राज्य शैक्षिक तथा व्यावसायिक ब्यूरो की स्थापना की गई। राज्यों में इसकी स्थापना मुदालियर शिक्षा आयोग की सिफारिशों का परिणाम है। राजस्थान राज्य में इसकी स्थापना 1958 में हुई थी। इसका कार्यालय बीकानेर में रखा गया। यह ब्यूरो राज्य में निर्देशन से सम्बन्धित साहित्य का प्रकाशन करता है। निर्देशन कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण देता है। पत्रिका राजस्थान गाइडेन्स न्यूज लेटर प्रकाशित करता है। विद्यालयों में निर्देशन सेवाओं का प्रबन्ध करता है। निर्देशन के क्षेत्र में अनुसन्धान कार्यों को प्रोत्साहन देता है।

तृतीय पंचवर्षीय योजना में निर्देशन को केन्द्र द्वारा प्रायोजित योजना के रूप में स्वीकार किया गया और राज्यों में निर्देशन सेवाओं के विकास के लिए 12 ब्यूरो स्थापित किए। इनके प्रयासों से निर्देशक तथा कैरियर मास्टरों द्वारा विद्यालयों मे छात्रों को निर्देशन सहायता प्रदान की जाने लगी। तीसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तिम चरण तक पूरे भारत में लगभग 3000 माध्यमिक विद्यालयों में निर्देशन सेवा उपलब्ध कराई जाने लगी। इन विद्यालयों मे कैरियर मास्टर ही सूचनाएं प्रदान करते हैं।

राज्य में ब्यूरो के अतिरिक्त निर्देशन सेवाओं की देखभाल करने में निम्नलिखित संस्थाएं भी अपना सहयोग प्रदान करती हैं-

i. नियोजन कार्यालय
ii. विश्वविद्यालय
iii. शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय
iv. कुछ राज्य में मनोविज्ञान ब्यूरो भी इस कार्य के लिए स्थापित कर रखे हैं।

i. राष्ट्रीय रोजगार सेवाएं/ब्यूरो- रोजगार सेवाओं को केन्द्र सरकार ने दूसरा निदेशालय श्रम मंत्रालय के अर्न्तगत स्थापित किया है। जिसे-रोजगार एवं प्रशिक्षण का सामान्य निदेशालय भी कहते हैं। इस प्रकार की सेवाओं का औपचारिक आरम्भ सन् 1957 से किया गया। इसका नियोजन करके विस्तार किया गया। आज देश में राष्ट्रीय रोजगार सेवाओं की 561 इकाईयाँ कार्य कर रही हैं। इसके अर्न्तगत विविध प्रकार के रोजगार सेवा कार्यालय स्थापित किए गए हैं। इस प्रकार की व्यवस्था का मुख्य लक्ष्य युवकों को व्यावसायिक निर्देशन प्रदान करना है।

ii. रोजगार एवं प्रशिक्षण निदेशालय- यह केन्द्र निर्देशन के लिए प्रवणता परीक्षणों को निर्माण करने और रोजगार कार्यालयों में परामर्श के लिए इनका उपयोग किया जाता है। रोजगार प्राप्त करने वाले व्यक्ति को यह परीक्षण भी देकर उन्हें निर्देशन एवं परामर्श दिया जाता है। सामान्य प्रवणता परीक्षण देकर उन्हें निर्देशन एवं परामर्शन दिया जाता है।

iii. राज्य स्तरों पर निर्देशन ब्यूरो- अधिकांश राज्य स्तर के शिक्षा विभाग में विभिन्न नामो से निर्देशन ब्यूरो की स्थापना की गई है। यह शिक्षा निदेशालय का ही अंग है। राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (SCERT)की स्थापना भी की गई है। राज्यीय शिक्षा संस्था केरल में प्रशिक्षण महाविद्यालय तथा निर्देश संस्था अलग-अलग विभाग हैं। जो शिक्षा निदेशालय के अधीन कार्य करते हैं। अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालय शिक्षा निदेशालय के अधीन होते हैं। राज्यीय निर्देशन ब्यूरो का उत्तरदायित्व व्यावसायिक निर्देशन का नियोजन तथा शिक्षा का सहयोग करना है।

iv. **रोजगार तथा प्रशिक्षण निदेशालय-** सम्पूर्ण राज्यों में रोजगार कार्यालय फैले हुए हैं, जिनके अन्तर्गत नवयुवकों को रोजगार दिलाने और नियोक्ताओं को योग्य व्यक्तियों को रोजगार देने में सहायता की जाती है।

v. **विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालय के शिक्षा तथा मनोविज्ञान विभाग-** राज्य स्तर पर राज्य के विश्वविद्यालयों मे रोजगार ब्यूरो की जानकारी दी जाती है। छात्रों को पंजीकरण भी कराना होता है। विश्वविद्यालय के शिक्षा तथा मनोविज्ञान के विभागों मे स्नातक तथा परास्नातक स्तर पर बी0एड0 तथा एम0एड0 स्तर पर निर्देशन व परामर्श के पाठ्यक्रमों का शिक्षण किया जाता है तथा प्रशिक्षण दिया जाता है।भारत में विश्वविद्यालय स्तर पर रोजगार सूचनाओं तथा निर्देशन ब्यूरो की स्थापना भी की गई है जो छात्रों को रोजगार सम्बन्धी सूचनाएं प्रदान करती हैं।

vi. **रोजगार कार्यालय-** रोजगार एवं प्रशिक्षण व्यवस्था समिति की स्थापना 1952 में की गई। विद्यालयों से आने वाले छात्रों को रोजगार अवसरों की जानकारी प्रदान करना इन कार्यालयों का मुख्य उद्देश्य है।इस कार्यालय के मुख्य उद्देश्य एवं कार्य निम्नलिखित हैं-

1. रोजगार कार्यालय का उद्देश्य नवयुवकों को उनकी योग्यताओं के अनुरूप रोजगार हेतु निर्देशन देना।
2. व्यावसायिक निर्देशन की योजना तथा परामर्शन करना।
3. व्यक्तिगत तथा सामूहिक निर्देशन कार्यक्रमों का भी आयोजन किया जाता है।
4. समूहिक निर्देशन कार्यक्रम चलाना।

vii. **राजकीय ब्यूरो विद्यालय स्तर पर-** केन्द्रीय तथा राज्यीय निर्देशन एवं परामर्शन ब्यूरो तथा कार्यालयों के कार्य क्षेत्र की इकाई विद्यालय तथा उसकी कक्षा होती है, जहां बालक के व्यवहार का शिक्षक अवलोकन करता है। राज्य के ब्यूरो की सेवाओं को क्रियान्वयन करने का उत्तरदायित्व प्रधानाचार्य का होता है। विद्यालय में निर्देशन तथा परामर्शन का कार्य प्रशिक्षित परामर्शदाता का होता है। कैरियर मास्टर भी रहता है। प्रत्येक राज्य में विद्यालयों के निर्देशन व्यवस्था का स्वरूप अलग-अलग होता है। राज्य अपने ढंग से प्रारूप विकसित करते हैं।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. राष्ट्रीय रोजगार सेवाओं की व्यवस्था केन्द्र पर की गई है। (सत्य/ असत्य)
2. निर्देशन एवं परामर्श केन्द्रों के मुख्य कार्य चार प्रकार के होते हैं। (सत्य/ असत्य)
3. राष्ट्रीय निर्देशन एवं परामर्श केन्द्रों के मुख्य उद्देश्य_____हैं।

4. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद_____स्तर पर कार्य करती है।
5. केन्द्र स्तर के राष्ट्रीय निर्देशन एवं परामर्श केन्द्रों का उद्देश्य है।
   (अ)शैक्षिक निर्देशन (ख) व्यावसायिक निर्देशन
   (ग) व्यक्तिगत एवं सामाजिक निर्देशन (घ) उपर्युक्त सभी।
6. निर्देशन केन्द्रों का मुख्य कार्य है-
   (अ) निर्देशन क्रियाओं की व्यवस्था (ब) कार्यकर्ताओं से सम्बन्ध बनाना
   (स) निर्देशन क्रियाओं का आकलन (द) उपर्युक्त सभी
7. केन्द्रीय निर्देशन सेवा परामर्श ब्यूरो का मुख्य उद्देश्य है-
   (अ) निर्देशन में प्रगति करना (ब) विकास कार्यो को प्रोत्साहन देना
   (स) निर्देशन में नेतृत्व प्रदान करना (द) उपर्युक्त सभी

4.4 गैर सरकारी संगठनों की निर्देशन सेवाएँ प्रदान करने में भूमिका

भारत ही नहीं बल्कि विश्वस्तर पर आज अनेक स्वयसेवी संस्थाएं हैं जो निर्देशन एवं परामर्श सेवाओं के केन्द्र स्थापित किए हैं। इन केन्द्रों के माध्यम से नवयुवकों के लिए निर्देशन सेवाओं की ये व्यवस्था करते हैं। कुछ प्रमुख गैर सरकारी/स्वयंसेवी संस्थाओं में-व्यावसायिक निर्देशन समाज कोलकाता, गुजरात शोध समाज मुम्बई, वाई0एम0सी0ए0, रोटरी क्लब, लायन्स क्लब प्रमुख हैं। भारतीय चिकित्सा संघ भी चिकित्सा सम्बन्धी निर्देशन एवं परामर्श प्रदान करता है।

4.5 सारांश

राष्ट्रीय, राज्य स्तरीय एवं गैर सरकारी निर्देशन एवं परामर्श केन्द्रों द्वारा अनेक प्रकार की शैक्षिक व्यवसायिक व्यक्तिगत एवं सामाजिक निर्देशन तथा परामर्श प्रदान किया जा रहा है। जितने भी निर्देशन एवं परामर्श केन्द्र हैं उनका प्रमुख कार्य है भौतिक सुविधाओं का विकास करना निर्देशन एवं परामर्श की क्रियाओं की व्यवस्था करना, केन्द्र का अन्य संस्थाओं से सम्पर्क स्थापित करना तथा केन्द्र के कार्यक्रमों के संचालन एवं प्रभाव का आंकलन करना। ये केन्द्र निर्देशन तथा परामर्श सेवाओं हेतु कर्मचारियों को प्रशिक्षण भी देते है।

भारत में निर्देशन सेवाओं का प्रबन्धन एवं व्यवस्था दो स्तर पर की जाती है-

i. केन्द्रीय स्तर पर

ii. राज्य स्तर पर

इसके अलावा कुछ गैर सरकारी/स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा भी निर्देशन संस्थाएं या केन्द्र स्थापित किए गए है। इनमें विश्वविद्यालयों द्वारा संचालित केन्द्र, छात्र मनोविज्ञान केन्द्र, व्यावसायिक निर्देशन समाज कोलकाता, गुजरात शोध समाज मुम्बई, वाई0एम0सी0ए0, रोटरी क्लब, लायन्स क्लब, इण्डियन मेडिकल एसोशिएसन प्रमुख है। कुछ मनोवैज्ञानिकों द्वारा भी निर्देशन एवं परामर्श के केन्द्र चलाये जा रहे हैं।

4.6 शब्दावली

1. **भौतिक स्रोत** :भौतिक स्रोत को दो वर्गों में विभाजित किया जाता है-
    a. केन्द्र पर विविध प्रकार के परीक्षणों की व्यवस्था।
    b. साज-सज्जा, फर्नीचर तथा संग्रहालय की व्यवस्था।

4.7 स्वमूल्यांकन प्रश्नों के उत्तर

1. सत्य
2. सत्य
3. तीन
4. केन्द्र
5. उपर्युक्त सभी
6. द
7. द

4.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. आलम, डॉ0 शाह एवं गुफरान डॉ0 मुहम्मद (2011): निर्देशन एवं परामर्श का मूलभूत आधार, प्रकाशक - ज्ञानदा प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. राय, अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु (2006, तृतीय संस्करण): निर्देशन एवं परामर्श, प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
3. शर्मा, डॉ0 आर0ए0 एवं चतुर्वेदी डॉ0 शिखा (2010): निर्देशन एवं परामर्श के मूलतत्व, प्रकाशक - विनय रखेजा ब्ध्व आर0 लाल बुक डिपो, निकट राजकीय इण्टर कालेज मेरठ।

4. शर्मा एस0एन0 एवं सोलंकी एम0 के0 (2011): निर्देशन एवं परामर्श, प्रकाशन - माधव प्रकाशक, ए-23 इन्द्रपुरी कालोनी, न्यू आगरा, आगरा।

4.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. निर्देशन एवं परामर्श सेवा केन्द्रों की आवश्यकता बताइए।
2. निर्देशन केन्द्रों के उद्देश्यों एवं कार्यों का उल्लेख कीजिए।
3. केन्द्रीय तथा राज्य स्तरीय निर्देशन तथा परामर्श सेवाओं की व्यवस्था का विवरण लिखिए।

इकाई 5- शैक्षिक निर्देशन- अर्थ एवं महत्व

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 निर्देशन का अर्थ
5.4 निर्देशन की परिभाषाएं
5.5 निर्देशन के प्रकार
5.6 शैक्षिक निर्देशन
5.7 शैक्षिक निर्देशन का अर्थ
5.8 शैक्षिक निर्देशन की परिभाषा
5.9 शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्व
5.9.1 विषय चयन के लिए
5.9.2 अनुशासन की प्रक्रिया को तेज करने के लिए
5.9.3 अध्ययन सामग्री के चुनाव के लिए
5.9.4 उपयुक्त अध्ययन विधि का चयन
5.9.5 परीक्षा की समुचित तैयारी के लिए
5.10 शैक्षिक निर्देशन का महत्व
5.11 शैक्षिक निर्देशन के उद्देश्य
5.12 सारांश
5.13 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
5.14 संदर्भ ग्रंथ सूची
5.15 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

आधुनिक युग जटिलताओं का युग है, जैसे-जैसे मानव समाज विकसित होता जा रहा है उसके जीवन में जटिलताएं बढ़ती जा रही हैं। कोई समय था जब कुश नामक कंटीली घास को ले आने वाला व्यक्ति कुशल कहलाता था किन्तु वर्तमान परिप्रेक्ष्य में कुशल कहलाने के लिए मनुष्य को अपने

भीतर अनेक योग्यताओं एवं क्षमताओं का विकास करना होगा। जटिलताओं के कारण विशेषज्ञता की आवश्यकता जीवन के अन्य सभी क्षेत्रों की तरह शिक्षा में भी है। निरन्तर जटिल होते इस समाज में कोई भी व्यक्ति केवल अपने अनुभवों के द्वारा किसी भी क्षेत्र में पूर्ण सफल नहीं हो सकता, उसे सफल होने के लिए दूसरों के अनुभवों की भी आवश्यकता पड़ती है।

समस्याओं का समाधान करने के लिए, अध्ययन में मन लगाने के लिए, उपलब्धि का स्तर ऊँचा उठाने के लिए, आदत में सुधार के लिए अथवा इसी तरह के किसी अन्य कारण से जब हम अपने अनुभव अथवा ज्ञान को व्यक्ति विशेष के लिए प्रदान करते हैं तब अनुभव एवं ज्ञान के आदान-प्रदान की यह प्रक्रिया निर्देशन का रूप ले लेती हैं।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप- -

1. निर्देशन के अर्थ को जान सकेंगे।
2. निर्देशन का आरम्भ कब हुआ तथा इसके स्वरूप में क्या-क्या परिवर्तन हुए यह जान सकेंगे।
3. विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई निर्देशन की परिभाषाओं का अध्ययन कर सकेंगे।
4. शैक्षिक निर्देशन के अर्थ को समझने में समर्थ होंगे।
5. शैक्षिक निर्देशन की विभिन्न परिभाषाओं से अवगत होंगे।
6. शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्व का वर्णन कर सकेंगे।

5.3 निर्देशन का अर्थ

निर्देशन शब्द निर्देश से बना है, निर्देश का अर्थ होता है किसी कार्य को करने के लिए उससे सम्बन्धित सूचनाएं, कार्यविधि प्राप्त करना एवं प्रदान करना। स्वाभाविक सी बात है, इन दोनो कार्यों के लिए बुद्धिमत्ता की आवश्यकता है। दूसरे शब्दों में हम निर्देशन को बुद्धिमत्ता का विकास करने की प्रक्रिया भी कह सकते हैं।

निर्देशन का आरम्भ धरती पर तभी से हो गया था जबसे धरती पर जीवन का आरम्भ हुआ। जीवन में आने वाली विभिन्न समस्याओं एवं उन समस्याओं को दूर करने के निरन्तर प्रयासों के परिणाम स्वरूप प्राप्त अनुभवों को जब उसी प्रकार की परिस्थितियों में पड़े हुए किसी दूसरे जीव को प्रदान किया जाता है तब यह प्रक्रिया निर्देशन कहलाती है। इस तथ्य को एक उदाहरण से समझते हैं -

चिड़िया का छोटा बच्चा जब अपने घोंसले के बाहर गिर जाता है तथा स्वंय को उड़ने में असमर्थ पाता है तब आत्मरक्षा के लिए बेचैन वह नन्हा प्राणी अपनी माँ की ओर देखता है। माता चिड़िया उस बच्चे को छोटी-छोटी उड़ान भर कर दिखलाती है और उसे उड़ने केलिएप्रेरित करती है। माता के अनुभवों से सहायता लेकर आत्मरक्षा हेतु उड़ने के लिए बाध्य चिड़िया के इस छोटे बच्चे के द्वारा उड़ना सीखने की प्रक्रिया तथा इस प्रक्रिया में माता चिड़िया द्वारा किया जाने वाला सहयोग निर्देशन का सटीक उदाहरण है।

इस प्रकार जहाँएक ओर निर्देशन आदि काल से चला आ रहा है वहीं दूसरी ओर निर्देशन की आवश्यकता मानव सहित समस्त जीवधारियों को है। उदाहरण के लिए यदि हम अपने जीवन में आने वाली किसी गम्भीर समस्या (जैसे जीवन पर आया संकट, कानूनी समस्या, कार्यस्थल के सम्बन्ध में आने वाली कठिनाई) का समाधान स्वयं के प्रयासों से कर लेते हैं तो यह हमारा 'अनुभव' होगा किन्तु यदि हम अपने अनुभव का प्रयोग किसी दूसरे व्यक्ति को समान समस्या से बाहर निकालने में करते हैं तब हमारा यह कार्य निर्देशन की श्रेणी में आता है।

5.4 निर्देशन की परिभाषाएँ

विभिन्न शिक्षाविदों ने निर्देशन की अनेक परिभाषाएं दी हैं। अपने मन्तव्य को और अधिक स्पष्ट करने तथा उसे प्रामाणिक बनाने के लिए उनमें से कुछ प्रमुख परिभाषाएं यहाँ प्रस्तुत हैं:-

मोरिस (Moris)"Guidance is a process of helping individual through their own efforts to discover and develop their potential for personal happiness and social usefulness."

''निर्देशन व्यक्तियों को सहायता प्रदान करने की उस प्रक्रिया को कहते हैं जिसके द्वारा वे अपने प्रयत्नों से अपनी क्षमताओं का पता लगाने तथा उन्हें विकसित करने में समर्थ हो जाते हैं जो उनके व्यक्तिगत जीवन को सुखी और सामाजिक जीवन को उपयोगी बना सकती हैं।''

एम.सी. स्टूप्स (M.C. Stups)"Guidance is a continuous process of helping the individuals to develop the maximum of his capacity in the direction most beneficial to him and society."

''निर्देशन सहायता प्रदान करने की निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है जो व्यक्ति की अधिकतम क्षमताओं को स्वयं एवं समाज हेतु सर्वाधिक लाभप्रद दिशा में विकास करने हेतु सहायता करती है।''

कुप्पूस्वामी (Kuppu Swami)"Guidance is the process of helping a person with his adjustment problems."

''किसी व्यक्ति को समायोजन से सम्बन्धित समस्याओं में सहायता प्रदान करने की प्रक्रिया ही निर्देशन है।''

गुड (Good)"Guidance is a process of dynamic interpersonal relationship designed to influence the attitudes and subsequent behavior of a person."

''निर्देशन व्यक्ति के दृष्टिकोंण एवं उसके बाद के व्यवहार को प्रभावित करने के उद्देश्य से स्थापित गतिशील आपसी सम्बन्धों की एक प्रक्रिया है।''

पुनः निर्देशन की उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम निर्देशन की सर्वमान्य परिभाषा इस प्रकार दे सकते हैं:-

''किसी भी व्यक्ति की व्यक्तिगत तथा सामाजिक समायोजन से सम्बन्धित समस्याओं के समाधान केलिएअनुभवी व्यक्ति द्वारा दिया जाने वाला सहयोगपूर्ण कार्य निर्देशन कहलाता है जिससे प्रभावित होकर सम्बन्धित व्यक्ति अपनी समस्याओं के समाधान हेतु आत्मविश्वास पूर्वक सक्रिय होता है तथा अपने पूर्वोक्त समायोजन को प्राप्त कर लेता है।''

अब तक हमने यह जाना कि विकास के साथ-साथ जीवन में जटिलताएं भी बढ़ती हैं। जैसे-जैसे हमारे जीवन में जटिलताएं बढ़ती हैं वैसे-वैसे हमें निर्देशन की और अधिक आवश्यकताएं पड़ती है। निर्देशन का प्रारम्भ धरती पर जीवन के प्रारम्भ से ही शुरू हो गया था किन्तु देश, काल और परिस्थिति के अनुसार निर्देशन की परिभाषा बदलती रहती है।निर्देशन स्वयं के अनुभवों के द्वारा दूसरे की सकारात्मक सहायता एवं उसे सफलता प्रदान करने की प्रक्रिया का नाम है।

5.5 निर्देशन के प्रकार

मूलतः निर्देशन केवल निर्देशन है। इसका विभिन्न प्रकारों में वर्गीकरण सरल नहीं है। वास्तव में निर्देशन एक बहुमुखी प्रक्रिया है। उदाहरण के लिए जब व्यक्ति शैक्षिक निर्देशन ले रहा होता है तब वह अपना व्यक्तिगत तथा सामाजिक परिष्कार भी कर रहा होता है। इसी प्रकार अनेक बार शैक्षिक निर्देशन बालक की व्यावसायिक समस्याओं का भी समाधान कर देता है। अतः निर्देशन को यदि विभिन्न प्रकारों में बाँटा जाए, तो भी ये परस्पर इतने अन्तर्सम्बद्ध होंगे कि उनमें भेद करना मुश्किल हो

जाएगा। अतः केवल अध्ययन की दृष्टि से निर्देशन के विभिन्न प्रकारों का वर्णन किया जा सकता है। अध्ययन की दृष्टि से विभिन्न विद्वानों ने निर्देशन के अनेक प्रकार बताए है जिनमें कुछ इस प्रकार है:-

पैट्रसन के अनुसार निर्देशन के प्रकार(Kinds of Guidance According to Petrson)

पैट्रसन ने निर्देशन को पाँच भागों में बाँटा है। पैट्रसन के अनुसार निर्देशन का वर्गीकरण इस प्रकार है:-

i. शैक्षिक निर्देशन
ii. व्यावसायिक निर्देशन
iii. व्यक्तिगत निर्देशन
iv. स्वास्थ्य सम्बन्धी निर्देशन
v. आर्थिक निर्देशन

विलियम मार्टिन के अनुसारनिर्देशन के प्रकार -

विलियम मार्टिन प्रॉक्टर के द्वारा उनकी पुस्तक "Educational and Vocational Guidance" में निर्देशन के निम्नांकित 6 प्रकार बताए गए है:-

i. शैक्षिक निर्देशन
ii. व्यावसायिक निर्देशन
iii. सामाजिक एवं नागरिक कार्यों में निर्देशन
iv. स्वास्थ्य एवं शारीरिक समस्याओं से सम्बन्धित निर्देशन
v. अवकाश के उत्तम उपयोग केलिएनिर्देशन
vi. चरित्र निर्माण के कार्यों में निर्देशन

निर्देशन के इन सभी प्रकारों को पुनः निम्नांकित भागों में बाँटा जा सकता है:-

1. शैक्षिक निर्देशन
2. व्यावसायिक निर्देशन
3. सामाजिक निर्देशन
4. चिकित्सकीय निर्देशन
5. धार्मिक निर्देशन
6. तकनीकी निर्देशन
7. पारिवारिक निर्देशन
8. अवकाश सदुपयोग से सम्बन्धित निर्देशन
9. नैतिक निर्देशन

हम यह कह सकते हैं कि पूर्वोक्त सभी प्रकार के निर्देशन (शैक्षिक, व्यवसायिक, स्वास्थ्य सम्बन्धी आदि) व्यक्तिगत अथवा सामूहिक दोनों प्रकार से दिए जा सकते हैं। प्रत्येक वैयक्तिक अथवा सामूहिक निर्देशन, प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष दोनों प्रकार का हो सकता है। प्रत्येक प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष निर्देशन औपचारिक अथवा अनौपचारिक निर्देशन, निर्देशात्मक अथवा सुझावात्मक दोनों प्रकार का हो सकता है और प्रत्येक निर्देशात्मक अथवा सुझावात्मक निर्देशन सैद्धान्तिक अथवा व्यावहारिक दोनों प्रकार का हो सकता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. पैट्रसन ने निर्देशन को _____भागों में बाँटा है।
2. विलियम मार्टिन प्रॉक्टर के द्वारा लिखित पुस्तक _____है।
3. जब व्यक्ति शैक्षिक निर्देशन ले रहा होता है तब वह अपना व्यक्तिगत तथा सामाजिक _____भी कर रहा होता है।

5.6 शैक्षिक निर्देशन

निर्देशन शब्द को स्पष्ट करने के बाद हम शैक्षिक निर्देशन को स्पष्ट करने का प्रयास करेंगे। वस्तुतः निर्देशन एक व्यापक शब्द है तथा हमें अपने जीवन के जिस क्षेत्र में निर्देशन की आवश्यकता होती है, निर्देशन का वही प्रकार हमारेलिएउपयोगी होता है। जैसे सामाजिक समायोजन के लिए सामाजिक निर्देशन, शैक्षिक समायोजन केलिएशैक्षिक निर्देशन तथा व्यावसायिक समायोजन केलिएव्यावसायिक निर्देशन।

आदि काल से ही मानव अपने जीवन में अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करता आ रहा है। आधुनिक समाज को जटिल समाज की संज्ञा दी जाती है। तकनीकी के विकास ने इस जटिलता को और भी बढ़ा दिया है। आज मनुष्य की रोटी, कपड़ा और मकान की आवश्यकता गौण हो गई है तथा अन्य समस्याओं ने महत्वपूर्ण स्थान ले लिया है। अब व्यक्ति विभिन्न प्रकार की तकनीकों का सहारा लेकर स्वयं भी यन्त्रवत् बनता जा रहा है। भारत सहित अनेक देशों की सरकारों ने मानव को संसाधन मानकर इस आग में घी डालने का काम किया है। आधुनिक तकनीकी युग में मनुष्य का अधिकांश समय किसी न किसी प्रकार की शिक्षा प्राप्त करने में ही व्यतीत होता है। इसके अतिरिक्त मनुष्य के जीवन का महत्वपूर्ण भाग, जिसे हम किशोरावस्था एवं युवावस्था के नाम से सम्बोधित करते

हैं, विद्यालयों में बीतता है; इसलिए उसके सामने शैक्षिक समायोजन से सम्बन्धित समस्याएं सर्वाधिक होती हैं। अतः प्रायः प्रत्येक मनुष्य को शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता पड़ती है।

5.7 शैक्षिक निर्देशन का अर्थ

निर्देशन का यह भाग शैक्षिक सेवा एवं विद्यालयों से सम्बन्धित है। इस सेवा के माध्यम से विद्यार्थी अपनी प्रतिभा का अधिकतम उपयोग करने में सक्षम होते हैं। इसके अतिरिक्त निर्देशन के द्वारा उनका वैयक्तिक विकास भी होता है। निर्देशन, चाहे वह किसी भी प्रकार का क्यों न हो, एक प्रकार से शैक्षिक प्रक्रिया ही है। अपने व्यापक अर्थों में हम किसी भी प्रकार के निर्देशन को शिक्षा प्रक्रिया का अंग मान सकते हैं, किन्तु जब हम ''शैक्षिक निर्देशन'' शब्द का प्रयोग करते हैं तब हमारा तात्पर्य विद्यार्थी के शैक्षिक समायोजन में आने वाली समस्याओं का समाधान करने से होता है। यद्यपि शिक्षा भी एक प्रकार का निर्देशन ही है, तथापि शैक्षिक निर्देशन शिक्षण कार्य का स्थान नहीं ले सकता। अतः शैक्षिक निर्देशन को परिभाषित करते हुए हम यह कह सकते हैं कि ''विद्यार्थी जीवन में आने वाली ज्ञान प्राप्ति से सम्बन्धित समस्याओं का समाधान करने में जब हम सहायता करते हैं तब यह प्रक्रिया शैक्षिक निर्देशन कहलाती है।''

5.8 शैक्षिक निर्देशन की परिभाषा

विभिन्न विद्वानों ने शैक्षिक निर्देशन को अपनी अपनी रीति से परिभाषित करने का प्रयास किया है। इनमें से कुछ परिभाषाएं इस प्रकार हैं:-

किट्सन (Kitson)"Guidance is an attempt to individualize education."

''शिक्षा का वैयक्तिकरण करने का प्रयास ही निर्देशन है।''

लिफिवर, टसेल एवं विट्जिल (Lefever, Tussel and Weitzil)"Guidance is an educational service designed to help students make more effective use of the school training programme."

''निर्देशन एक शैक्षिक सेवा है जो विद्यालय में प्राप्त दीक्षा का अपेक्षाकृत अधिक प्रभावशाली उपयोग करने में विद्यार्थियों की सहायता प्रदान करने केलिएआयोजित की जाती है।''

कैरोल एच. मिलर (Karol H. Millor)''निर्देशन सेवाओं का सम्बन्ध विद्यालय के सम्पूर्ण कार्यक्रमों के अन्तर्गत आने वाले उन संगठित क्रियाकलापों से है जो विद्यार्थी के वैयक्तिक विकास की आवश्यकताओं में सहयोग देने के उद्देश्य से आयोजित किए जाते हैं।''

आर्थर जे. जोन्स (Arthor J. Jones)"Educatioanl Guidance is concerned with assistance given to pupils in their choices and adjustement with relation to school, curriculum, courses and school life."

''शैक्षिक निर्देशन का सम्बन्ध छात्रों को प्रदान की जाने वाली उस सहायता से है जो उन्हें विद्यालयों, पाठ्यक्रमों एवं शिक्षालय के जीवन से सम्बद्ध चुनावों एवं समायोजन के लिए अपेक्षित है।''

5.9 शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्व

मनुष्य की ही भांति इस धरती पर छोटे से छोटे प्राणी जैसे चींटी से लेकर बड़े से बड़ा प्राणी जैसे हाथी तक का अपना समाज होता है तथा उनके समाज के अनुभवी एवं सक्रिय सदस्य अपने समाज के नए सदस्यों को विभिन्न कार्यों को सिखाने एवं निर्देशन देने का कार्य करते हैं। अनेक वैज्ञानिक अनुसंधानों ने भी इस बात को सिद्ध किया है कि चींटी तथा हाथी का अपना समाज होता है तथा इस समाज के अनुभवी सदस्य शेष समाज को निर्देशन देते हैं।इसी प्रकार अन्य जीव जन्तुओं की भी लगभग यही स्थिति है। मनुष्य स्वंय को समस्त प्राणी जगत में सर्वश्रेष्ठ प्राणी मानता है। अतः हम यह कह सकते हैं कि मनुष्य को जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त शैक्षिक निर्देशन की सर्वाधिक आवश्यकता है। चलना सीखने से लेकर पढ़ना सीखने तक,सामान्य शिक्षा से लेकर तकनीकी शिक्षा प्राप्त करने तक, प्रत्येक व्यक्ति को शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता है। वस्तुतः ''शैक्षिक निर्देशन शैक्षिक परिवेश में समायोजन से सम्बन्धित प्रत्येक समस्या से जुड़ा हुआ है।'' तथापि शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता को हम निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत सम्मिलित कर सकते हैं-

5.9.1 विषय चयन के लिए

अपने शैक्षिक जीवन में जब विद्यार्थी को अध्ययन के विषयों का चयन करना होता है, उस समय तक उसकी मानसिक सामर्थ्य एवं अनुभव इतना कम होता है कि वह सही निर्णय नहीं ले पाता। इस समय तक न तो वह अपनी क्षमताओं को पहचान पाया होता है और न ही अपनी रूचि को समझ पाता है। निर्देशन के अभाव में अपने साथियों की देखा-देखी एवं मित्रों का अनुसरण करते हुए विषयों का चयन कर लेता है। इन परिस्थितियों में यदि उसे समुचित शैक्षिक निर्देशन प्राप्त हो जाए तो वह इस समस्या से बच सकता है। समुचित शैक्षिक निर्देशन के माध्यम से वह कृषि, विज्ञान, कला अथवा वाणिज्य विषय का चयन अपनी रूचि, योग्यता एवं क्षमता के अनुसार कर सकता है।

5.9.2 अनुशासन की प्रक्रिया को तेज करने के लिए

विद्यालयों में प्रायः अनुशासनहीनता की समस्या देखी जाती है। अध्यापकगण एवं समाज अनुशासनहीनता की समस्या के लिए विद्यार्थियों को दोषी ठहराते हैं। अधिकांश मनोवैज्ञानिकों ने भी किशोरवय बालकों को स्वभाव से विद्रोही सिद्ध किया है। दुनिया भर के शिक्षा शास्त्री अनुशासनहीनता की समस्या का समाधान खोजने में लगे हैं तथा आज भी इस समस्या के समाधान के लिए नित नये प्रयोग किए जा रहे हैं। कोई किशोरावस्था में होने वाले शारीरिक तथा मानसिक परिवर्तन को अनुशासनहीनता का मूल मानता है तो कोई विद्यार्थी के विद्रोही स्वभाव को। कुछ विद्वान तथाकथित आधुनिकता, बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा, प्रदूषण (सामाजिक व सांस्कृतिक) आदि को भी अनुशासनहीनता का कारण मानते हैं। वास्तव में अनुशासनहीनता के मूल में केवल एक कारण है और वह है उपयुक्त शैक्षिक निर्देशन का अभाव। यदि विद्यार्थी को उपयुक्त शैक्षिक निर्देशन प्राप्त होता रहे तब ऊपर बताए गए अनुशासनहीनता के सभी कारण गौण हो जाएंगे तथा इस समस्या का स्वतः ही समाधान हो जाएगा।

5.9.3 अध्ययन सामग्री के चुनाव के लिए

आज बाजार में अनेक प्रकार की उच्चस्तरीय तथा निम्नस्तरीय अध्ययन सामग्री उपलब्ध है। विद्यार्थी बाजार में उपलब्ध अनेक प्रकाशकों की पुस्तकों को देखकर भ्रमित हो जाता है तथा सही अध्ययन सामग्री का चयन करने में कठिनाई का अनुभव करता है। इन परिस्थितियों में यदि विद्यार्थी को समुचित शैक्षिक निर्देशन प्राप्त हो जाए तो वह अपनी इस कठिनाई को हल कर सकता है।

5.9.4 उपयुक्त अध्ययन विधि का चयन

अध्ययन सामग्री का चयन करने के पश्चात विद्यार्थी के सामने जो सबसे बड़ी समस्या आती है वह यह कि वह किस अध्ययन विधि का चुनाव करे जिससे उसे कम परिश्रम में अधिक ज्ञान प्राप्त हो सके। प्रायः प्रत्येक विद्यार्थी केलिएअलग-अलग अध्ययन विधियाँ उपयोगी होती हैं। विद्यार्थी उपयुक्त अध्ययन विधि का चुनाव करने में कठिनाई का अनुभव करता है। इसकेलिएभी उसे शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता पड़ती है।

5.9.5 परीक्षा की समुचित तैयारी के लिए

प्रायः विद्यार्थी अत्यधिक अध्ययन तथा ज्ञानार्जन के बाद भी परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त नहीं कर पाता। इसका मुख्य कारण यह है कि गहन अध्ययन के पश्चात विद्यार्थी अपने ज्ञान को उत्तर पुस्तिका पर अभिव्यक्त करने में कठिनाई का अनुभव करता है। फलतः उसे परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त नहीं होते। इस समस्या के निदान के लिए भी समुचित शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता है। शैक्षिक निर्देशन के द्वारा विद्यार्थी अपने विषय को उचित प्रकार से अभिव्यक्त करना सीख जाता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. मनुष्य को जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त शैक्षिक निर्देशन की सर्वाधिक _____है।
2. अध्यापकगण एवं समाज अनुशासनहीनता की समस्या के लिए _____को दोषी ठहराते हैं।
3. शैक्षिक निर्देशन के द्वारा विद्यार्थी अपने विषय को उचित प्रकार से _____सीख जाता है।

5.10 शैक्षिक निर्देशन का महत्व

शैक्षिक निर्देशन के महत्व को हम निम्नांकित शीर्षकों के अन्तर्गत अभिव्यक्त कर सकते हैं:-

1. **प्रतिभा का समुचित उपयोग (Proper Use of Talent)-**शैक्षिक निर्देशन के द्वारा विद्यार्थी को उपयुक्त विषय सामग्री का चयन कराकर हम प्रतिभाओं का समुचित विकास करने में सक्षम होते हैं। ऐसा केवल शैक्षिक निर्देशन के द्वारा ही सम्भव होता है।
2. **श्रेष्ठतम पुस्तकों के चयन में सहायक (Helpful in Selecting Best Books)-** प्रायः विद्यार्थी अपने अध्ययन केलिएउपयुक्त पुस्तकों का चयन नहीं कर पाते हैं। शैक्षिक निर्देशन श्रेष्ठतम पुस्तक के चयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके बिना विद्यार्थी के द्वारा उपयुक्त सामग्री का चयन सम्भव नहीं है।
3. **आत्मज्ञान (Self Assertion)-** शैक्षिक निर्देशन के द्वारा विद्यार्थी को अपनी रुचि, आवश्यकताओं एवं क्षमताओं का ज्ञान हो जाता है तथा वह अपनी क्षमताओं का अधिकतम प्रयोग करने में समर्थ हो जाता है।
4. **अपव्यय तथा अवरोधन रोकने में सहायक (Helpful in Checking Mal-expences and Break in Study)-** निर्देशन शिक्षा के क्षेत्र में होने वाले अपव्यय तथा अवरोधन को रोकने में सहायक है। शैक्षिक निर्देशन के माध्यम से हम भौतिक संसाधनों का समुचित प्रयोग करने में समर्थ होते है। इसके अतिरिक्त जहाँ शैक्षिक निर्देशन उपलब्ध नहीं होता वहाँ लगभग 50 प्रतिशत विद्यार्थी अनुत्तीर्ण हो जाते है अथवा पढ़ाई छोड़ देते हैं। अतः शैक्षिक निर्देशन अपव्यय तथा अवरोधन को राकने में सहायता करता है।
5. **नैतिक मूल्यों का संरक्षण (For Preservation of Moral Values)-**प्रत्येक समाज के अपने नैतिक मूल्य होते हैं जो दूसरे समाज में स्वीकार्य हों, यह जरूरी नहीं। इसी प्रकार एक समाज की नैतिकता दूसरे समाज में अनैतिकता मानी जा सकती है। भारतीय समाज विश्व के प्राचीनतम समाजों में से एक है तथा इसके नैतिक मूल्य विश्व में अपनी विशिष्ट पहचान

रखते हैं। वर्तमान समय में भारत में पश्चिमी सभ्यता और उसके मूल्यों का प्रसार बड़ी तेजी से होता जा रहा है। इसका मुख्य कारण मीडिया द्वारा पश्चिमी मूल्यों का प्रचार-प्रसार है। वर्तमान समय में छात्र अपने प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों तथा पश्चिमी सभ्यता के मूल्यों में से कौन से मूल्य उनकेलिएसही हैं, इस बात को लेकर द्वन्द्व की स्थिति में है। उनके मस्तिष्क में निरन्तर इस बात को लेकर संघर्ष चलता रहता है जिसका प्रभाव उनके व्यक्तित्व पर पड़ता है और वे नकरात्मकता की ओर अग्रसर हो जाते हैं। शैक्षिक निर्देशन के द्वारा भारतीय समाज के विशिष्ट नैतिक मूल्यों का संरक्षण किया जाता है तथा पश्चिम की चकाचौंध से ग्रसित बालक को उपयुक्त निर्देशन से सही दिशा प्रदान की जाती है।

6. **वैज्ञानिक सामाजिक संरचना के निर्माण में सहायक (Helpful in Creating Scientific Social Structure)-**शैक्षिक निर्देशन वैज्ञानिक सामाजिक संरचना के निर्माण में सहायता प्रदान करता है। यह छात्रों के अन्धविश्वासों को दूर करता है, साथ ही साथ उन्हें पश्चिम के अन्धानुकरण से भी बचाता है जिससे उनके मस्तिष्क में एक ऐसे समाज की छवि बन सके जो सभी प्रकार के पूर्वाग्रहों, रूढ़िवादों एवं सभी प्रकार के अन्धविश्वासों से मुक्त हो और वे इसके अनुरूप समाज की संरचना कर सके।
7. **प्रतिभा संरक्षण (Preservation of Talent**)-मानव समाज में प्रतिभाओं का अभाव कभी भी नहीं रहा। सच तो यह है कि सभ्यता का अद्यतन विकास प्रतिभाओं के बल पर ही सम्भव हो सका; किन्तु किसी भी समाज में प्रतिभाशाली बालकों को उसी प्रकार संरक्षण की आवश्यकता होती है जैसे किसी महत्वपूर्ण प्रजाति के पौधे को। शैक्षिक निर्देशन के द्वारा प्रतिभाओं का संरक्षण भी किया जाता है। भिन्न-भिन्न छात्र भिन्न-भिन्न प्रकार की प्रतिभाओं के धनी होते हैं लेकिन इन प्रतिभाओं का समुचित विकास तभी हो पाता है जब इन्हें उचित मार्गदर्शन प्रदान किया जाए और यह शैक्षिक निर्देशन के द्वारा ही सम्भव है।
8. **पारिवारिक समस्याओं के समाधान में सहायक(Helpful in Solving Family Problems)**जीवन और समस्या दोनों साथ-साथ चलते हैं। जहां जीवन है वहां समस्या भी है। जीवन में आने वाली विभिन्न समस्याओं से बचने हेतु मानव समाज ने परिवार नामक संस्था का गठन किया। किन्तु परिवार में भी विभिन्न प्रकार की समस्याओं ने जन्म लेना प्रारम्भ कर दिया। विद्यालय में आने वाले विभिन्न छात्र कई बार अलग-अलग प्रकार की पारिवारिक समस्याओं से ग्रस्त होते हैं, जैसे परिवार में कलह का वातावरण, परिवार की आर्थिक स्थिति का अच्छा न होना, माता या पिता में से किसी का देहान्त, अपंगता इत्यादि।

इन समस्याओं से जूझते हुए छात्रों को शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता सबसे अधिक होती है जिससे वे इन समस्याओं से उभर कर अपना सम्पूर्ण ध्यान अध्ययन पर केन्द्रित कर सकें।

5.11 शैक्षिक निर्देशन के उद्देश्य (Objectives of Educational Guidance)

1. **विद्यालयों के चयन में सहायता करना (Helping in Selecting School)**-भारतीय सन्दर्भ में एक छात्र प्राथमिक स्तर की शिक्षा समाप्त करने के पश्चात विद्यालयों के चयन की समस्या से जूझने लगता है। वह इस समस्या से निम्न-माध्यमिक, उच्च-माध्यमिक तथा विश्वविद्यालय स्तर पर भी दो-चार होता है। उसके पश्चात उसके समक्ष सबसे बड़ी समस्या होती है कि वह किस विद्यालय का चयन करे? हालाँकि यह समस्या बहुत छोटी प्रतीत होती है, परन्तु यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है, क्योंकि एक विद्यार्थी का भविष्य उपयुक्त विद्यालय के चयन पर निर्भर करता है। शैक्षिक निर्देशन इस संदर्भ में विद्यार्थियों को उचित परामर्श उपलब्ध कराकर उनकी समस्या का समाधान कर सकता है।
2. **पाठ्यक्रम की विविधता के अनुरूप विद्यालयों के चयन में सहायता करना (Helping in Selecting the School According to the Variation in Curriculum)**-वर्तमान समय में पाठ्यक्रम की विविधता के अनुरूप विभिन्न प्रकार के विद्यालयों की स्थापना की गई है-जैसे बहुउद्देशीय विद्यालय, कृषि विद्यालय, चिकित्सा विद्यालय, व्यावसायिक विद्यालय इत्यादि। शैक्षिक निर्देशन के द्वारा विद्यार्थियों की रुचि और उनकी बौद्धिक मानसिक योग्यता के अनुरूप उन्हें विद्यालयों के चयन में सहायता दी जाती है। विद्यार्थी शैक्षिक निर्देशन के द्वारा अपनी रुचि के अनुरूप विद्यालय का चयन कर सकता है तथा अपनी प्रतिभा को निखार सकता है।
3. **विद्यालय के प्रवेश नियमों को समझने में सहायता करना (Helping Understanding the School Admission Rules)**-विभिन्न विद्यालयों में प्रवेश के लिए अनेक प्रकार की प्रवेश परीक्षाएं आयोजित की जाती हैं। इन प्रवेश परीक्षाओं के अनेक प्रकार होते हैं।तथा प्रत्येक प्रवेश परीक्षा की अपनी कुछ तकनीकी औपचारिकताएं होती हैं, जिनमें विद्यार्थी प्रायः गलती कर जाते हैं तथा योग्यता होते हुए भी उस परीक्षा को उत्तीर्ण नहीं कर पाते। शैक्षिक निर्देशन के माध्यम से हम विद्यार्थी को औपचारिकताएं, नियम तथा परीक्षा हेतु तकनीकी रूप से समृद्ध कर देते हैं जिससे वे प्रवेश के नियमों को भलीभाँति समझकर सफल हो जाते हैं।
4. **व्यवहारगत समस्याओं के समाधान के लिए (Solving the Behavioural Problems)**-विद्यार्थी को कक्षा में तथा कक्षा के बाहर अपने अनेक साथियों, अध्यापकों तथा

कर्मचारियों से व्यवहार करना पड़ता है। कभी-कभी परिस्थिति विशेष के कारण अथवा विपरीत मनोदशा के कारण उसके स्वभाव में नकारात्मकता आ जाती है। यह नकारात्मकता कभी-कभी गम्भीर समस्या का रूप धारण कर लेती है। उपयुक्त शैक्षिक निर्देशन के द्वारा विद्यार्थी की इन व्यवहारगत समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।

5. **अभिव्यक्ति क्षमता का विकास करने के लिए (Developing Skill of Self Expression)-**शैक्षिक निर्देशन के द्वारा विद्यार्थी स्वयं को मौखिक तथा लिखित दोनों ही प्रकार से अभिव्यक्त करना सीख जाता है तथा समाज के निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करने लगता है।
6. **अनुशासन स्थापना में सहायक (Helpful in Establishing Discipline)-** अनुशासनहीनता आज के विद्यालयों का अभिन्न अंग बन गई है। इसका कारण समुचित शैक्षिक निर्देशन का अभाव है। जिन विद्यालयों में शैक्षिक निर्देशन के माध्यम से विद्यार्थी को अनुशासित किया जाता है, वहाँअनुशासनहीनता की समस्या कम होती है।

5.12 सारांश

जटिल एवं तकनीकी युग ने प्राणी जगत में निर्देशन की आवश्यकता को अत्याधिक बढ़ा दिया है। निर्देशन स्वयं के अनुभवों का प्रयोग दूसरों की सहायता केलिएकरना है। आदिकाल से चले आ रहे इस निर्देशन को विभिन्न विद्वानों ने अपनी-अपनी तरह से परिभाषित भी किया है। अतः हम कह सकते हैं कि जब अभ्यर्थी स्वयं के अनुभवों के द्वारा अपने विद्यार्थी की सहायता उसके शैक्षिक समस्याओं का समाधान करने में करता है तब यह प्रक्रिया शैक्षिक निर्देशन कहलाती है। शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता व्यक्ति को पग-पग पर पड़ती है चाहे वह विषयों का चयन हो, विद्यालय में अनुशासन की स्थापना हो अथवा विद्यार्थी के सीखने की गति को तेज करना हो।

इतना ही नहीं विद्यार्थी अपनेलिएअध्ययन सामग्री, पाठ्य पुस्तक एवं अध्ययन विधि का चुनाव भी शैक्षिक निर्देशन के द्वारा करते हैं। शैक्षिक निर्देशन से विद्यार्थी आत्मज्ञान प्राप्त करता है तथा शैक्षिक निर्देशन विद्यार्थी की व्यावहारिक समस्याओं का समाधान भी करता है। इस प्रकार शैक्षिक निर्देशन के द्वारा प्रतिभाओं का समुचित उपयोग होता है।

5.13 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. पाँच

2. Educational and Vocational Guidance
3. परिष्कार
4. आवश्यकता
5. विद्यार्थियों
6. अभिव्यक्त करना

5.14 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. आलम, डॉ0 शाह एवं गुफरान डॉ0 मुहम्मद (2011): निर्देशन एवं परामर्श का मूलभूत आधार, प्रकाशक - ज्ञानदा प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. राय, अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु (2006, तृतीय संस्करण): निर्देशन एवं परामर्श, प्रकाशक - मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
3. पशरिचा, पी0 (1977), गाइडेन्स एण्ड काउंसलिंग इन इण्डिया, एन0सी0 ई0 आर0 टी0, न्यू दिल्ली।
4. अग्रवाल जे0 सी0 (1989), 'एजुकेशनल वुकेशनल गाइडैन्स एण्ड काउंसलिंग', दुआबा हाउस, दिल्ली।
5. क्रो डी0 एण्ड क्रो (लेटेस्ट् एडीसन), 'एन इन्ट्रोडक्शन टू गाइडेन्स', यूरेशिया पब्लिसिंग हाउस, दिल्ली।

5.15 निबंधात्मक प्रश्न

1. शैक्षिक निर्देशन को परिभाषित करें तथा इसकी आवश्यकता एवं महत्व को भी स्पष्ट करें।
2. शैक्षिक निर्देशन को परिभाषित करें तथा इसकी आवश्यकता एवं महत्व को भी स्पष्ट करें।
3. अपने समीपस्थ विद्यालय में जाकर वहां दिए जा रहे शैक्षिक निर्देशन के बारे में जानकारी प्राप्त करें तथा इस पर अपनी ओर से एक रिपोर्ट प्रस्तुत करें।

इकाई 6 - व्यावसायिक निर्देशन- अर्थ एवं महत्व

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 व्यावसायिक निर्देशन का अर्थ
6.4 व्यावसायिक निर्देशन की परिभाषाएं
6.5 व्यावसायिक निर्देशन का महत्व
6.6 व्यावसायिक निर्देशन के उद्देश्य
6.7 सारांश
6.8 स्वमूल्यांकन प्रश्नों के उत्तर
6.9 संदर्भ ग्रंथ सूची
6.10 निबंधात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

मानव जाति पशु, पक्षी तथा अन्य जातियों से अनेक अर्थों में भिन्न है। यदि हम गम्भीरतापूर्वक विचार करें तो मानव के अतिरिक्त इस धरती पर पाए जाने वाले अधिकांश प्राणियों का जीवन यापन एक निश्चित प्रकार से होता है। अधिकांश प्राणी आज भी अपनी परम्परागत शैली में जीवन निर्वाह कर रहे हैं। कीट पतंगे तथा सरीसृप इसके सर्वोत्तम उदाहरण हैं। किन्तु कुछ प्राणियों ने बदलतीहुईपरिस्थितियों में स्वयं को इस सीमा तक परिवर्तित कर लिया है कि इनका स्वभाव ही बदल गया है। प्रवासी पक्षी तथा मानव के आसपास रहने वाले जानवर जैसे- बन्दर, कुत्ता, बिल्ली आदि इसी श्रेणी में आते हैं।

इनमें से अनेक जानवरों को प्रशिक्षित एवं संस्कारित करके मनुष्य ने अपनेलिएउपयोगी भी बना लिया है। जहां एक ओर मानव आदि काल से गाय, भैंस, ऊंट, बकरी आदि जानवरों को पालकर उनसे अपने उद्देश्यों की प्राप्ति करता आ रहा है, वहीं दूसरी ओर आधुनिक युग में कुत्तों की अनेक प्रजातियां विकसित करके उनसे उस प्रकार के कार्य भी सम्पादित करा लेता है जो स्वयं मानव केलिएअसम्भव हैं । जैसे कुत्तों द्वारा खोज कार्य व पहरेदारी करना आदि। किन्तु ऐसा वे अपनी स्वाभाविक शक्तियों के विशेष प्रशिक्षण के बाद ही कर पाते हैं।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. व्यावसायिक निर्देशन किसे कहते हैं।
2. विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई व्यावसायिक निर्देशन की परिभाषाओं को जान सकेंगे।
3. व्यावसायिक निर्देशन को परिभाषित कर सकेंगे।
4. व्यावसायिक निर्देशन के महत्व से अवगत हो सकेंगे।
5. व्यावसायिक निर्देशन के उद्देश्यों को जान सकेंगे।
6. आवश्यकता पड़ने पर व्यावसायिक निर्देशन को प्राप्त कर सकेंगे।
7. विभिन्न व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्रों के बारे में जान सकेंगे।

6.3 व्यावसायिक निर्देशन का अर्थ

जैसा कि हम पहले भी कह चुके हैं कि मानव स्वयं को जीव जगत का सर्वश्रेष्ठ प्राणी मानता है। अतः उसे अन्य किसी भी प्राणी की अपेक्षा विशेष प्रशिक्षण की अत्यधिक आवश्यकता होती है। अपने से अधिक योग्य एवं सक्षम व्यक्ति के द्वारा कठिन परिस्थितियों में उचित मार्गदर्शन निर्देशन के अन्तर्गत आता है किन्तु यही निर्देशन जब व्यक्ति के भीतर छिपी हुई किसी मेधा एवं सामर्थ्य को खोजकर उसके उचित एवं श्रेष्ठतम उपयोग करने केलिएप्रदान किया जाता है तथा व्यक्ति उससे जीवन निर्वाह के साथ-साथ आत्मसन्तोष भी प्राप्त करता है तब यह व्यावसायिक निर्देशन कहलाता है।
यद्यपि व्यावसायिक निर्देशन भी एक प्रकार का निर्देशन ही है, तथापि अनेक अर्थों में यह शैक्षिक निर्देशन से भिन्न है। वास्तव में व्यावसायिक निर्देशन व्यवसाय चयन में सहायता से लेकर किसी भी प्रकार की व्यवसायगत समस्याओं का समाधान करने का कार्य करता है तथा निर्देशन प्राप्त करने वाला इसके माध्यम से स्वयं में व्यवसाय से सम्बन्धित योग्यताओं का विकास करता है।

व्यवसायिक निर्देशन किसी भी छात्र के भावी जीवन से सम्बन्धित है। वस्तुतः आधुनिक परिप्रेक्ष्य में किसी भी छात्र के शिक्षा ग्रहण करने का उद्देश्य अन्ततः जीविकोपार्जन की तैयारी करना होता है। वर्तमान में तो शिक्षा की इतनी शाखाएं, व्यवसाय के इतने क्षेत्र तथा अनेक प्रकार के विज्ञापन शैक्षिक क्षेत्र में हैं कि छात्र दिग्भ्रमित हो जाता है। वह निश्चय ही नहीं कर पाता कि किसका चयन करे और किसका नहीं।

जब से मानव को संसाधन मानने का प्रत्यय आरम्भ हुआ है, तब से प्रायः व्यावसायिक निर्देशन का अर्थ यह लगाया जाता है कि इसके माध्यम से व्यक्ति उपयुक्त व्यवसाय का चयन कर सकता है; जबकि व्यावसायिक निर्देशन स्वयं में इससे अधिक व्यापक अर्थ को संजोये हुए है।

जिस प्रकार से किसी भी छात्र को शैक्षिक निर्देशन की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार व्यावसायिक निर्देशन भी किसी छात्र को एक नई दिशा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वस्तुतः व्यावसायिक निर्देशन प्रारम्भ में निर्देशन से ही सम्बन्धित था। 1932 ई0 में संयुक्त राज्य अमेरिका में व्हाइट हाउस में बाल स्वास्थ्य एवं सुरक्षा विषय पर आयोजित विचार गोष्ठी में व्यावसायिक निर्देशन को परिभाषित किया गया था - ''व्यावसायिक निर्देशन व्यक्ति को व्यवसाय के चुनाव, उसकेलिएतैयार होने, उसमें लगने एवं उन्नत करने में सहायता करने वाली प्रक्रिया है।''

6.4 व्यावसायिक निर्देशन की परिभाषाएं

व्यावसायिक निर्देशन को परिभाषित करने के लिए हमें कतिपय विद्वानों को उद्धत करना होगा। किन्तु उससे भी पहले यहां पर हम National Vocational Guidance Association U.S.A. द्वारा 1987 मे दी गई परिभाषा को उद्धत करेंगे।

"Vocational guidance is the process of assisting the individual to choose an occupation, prepare for it, enter upon and progress in it."

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा व्यावसायिक निर्देशन को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि ''व्यावसायिक निर्देशन किसी व्यक्ति विशेष को दी जाने वाली वह सहायता है जिसके माध्यम से वह व्यववसाय के चयन एवं विकास से सम्बन्धित समस्याओं का समाधान करता है एवं अपनी व्यक्तिगत विशेषताओं कोबनाएरखते हुए व्यवसाय से सम्बन्धित अवसरों को प्राप्त करने का प्रयास करता है।''

''व्यावसायिक निर्देशन व्यक्तियों के गुणों एवं व्यवसाय के अवसरों के साथ उनके सम्बन्ध को ध्यान में रखते हुए व्यक्ति को व्यवसाय के वरण एवं उसकी प्रगति में आने वाली समस्याओं के सुलझाने में प्रदान की जाने वाली सहायता को कहते हैं।''

"Vocational guidance is the process of assisting the individual to choose an occupation, prepare for it, enter upon and progress in it."

''किसी व्यक्ति को अपना एवं व्यवसाय जगत के बीच अपनी भूमिका एवं संपर्याप्त चित्र बनाने एवं उसे स्वीकारने, वास्तविक स्थिति के बीच इस अवधारणा की जांच करने एवं उसे स्वयं के संतोष एवं

समाज के लाभ हेतु वास्तविकता में बदलने की सहायता प्रदान करने को व्यावसायिक निर्देशन कहते हैं।''

Mayers"Vocational guidance is the process of helping an individual to adjust in the occupation, to make effective use of human power and to facilitate the economic development of the society."

''शैक्षिक निर्देशन किसी व्यक्ति को व्यवसाय में समायोजन करने, मानव शक्ति का प्रभावी उपयोग करने में सहायता करने वाली तथा समाज के आर्थिक विकास को सुगम बनाने वाली एक प्रक्रिया है।''

Crow and Crow"Vocational guidance usually is interpreted as the assistance given to learners to choose, prepare for and progress in an occupation."

''व्यावसायिक निर्देशन की व्याख्या सामान्यतः शिक्षार्थी को व्यवसाय का चयन, तैयारी, एवं विकास करने वाली प्रक्रिया के रूप में की जाती है।''

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर व्यावसायिक निर्देशन को परिभाषित करते हुए हम कह सकते हैं कि ''व्यावसायिक निर्देशन व्यक्ति को अपनी रुचि, योग्यता, आवश्यकता एवं सामर्थ्य के अनुसार व्यवसाय का चयन करने में सहायता करने से आरम्भ होता है तथा व्यवसाय से सम्बन्धित समस्त समस्याओं के समाधान, व्यवसाय, व्यवसायगत परिवर्तन एवं व्यवसाय से सम्बन्धित प्रत्येक कार्य में सहायता पर्यन्त चलता रहता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि ''निर्देशन का वह प्रकार जो किसी भी रूप में व्यवसाय से सम्बन्धित है, व्यावसायिक निर्देशन कहलाता है।''

6.5 व्यावसायिक निर्देशन का महत्व

व्यावसायिक निर्देशन, जैसा कि परिभाषा से स्पष्ट है, व्यवसाय से आरम्भ होता हुआ जीवन पर्यन्त आवश्यक है। आज के भौतिकतावादी एवं तकनीकी युग में व्यवसाय ने ऐसे-ऐसे क्षेत्रों में अपने पाँव पसारलिएहैं जिनके बारे में कुछ समय पूर्व तक कल्पना करना भी असम्भव था। आज व्यवसाय का क्षेत्र इतना व्यापक हो गया है कि उसने धर्म, आध्यात्म और व्यक्तियों के नितान्त व्यक्तिगत जीवन को भी नहीं छोड़ा। पश्चिमी देशों सहित भारत ने भी मानव को संसाधन बनाकर आग में घीं डालने का कार्य किया है। ज्यों-ज्यों व्यावसायिकता अपने पांव पसार रही है त्यों-त्यों व्यवसायों से सम्बन्धित जटिलतायें भी बढ़ती जा रही हैं। एक ओर व्यवसायों की संख्या बढ़ने के कारण अवसरों में प्रचुरता आयी है, दूसरी ओर तकनीकी के अत्यधिक विकास ने प्रत्येक व्यवसाय में जोखिम की मात्रा भी अत्यधिक बढ़ा दी है। ऐसी विषम परिस्थितियों में निर्देशन के अभाव में व्यक्ति गलत व्यवसाय का

चयन कर सकता है तथा उसमें असफल होने के कारण अवसाद का शिकार हो सकता है। ऐसी परिस्थितियां तथाकथित मानव रूपी संसाधनों के विकास में बाधक ही बनेंगी। अतः आज व्यावसायिक निर्देशन की आवश्यकता एवं महत्व पहले की अपेक्षा अत्यधिक बढ़ गया है। व्यावसायिक निर्देशन के महत्व की सीमित समय में विशद् चर्चा करना असम्भव है। अतः यहां हम निर्देशन के महत्व से सम्बन्धित कुछ महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर संक्षेप में चर्चा करेंगे।

i. व्यक्तिगत भिन्नताओं के अनुसार व्यवसाय के चयन में सहायक
ii. व्यवसायों की अनेकरूपता के कारण आवश्यक
iii. व्यवसाय एवं व्यक्ति की प्रकृति में समानता की खोज
iv. व्यक्ति की रुचि एवं क्षमता के अनुरूप व्यवसाय का चयन
v. आत्म संतुष्टि
vi. संसाधनों का अधिकतम उपयोग
vii. तकनीकी उपयोग
viii. यन्त्रीकरण के कारण अत्यावश्यक
ix. परिस्थिति परिवर्तन में सहायक

व्यक्तिगत भिन्नताओं के अनुसार व्यवसाय के चयन में सहायक (Helpful in selecting occupation according to individual differences)- भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में भिन्न भिन्न प्रकार के व्यक्तिगत गुण पाए जाते हैं, जैसे भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में सहनशीलता, धैर्य, किसी में वाककुशलता, बाहरी आकर्षक व्यक्तित्व आदि। यदि व्यक्ति को उसके व्यक्तिगत गुणों के अनुरूप व्यवसाय चयन में उपयुक्त निर्देशन दिया जाए तो वह अन्य व्यवसायों की अपेक्षाकृत अच्छा प्रदर्शन करेगा। उदाहरण केलिएयदि किसी व्यक्ति में समय प्रबन्धन की क्षमता अच्छी है तो वह किसी भी कम्पनी केलिएअच्छा प्रबन्धक साबित हो सकता है। प्रबन्धक के अन्य गुणों का विकास वह व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा कर लेगा।

व्यवसायों की अनेकरूपता के कारण आवश्यक (Essential due to the versatality of occupation)- तकनीक के विकास के कारण आज व्यवसायों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। आज विशेषीकरण का युग है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में व्यवसायगत बारीकियों के कारण विशेषज्ञता अनिवार्य हो गई है। अतः बिना उपयुक्त व्यावसायिक निर्देशन के अपनी अपेक्षाओं और सामर्थ्य के अनुकूल व्यवसाय का चयन करना असम्भव कार्य है। साथ ही व्यवसाय के चयन के उपरान्त किसी भी व्यवसाय में सफलता केलिएभी व्यावसायिक निर्देशन अत्यावश्यक है।

व्यवसाय एवं व्यक्ति की प्रकृति में समानता की खोज (To Discover the similarity in the nature of man andoccupation)- प्रत्येक व्यवसाय प्रत्येक व्यक्ति केलिएनहीं बना। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि कोई व्यक्ति किसी व्यवसाय विशेष में ही सफल हो सकता है क्योंकि जब तक व्यवसाय एवं व्यक्ति की प्रकृति समान नहीं होगी, तब तक व्यक्ति को सम्बन्धित व्यवसाय में सफलता नहीं मिलेगी। उदाहरण केलिएशिक्षण का व्यवसाय करने वाले व्यक्ति में वाक्तृत्व कला (बोलने की कला) एवं अध्ययनशीलता का गुण होना अनिवार्य है। इसी प्रकार तकनीकी रुचि रखने वाले विद्यार्थी को इंजीनियरिंग का व्यवसाय अपनाना चाहिए। समान प्रकृति के व्यक्ति एवं व्यवसाय को खोजने का काम व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा ही सम्भव है।

व्यक्ति की रुचि एवं क्षमता के अनुरूप व्यवसाय का चयन (Selection of occupation according to the interest and capability of individual) -जैसा कि हम ऊपर भी कह चुके हैं, प्रत्येक व्यक्ति किसी भी व्यवसाय में सफल हो जाए यह आवश्यक नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी रुचि एवं क्षमता के अनुरूप व्यवसाय का चयन करना अनिवार्य होता है। उदाहरण केलिएशिक्षण कार्य (व्यवसाय के लिए) करने वाले व्यक्ति की प्रकृति बहिर्मुखी होनी चाहिए। किन्तु केवल बहिर्मुखी प्रकृति का स्वामी शिक्षण व्यवसाय में सफलता प्राप्त कर ले यह अनिवार्य नहीं है। अपितु उस व्यक्ति में शिक्षक बनने की क्षमता भी होनी चाहिए। इतना ही नहीं शिक्षण व्यवसाय के प्रति रुचि का अभाव भी व्यक्ति को शिक्षण व्यवसाय मे सफल होने से वंचित कर देगा। अतः व्यावसायिक निर्देशन के माध्यम से हमें व्यक्ति को उसकी क्षमता एवं रुचि के अनुरूप व्यवसाय चयन करने का अवसर मिलता है।

आत्म संतुष्टि (Self satisfaction)- युवा वर्ग प्रायः आकर्षक वेतन को आधार बनाकर ही व्यवसाय का चयन कर लेते हैं। निश्चित रूप से वे भरपूर वेतन भी प्राप्त करते हैं। किन्तु अपने व्यवसाय से असंतुष्ट होने के कारण वे कभी भी स्वयं को सुखी अनुभव नहीं करते और अन्ततः अवसाद के शिकार हो जाते हैं। किसी भी व्यवसाय में आर्थिक सम्पन्नता, सामाजिक प्रतिष्ठा एवं संसाधनों की प्रचुरता के साथ-साथ आत्मसंतुष्टि का होना भी अनिवार्य है। यही आत्मसंतुष्टि का भाव अवसाद से हमारी रक्षा करता है। हमे किस व्यवसाय में आत्मसंतुष्टि मिलेगी यह केवल व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा ही सम्भव है।

संसाधनों का अधिकतम उपयोग (Maximum use of resources)- किसी भी व्यवसाय में सफलता का महत्वपूर्ण सूत्र है सीमित संसाधनों का अधिकतम उपयोग करना। किसी भी व्यवसाय में

संसाधनों पर किया गया व्यय बाद में आय का स्रोत बनता है। अतः व्यवसाय विशेष केलिएएकत्र किएगए संसाधन जितने अधिक प्रयुक्त होंगे, उतना ही अधिक लाभ अमुक व्यवसाय से होगा। सीमित संसाधनों के अधिकतम उपयोग की तकनीक व्यावसायिक निर्देशन के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है। समुचित व्यावसायिक निर्देशन प्राप्त व्यक्ति व्यवसाय विशेष के प्रमुख संसाधनों जैसे समय, श्रम, पूंजी, भूमि आदि का अधिकतम उपयोग करना सीख जाता है। इस प्रकार वह अपने व्यवसाय में सफलता प्राप्त करता है।

तकनीकी उपयोग (Technical use)- वर्तमान युग जटिलता एवं प्रतिस्पर्धा का युग है। इस प्रतिस्पर्धात्मक युग में जटिलताओं का एक महत्वपूर्ण कारण तकनीकी विकास भी है।अधिकांश व्यवसाय किसी न किसी तकनीकी से सम्बन्धित होते हैं तथा तकनीकी ज्ञान के अभाव में पिछड़ने का भय सदैव बना रहता है। व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा हम प्रशिक्षणार्थी को तकनीकी ज्ञान उपलब्ध कराते हैं जिससे वह अपने व्यवसाय से सम्बन्धित तकनीकी का अधिकतम एवं समुचित उपयोग कर सके। इस प्रकार व्यावसायिक निर्देशन के माध्यम से तकनीकी का उपयोग एवं तकनीकी ज्ञान के माध्यम से व्यवसाय विशेष में सफलता का मार्ग खुलता है।

यन्त्रीकरण के कारण आवश्यक (Essential due to implementation) -अनेक विद्वानों की मान्यता है कि वर्तमान युग को कलयुग कहने का कारण 'कल' (मशीन अथवा यन्त्र) का अधिकतम उपयोग है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि यह युग मशीनों का युग है। मानव समाज निरन्तर यन्त्रों पर अधिक से अधिक आश्रित होता जा रहा है। हमारी लगभग प्रत्येक क्रिया यन्त्रों के बिना अपेक्षाकृत कठिन प्रतीत होती है। किसी भी दूसरे क्षेत्र की ही भांति व्यावसायिक क्षेत्र में अत्यधिक यन्त्रीकरण हुआ है। विविध यन्त्रों का समुचित उपयोग जाने बिना कोई भी व्यक्ति अपने व्यवसाय में कैसे सफल हो सकता है। व्यावसायिक निर्देशन हमें यन्त्रों का सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त कराता है। व्यावसायिक निर्देशन के माध्यम से हम यन्त्रों का प्रयोग करके सफलता की दिशा में तेजी से आगे बढ़ जाते हैं।

परिस्थिति परिवर्तन में सहायक (Helpful in changing the condition)- एक कहावत है कि मनुष्य परिस्थितियों का दास है। किन्तु व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा इस कहावत को उल्टा किया जा सकता है। व्यावसायिक निर्देशन हमारे अन्दर उस क्षमता का विकास कर देता है कि विपरीत परिस्थितियों को भी हम अपने अनुकूल बना सकते हैं। एक उदाहरण के द्वारा इस तथ्य की पुष्टि की जा सकती है -

एक बार कागज बनाने वाली एक बड़ी कम्पनी में श्रमिकों की गलती के कारण कागज बनाने की सारी प्रक्रिया का पालन न हो सका। भूलवश श्रमिक बने हुए कागज को बिना चिकना किए ही पैक कर गए । विपणन (बिक्री) के लिए पहुंचने पर इस भूल का पता लगा ओर कम्पनी के सामने करोड़ों रुपये के घाटे की समस्या खड़ी हो गई। किन्तु कम्पनी के प्रबन्धक ने विशेषज्ञों से विचार किया और इस समय ब्लाटिंग पेपर (स्याही सोख्ता) अस्तित्व में आया। इस प्रकार व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा हम हानि को लाभ में बदल सकते हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा विपरीत परिस्थितियों को अनुकूल परिस्थितियों में बदला जा सकता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में व्यवसायगत बारीकियों के कारण _____अनिवार्य हो गई है।
2. किसी भी व्यवसाय में सफलता का महत्वपूर्ण सूत्र है सीमित संसाधनों का _____उपयोग करना।
3. इस प्रतिस्पर्धात्मक युग में जटिलताओं का एक महत्वपूर्ण कारण _____विकास भी है।
4. एक कहावत है कि मनुष्य परिस्थितियों का दास है। किन्तु व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा इस कहावत को _____किया जा सकता है।

6.6 व्यावसायिक निर्देशन के उद्देश्य

1. **विद्यार्थी को विभिन्न व्यवसायों से परिचित कराना** –व्यावसायिक निर्देशन का प्रमुख उद्देश्य विद्यार्थी को विभिन्न व्यवसायों से परिचित कराना है। व्यावसायिक निर्देशन विद्यार्थियों को अनेक प्रकार के व्यवसायों से परिचित कराता है जिससे वे अपनी व्यक्तिगत भिन्नता को ध्यान में रखकर व्यवसायों का चुनाव कर सकें ।
2. **विद्यार्थी को विभिन्न व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्रों की जानकारी देना** – निर्देशन के द्वारा विद्यार्थी विभिन्न प्रकार के संस्थानों व प्रशिक्षण केन्द्रों से परिचित होता है जिससे उसे अच्छे प्रशिक्षण केन्द्रों के बारे में जानकारी मिलती है तथा वह उनके गुण-दोषों से परिचित हो पाता है और उपयुक्त प्रशिक्षण संस्थान का चुनाव कर पाता है। किसी भी विद्यार्थी का भविष्य उसके व्यावसायिक प्रशिक्षण पर निर्भर है। यदि वह किसी अच्छे संस्थान से जुड़ता है तो उसकी उपलब्धि एवं प्रदर्शन पर इसका प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है और वह

उज्ज्वल भविष्य की ओर अग्रसर होता है। अतः व्यावसायिक निर्देशन छात्रों के उज्ज्वल भविष्य के लिए अत्यावश्यक है।

3. **विद्यार्थी में व्यवसाय के अनुकूल वैयक्तिक गुणों का विकास करना -**प्रत्येक प्रकार के व्यवसाय के लिए व्यक्ति में कुछ निश्चित वैयक्तिक गुणों का होना आवश्यक है। जैसे:एक कुशल अध्यापक को एक कुशल वक्ता होना जरूरी है। इसी प्रकार एक प्रबन्धक में समय समायोजन की क्षमता होनी चाहिए। व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा व्यक्ति में इन्हीं वैयक्तिक गुणों का विकास किया जाता है।
4. **व्यवसाय चयन के बाद विद्यार्थी में व्यवसाय के साथ अनुकूलता का विकास करना -**व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा व्यवसाय का चयन करने के उपरान्त किसी भी व्यक्ति की सबसे बड़ी अपेक्षा यह होती है कि उसमें वे सभी गुण हों जो व्यवसाय केलिएआवश्यक हैं। यद्यपि किसी भी विद्यार्थी को व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा उसी व्यवसाय का चयन करने की सलाह दी जाती है जिससे सम्बन्धित योग्यतायें या गुण उसमें पहले से ही मौजूद होते हैं। लेकिन यह भी आवश्यक नहीं है कि व्यवसाय से सम्बन्धित प्रत्येक गुण उसमें हो। कुछ गुण उसमें पहले से हो सकते हैं जबकि कुछ का विकास व्यवसायिक निर्देशन के द्वारा करके उसमें व्यवसाय के प्रति अनुकूलता विकसित की जाती है। जैसे - यदि कोई अध्यापक कुशल वक्ता तो है लेकिन वह समय का पाबन्द नहीं है और वह प्रक्रम में समय से नहीं पहुंच पाता तब उसके इस योग्यता और ज्ञान का लाभ तो विद्यार्थियों को नहीं मिल पाता जिसके आधार पर उसका चयन किया गया। तब व्यवसायिक निर्देशन के द्वारा उसमें व्यवसाय के अनुरूप गुणों का विकास किया जाता है।
5. **व्यवसाय के प्रति ईमानदारी, समर्पण एवं रुचि का विकास करना -** व्यवसायिक निर्देशन के द्वारा व्यक्ति में न केवल व्यवसायिक गुणों को विकसित किया जाता है, बल्कि व्यक्ति में व्यवसाय के प्रति ईमानदारी, समर्पण एवं रुचि का भाव भी विकसित किया जाता है क्योंकि इन तीनों के बिना कोई भी व्यक्ति अपने व्यवसायिक क्षेत्र में उच्चतम सीमा पर नहीं पहुंच सकता। जैसे-यदि किसी प्रबन्धक को प्रबन्धन के सभी अंगों- नियोजन, संगठन, प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का तो पूर्णरूपेण ज्ञान है लेकिन जिस कम्पनी में वह कार्य कर रहा है उसकी उन्नति में उसे कोई रुचि नहीं है, उसके प्रति उसमें समर्पण का भाव नहीं है, तो वह अपने इन गुणों का उपयोग उसकी उन्नति में नहीं करेगा और कम्पनी उसके इस कौशल से वंचित रह जाएगी। अतः व्यवसायिक निर्देशन विद्यार्थी में इन सभी भावनाओं का विकास करता है

जिससे प्रत्येक व्यवसाय में प्रत्येक व्यक्ति अपनी सम्पूर्ण क्षमताओं का प्रयोग करके उसे उच्च से उच्चतर क्रम पर ले जाए।

6. **आत्मसंतोष प्राप्त करना-** व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा व्यक्ति में सभी प्रकार के गुणों का विकास होता है। उसमें अनेक प्रकार के व्यावसायिक गुणों का विकास हो जाता है। उसमें सभी प्रकार की व्यावसायिक रुचियों का विकास हो जाता है जिससे वह अपनी सम्पूर्ण क्षमता का प्रयोग करता है और जब वह ऐसा करता है तो उसके अनुकूल परिणाम उसे प्राप्त होते हैं जिससे उसे आत्मसंतोष की प्राप्ति होती है।

6.7 सारांश

शैक्षिक निर्देशन की ही भांति व्यावसायिक निर्देशन भी एक प्रकार का निर्देशन है जो हमें विभिन्न व्यवसायों से परिचित कराता है। व्यवसायों के बारे में जानकारी देना, व्यवसाय का चयन कराना तथा व्यवसाय की प्रगति में आने वाली बाधाओं को दूर करना जिस मार्गदर्शन के द्वारा संभव होता है, मार्गदर्शन का वह प्रकार व्यावसायिक निर्देशन के नाम से जाना जाता है। विभिन्न विद्वानों ने व्यावसायिक निर्देशन की भिन्न-भिन्न परिभाषाएं दी हैं।व्यावसायिक निर्देशन व्यवसाय से सम्बन्धित समस्त प्रकार की समस्याओं का समाधान करने में सहायता करता है। व्यावसायिक निर्देशन हमें अपने स्वभाव के अनुसार व्यवसाय का चयन करने में सहायता करता है। इतना ही नहीं व्यावसायिक निर्देशन हमें अपने व्यवसाय में सन्तुष्ट रहना सिखाता है। व्यावसायिक निर्देशन के द्वारा हम उपलब्ध संसाधनों एवं तकनीकी का उपयोग कर सकते हैं। उदाहरणों ने यह सिद्ध किया है कि व्यावसायिक निर्देशन विपरीत परिस्थितियों को अनुकूल परिस्थितियों में परिवर्तित कर सकता है। व्यावसायिक निर्देशन से हम विभिन्न व्यवसायों की जानकारी प्राप्त करते हैं।विद्यार्थी को व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्रों के बारे में जानकारी देते हैं। व्यावसायिक निर्देशन से हम विद्यार्थी में व्यवसाय के अनुकूल वैयक्तिक गुणों एवं व्यवसाय के साथ अनुकूलता का विकास करते हैं। व्यावसायिक निर्देशन हमें व्यवसाय के प्रति ईमानदारी एवं समर्पण सिखाता है तथा व्यवसाय विशेष में रुचि लेकर आत्मसंतोष प्राप्त करना सिखाता है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि व्यावसायिक निर्देशन व्यावसायिक सफलता के मार्ग में प्रकाश स्तम्भ का कार्य करता है तथा इसके अभाव में हम अंधेरे में चलने का प्रयास करते हैं। फलतः हमारी व्यावसायिक सफलता संदिग्ध हो जाती है।

6.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. विशेषज्ञता
2. अधिकतम
3. तकनीकी
4. उल्टा

6.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. पशरिचा, पी0 (1977), गाइडेन्स एण्ड काउंसलिंग इन इण्डिया, एन0सी0 ई0 आर0 टी0, न्यू दिल्ली।
2. अग्रवाल जे0 सी0 (1989), 'एजुकेशनल वुकेशनल गाइडैन्स एण्ड काउंसलिंग', दुआबा हाउस, दिल्ली।
3. क्रो डी0 एण्ड क्रो (लेटेस्ट् एडीसन), 'एन इन्ट्रोडक्शन टू गाइडेन्स', यूरेशिया पब्लिसिंग हाउस, दिल्ली।
4. आनन्द एस0 पी0 (1994), ए वी सी ऑफ गाइडेन्स इन एडुकेशन, यूनीक पब्लिसर, पठानकोट,।
5. बेंगले,एम0 टी0 (1984), गाइडेन्स एण्ड कान्सिलिंग, सेठ पब्लिसर, बम्बई।

6.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. व्यावसायिक निर्देशन के अर्थ को स्पष्ट करते हुए इसकी परिभाषा बताइए।
2. व्यावसायिकनिर्देशन के महत्व एवं उद्देश्य को समझाइए।

इकाई 7-शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन हेतु आंकड़ों का संकलन-योग्यता, अभिरुचि एवं रुचि

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 आँकड़े क्या हैं?

7.4 आँकड़ों का अर्थ

7.5 आँकड़ों के प्रकार

7.6 प्राथमिक आँकड़ों का संकलन

- 7.6.1 प्रत्यक्ष व्यक्तिगत साक्षात्कार
- 7.6.2 अप्रत्यक्ष व्यक्तिगत प्रश्नोत्तर
- 7.6.3 अन्य स्रोतों से आँकड़ा एकत्रीकरण
- 7.6.4 प्रश्नावली प्रणाली
- 7.6.5 अनुसूची प्रणाली

7.7 द्वितियक आँकड़ों का संकलन

- 7.7.1 द्वितियक आँकड़ों के स्रोत

7.8 शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन की उपयोगिता

7.9 सारांश

7.10 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

7.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

7.12 निबंधात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

पिछले दो अध्यायों में हमने यह जाना कि शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन क्या है? तथा हमें इसकी आवश्यकता क्यों है। शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन के महत्व को भली-भांति समझ लेने पर भी हमारी समस्या का पूर्ण समाधान नहीं होता, क्योंकि अभी तक हमने यह नहीं जाना कि शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन किन-किन रीतियों से प्राप्त-प्रदान किया जा सकता है। शैक्षिक निर्देशन प्रदान करने वाले निर्देशक (काउन्सलर) को किन-किन तथ्यों एवं सूचनाओं की जानकारी होनी चाहिए? काउन्सलर इन तथ्यों को कहाँ से और कैसे प्राप्त करता है तथा प्राप्त किए हुये तथ्यों का संग्रहण कैसे किया जाता है और संग्रहीत तथ्यों एवं सूचनाओं को एक ही दृष्टि में समझने के लिए उनका प्रस्तुतीकरण कैसा होना चाहिए?

शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन चाहे जितना भी महत्वपूर्ण क्यों न हो किन्तु उपरोक्त प्रश्नों के उत्तर प्राप्त किए बिना शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन का लाभ हमें नहीं मिल सकता, अतः सबसे पहले हमें उपरोक्त प्रश्नों के उत्तर खोजने होंगे। इन सभी प्रश्नों के उत्तर यदि हम एक ही वाक्य में देना चाहें तो हम कह सकते हैं कि किसी भी प्रकार का निर्देशन प्रदान करने से पूर्व निर्देशक (काउन्सलर) के पास उस व्यक्ति एवं क्षेत्र (व्यवसाय) के सम्बन्ध में पर्याप्त आँकड़े होने चाहिए, जिनका विश्लेषण करने के बाद निर्देशक (काउन्सलर) निर्देशन प्रदान करता है।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. आँकड़ा किसे कहते हैं?
2. छात्र आंकड़ों के स्वरूप व क्षेत्र से अवगत हो पाएँगे।
3. विद्यार्थी निर्देशन की प्रमुख विधियों से अवगत हो पाएँगे।
4. प्राथमिक व द्वितियक आँकड़ों को प्राप्त करने की विधियों के बारे में जान पाएँगे।
5. काउन्सलर क्या होता है? और उसकी भूमिका व योग्यता के क्या मापदण्ड होते हैं,इत्यादि जानकारी से अवगत हो पाएगा।
6. छात्र अपनी मानसिक योग्यता, बुद्धिलब्धि, रुचि अभिरुचि, व्यक्तित्व जैसे विभिन्न क्षेत्रों का ज्ञान प्राप्त करके उसे भविष्य में अपनी स्मृति में रख पाएँगे।
7. प्राथमिक व द्वितियक आंकड़ों में अन्तर करना सीख जाएँगे।
8. शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन की उपयोगिता को भी जान पाएँगे।

9. योग्यता, रुचि, अभिरुचि, शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन में इसके प्रभाव को जान सकेंगे।
10. इस इकाई के द्वारा छात्र अपने पाठ्य स्तर के शिक्षण बिन्दु में सुधार तो करेंगे ही और साथ ही साथ भविष्य के लिए निर्देशक का मार्गदर्शन कितना उपयोगी है, जानपाएँगे ।
11. निर्देशक छात्र को विभिन्न समस्याओं का निराकरण कैसे करता है, यह जान सकेंगे।
12. रुचि, अभिरुचि, बुद्धि, सृजनात्मकता, व्यक्तित्व, पड़ोस, पारिवारिक पृष्ठभूमि आर्थिक स्तर आदि बालक के मस्तिष्क पर क्या प्रभाव डाल सकते हैं।
13. समय पर शैक्षिक व व्यावसायिक निर्देशन लेकर छात्र स्वयं की उन्नति कैसे कर सकता है।

7.3 आँकड़े क्या हैं

जैसे हमारा कोई भी कार्य बिना उद्देश्य के नहीं होता है वैसे ही प्रत्येक महत्वपूर्ण कार्य के लिए आंकड़ों की आवश्यकता होती है। महत्वपूर्ण ही क्यों, हम अपने जीवन का प्रत्येक सरल से सरल कार्य भी आंकड़ों से सम्पादित करते हैं। अन्तर केवल इतना है कि हमें अपने रोजमर्रा के कार्यों के लिए आंकड़ें को कहीं खोजने नहीं जाना पड़ता अपितु ये आँकड़े हमारे आस-पास ही बिखरे होते हैं।
इस बात को हम एक उदाहरण के माध्यम से और अधिक स्पष्ट कर सकते है। उदाहरण के लिए एक गृहणी भोजन बनाने के लिए प्रयुक्त की जाने वाली सामग्री की मात्रा का निर्धारण भोजन करने वालों को रुचि एंव संख्या, आशा तथा अपेक्षा के आधार पर निर्धारित करती है। अर्थात् भोजन बनाने जैसा साधारण कार्य भी आंकड़ों पर निर्भर करता है। इसी प्रकार एक व्यवसायी अपनी दुकान पर आने वाले ग्राहकों की संख्या व उनकी रुचि आदि को ध्यान में रखकर ही विक्रय हेतु सामान खरीदता है। अधिक दूर क्यों जायें, हमें स्वयं अपनी प्रतिदिन की दिनचर्या में सोकर उठने से लेकर दिन भर के प्रत्येक क्रिया-कलाप आंकड़ों पर ही निर्भर करते हैं और हमारे पास जितने यथार्थ एवं शुद्ध आँकड़े होते हैं उतने ही पूर्ण परिणाम हमें प्राप्त होते हैं।

7.4 आँकड़ों का अर्थ

आँकड़ों को परिभाषित करने के लिए हमें पुनः उदाहरण की सहायता लेनी होगी। एक दिन में 24 घंटे होते हैं। प्रत्येक घंटे में 60 मिनट तथा प्रत्येक मिनट में 60 सेकन्ड होते हैं। जब समय का यह विभाजन तथा किसी कार्य विशेष में लगने वाले निश्चित समय का अनुमान लगाने के लिए हम अपने पूर्व के अनुभवों अथवा अनुमान को संख्या के रूप में प्रयुक्त करते हैं, तो यह संख्या आँकड़ा कहलाती है।

एक और उदाहरण से हम आँकड़ों को परिभाषित करने का प्रयास करेंगे। मोहन का घर सोहन के घर से 2 किलोमीटर दूर है तथा मोहन को सोहन के घर पहुंचने में आधा घंटा लगता है। अब यदि सोहन को रमेश के घर जाना हो, जो कि उसके घर से एक किलोमीटर दूर है तो हम अनुमान लगा कर कह सकते हैं कि उसे रमेश के घर पहुंचने में 15 मिनट लगेंगे। उक्त उदाहरण में 2 किलोमीटर, आधा घंटा आदि संख्याएं भविष्य के हमारे अनुमान के लिए आँकड़ों का काम करती हैं। अतः हम आँकड़ों की परिभाषा देते हुये कह सकते हैं- ''वे संख्याएं जो हमें किसी कार्य विशेष का अध्ययन करने के परिणामस्वरूप प्राप्त होती हैं तथा जिसका उपयोग हम भविष्य में किए जाने वाले अध्ययन के लिए करते हैं, वे आँकड़े कहलाते हैं।''

7.5 आँकड़ों के प्रकार

आँकड़ा शब्द को परिभाषित करने के पश्चात हमें यह जानना जरूरी है कि निर्देशन के लिए हमें किस प्रकार के आँकड़ों की आवश्यकता है।आँकड़े दो प्रकार के होते हैं:-

i. प्राथमिक आँकड़े
ii. द्वितियक आँकड़े

1. **प्राथमिक आँकड़े**- प्राथमिक आँकड़े वे आँकड़े कहलाते हैं जो निर्देशक (काउन्सलर) द्वारा अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मौलिक रूप से स्वयं एकत्रित किए जाते हैं। जैसे - यदि कोई काउन्सलर किसी निर्देशन कार्य हेतु निर्देशन प्राप्तकर्ता के लिए अभिरुचि परीक्षण तैयार करके आँकड़े एकत्र करता है तब ये आँकड़े प्राथमिक आँकड़े कहलायेंगे।
2. **द्वितियक आँकड़े**-द्वितियक आँकड़े वह आँकड़े होते हैं जो किसी न किसी रूप में पहले से ही उपलब्ध होते हैं तथा काउन्सलर अपनी आवश्यकतानुसार उन आँकड़ों को खोजकर उनका प्रयोग अपनी आवश्यकताओं के अनुसार कर लेता है। जैसे - व्यावसायिक निर्देशन प्रदान करने के लिए यदि काउन्सलर को प्रयोज्य की विषय विशेष में शैक्षिक परिलब्धि क्या है, यह जानने की आवश्यकता है तो वह प्रयोज्य के शैक्षणिक अभिलेखों से इस प्रकार के आँकड़े प्राप्त करके उनका उपयोग कर सकता है।

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि प्राथमिक आँकड़े सर्वथा मौलिक एवं नये होते हैं जबकि द्वितियक आँकड़े इससे पूर्व भी किसी न किसी रूप में उपयोग किए जा चुके होते हैं।

7.6 प्राथमिक आँकड़ों का संकलन

काउन्सलर द्वारा प्रयोज्य को निर्देशन देने से पूर्व प्राथमिक आँकड़ों का संकलन अनेक रीतियों से किया जा सकता है। इनमें से कुछ प्रमुख रीतियों की चर्चा हम यहां संक्षेप में करेंगे।

7.6.1 प्रत्यक्ष व्यक्तिगत साक्षात्कार

जब काउन्सलर प्रयोज्य से प्रत्यक्ष सम्पर्क करके विशेष सन्दर्भ में सीधे सूचनाएं एकत्र करता है, तब यह विधि प्रत्यक्ष व्यक्तिगत साक्षात्कार के अन्तर्गत आती है। इस विधि के अन्तर्गत प्रयोज्य के सन्दर्भ में सभी जानकारी सीधे प्राप्त की जाती हैं।

इस विधि का प्रयोग करते समय काउन्सलर को बहुत तेज़ (कुशाग्र) बुद्धि का एवं सावधान होना चाहिए। प्रायः प्रयोज्य के व्यक्तिगत अनुभवों , जीवन शैली, पारिवारिक पृष्ठभूमि, रुचि, अरुचि आदि से सम्बन्धित आँकड़े एकत्र करते समय इस प्रणाली का प्रयोग किया जा सकता है। यद्यपि यह प्रणाली समय की दृष्टि से खर्चीली है एवं कभी-कभी काउन्सलर के द्वारा निकाले गए निष्कर्ष भ्रामक भी हो सकते हैं, तथापि यह प्रणाली व्यक्तिगत सूचनाओं को प्राप्त करने के लिए सर्वाधिक सार्थक प्रणाली है। स्वयं में अपूर्ण होते हुये भी इस प्रणाली की उपयोगिता को नकारा नहीं जा सकता।

7.6.2 अप्रत्यक्ष व्यक्तिगत प्रश्नोत्तर

इस प्रणाली के अन्तर्गत काउन्सलर अपने प्रयोज्य से पूछे जाने वाले प्रश्नों को सीधे न पूछकर घुमा-फिरा कर पूछता है, इसलिए इसे हम अप्रत्यक्ष व्यक्तिगत प्रश्नोत्तर प्रणाली कहते हैं। इस प्रणाली के द्वारा प्रयोज्य से वह आँकड़े भी प्राप्त कर लिए जाते हैं जिनकी सूचना प्रयोज्य देना ही नहीं चाहता। यद्यपि यह प्रणाली भी समय की दृष्टि से खर्चीली है तथा इससे प्राप्त आँकड़ों की शुद्धता की भी कोई गारन्टी नहीं है तथापि यह प्रणाली काउन्सलर को वह आँकड़े एकत्र करने में मदद करती है जो आँकड़े प्रयोज्य व्यक्तिगत कारणों से काउन्सलर के सम्मुख अभिव्यक्त नहीं करना चाहता।

7.6.3 अन्य स्रोतों से आँकड़ों का एकत्रीकरण

इस प्रणाली के अन्तर्गत प्रयोज्य से सम्बन्धित लोगों के पास जाकर काउन्सलर जानकारी एकत्र करता है। इसके लिए वह प्रयोज्य के माता-पिता, परिवारीजन, मित्र, सहपाठी, सहकर्मी, पड़ोसी तथा अध्यापिकाओं व अध्यापकों आदि से सम्पर्क स्थापित करता है। इसीलिए इस प्रणाली को अन्य स्रोतों से प्राप्त आँकड़ा एकत्रीकरण प्रणाली कहा जा सकता है।

यद्यपि यह प्रणाली भी पूर्व में वर्णित प्रणालियों की भांति समय की दृष्टि से अपव्ययी है तथा इसकी विश्वसनीयता भी कम होती है, तथापि इस प्रणाली के द्वारा प्राप्त आँकड़े निर्देशन कार्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

7.6.4 प्रश्नावली प्रणाली

इस प्रणाली के अन्तर्गत काउन्सलर द्वारा प्रयोज्य की समस्या से सम्बधित प्रश्नों की कड़ी या माला तैयार कर ली जाती है जिसमें एक फार्म के सहारे प्रश्नों के उत्तर दिए जाते हैं जिसे प्रयोज्य स्वयं भरते हैं। जैसे यदि प्रभुत्व जैसे व्यक्तित्व, शीलगुण की माप करने के लिए हम कुछ प्रश्नों की तैयारी करते हैं तो इस पद्धति को हम प्रश्नावली प्रणाली कहेंगे।

इन प्रश्नों के क्रम का निर्धारण प्रयोज्य की अनिवार्यताओं के आधार पर होता है। इन प्रश्नों के आधार पर जो आँकड़े मिलते हैं वह आँकड़े विश्वसनीयता, शुद्धता के प्रतीक होते हैं और इसी शुद्धता और विश्वसनीयता की प्रतीक प्रश्नावली को दो कसौटियों पर विभिन्न भागों में बांटा गया है:-

1. प्रश्नावली को एकांशों के आधार पर हम इसके और दो भागों में बांट सकते है:-
    a. निश्चित या सीमित एकांश वाली प्रश्नावली
    b. विस्तृत एकांश वाली प्रश्नावली
2. क्रियान्वयन के तरीकों के आधार पर हम गौर करें तो भी इसको दो भागों में बांट सकते हैं:-
    a. आमने-सामने क्रियान्वित प्रश्नावली
    b. डाक प्रश्नावली इत्यादि

यद्यपि ये प्रणाली भी पूर्व में वर्णित प्रणालियों की भांति समय तथा वैज्ञानिक ढंग से वर्गीकृत करके उससे एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचाने में पूर्णतः सक्षम नहीं है।

7.6.5 अनुसूची प्रणाली

प्रश्नावली के समान अनुसूची में भी प्रश्नों की एक सूची होती है। इन प्रश्नों को काउन्सलर प्रयोज्य को पढ़कर सुनाता है और प्रयोज्य सुनकर उसका उत्तर देता है तथा काउन्सलर प्रयोज्य से प्राप्त उत्तरों से सम्बन्धित आँकड़े स्वयं लिखता है।

अनुसूची स्वरूप के आधार पर हमें जो तथ्य मिलते हैं उसे हम इस प्रकार बता सकते हैं-

1. अनुसूची में प्रश्नों की सूची होती है।
2. इसमें निर्देशक प्रश्नों को स्वयं पढ़कर उन्हें सुनाता है।
3. इसमें निर्देशक की योग्यता इस बात पर निर्भर करती है कि उसने प्रश्नों का क्रम किस प्रकार लिखना है। अगर हम अनुसूची की बात करें तो इसके दो भाग प्रमुख हैं:-

i. प्रेक्षण अनुसूची या रेटिंग अनुसूची

ii. संस्थागत सर्वे अनुसूची तथा साक्षात्कार अनुसूची इत्यादि।

अनुसूची प्रणाली में प्रयोज्य द्वारा दिए गए उत्तरों को निर्देशक द्वारा स्वयं लिखा जाता है। अतः उसमें किसी प्रकार की त्रुटि होने की सम्भावना नहीं होती। इसका परिणाम यह होता है कि प्रयोज्यों द्वारा संग्रह किए गएआँकड़ों की विश्वसनीयता बढ़ जाती है। यद्यपि यह प्रणाली भी पूर्व में वर्णित प्रणालियों की भांति समय की दृष्टि से अपव्ययी है तथापि इस प्रणाली के द्वारा प्राप्त आँकड़े महत्वपूर्ण होते हैं।

स्वमूल्यांकनहेतु प्रश्न

1. काउन्सलर अपने प्रयोज्य से पूछे जाने वाले प्रश्नों को सीधे न पूछकर घुमा-फिरा कर _____ में पूछता है।
2. अनुसूची प्रणाली में प्रश्नावली के समान अनुसूची में भी प्रश्नों की एक सूची होती है। इन प्रश्नों को काउन्सलर _____को पढ़कर सुनाता है
3. अनुसूची प्रणाली में प्रयोज्य द्वारा दिए गए उत्तरों को _____द्वारा स्वयं लिखा जाता है।

7.7 द्वितियक आँकड़ों का संकलन

द्वितीयक प्रकार के आँकड़ों के संकलन में काउन्सलर को विशेष परिश्रम की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि द्वितियक प्रकार के आँकड़े पहले से ही उपलब्ध रहते हैं। काउन्सलर के द्वारा अपनी आवश्यकता के अनुसार उनका उपयोग कर लिया जाता है। यहां पर हम द्वितियक आँकड़ों के कुछ महत्वपूर्ण स्रोतो की चर्चा करेंगे जिससे द्वितियक आँकड़ों के बारे में आप और अधिक समझ जाएंगे।

7.7.1 द्वितियक आँकड़ों के स्रोत

द्वितियक आँकड़ों के प्रमुख स्रोत इस प्रकार हैं:-

1. **परीक्षा परिणाम-** द्वितियक आँकड़ों में परीक्षा परिणाम भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं क्योंकि इसमें काउन्सलर को प्रयोज्य की विषय विशेष में शैक्षिक उपलब्धि का क्या स्तर है, यह जांच कर निर्देशक या काउन्सलर आँकड़े एकत्रित करता है तथा जो आँकड़े उसने प्रयोज्य के सम्बन्ध में एकत्रित किए हैं उनका भविष्य में क्या उपयोग व लाभ कैसे प्रयोज्य को पहुंचाया जा सकता है तथा यह भी निर्धारित करता है कि किसी कठिन विषय के चयन के पश्चात यह देखना कि वह प्रयोज्य कितना निपुण है, क्या वह इस पाठ्यक्रम में कुशलता हासिल कर

पाएगा, ये सब बिन्दु भी परीक्षा परिणाम या अंक पत्र द्वारा दर्शाये जाते हैं। परीक्षा परिणाम द्वितियक आँकड़े इसलिए भी होते हैं क्योंकि इससे विद्यालय की शैक्षिक स्थिति, परीक्षा परिणाम का प्रतिशत क्या है, सम्बन्धी आँकड़ों का ज्ञान कराना तथा इन आँकड़ों को कभी भी दूसरी जानकारियों के सम्बन्ध में आँकड़े एकत्रित किए जा सकते हैं।

2. **पूर्व में किए गए रुचि व अभिरुचि परीक्षण**- रुचियां मानव व्यक्तित्व की एक महत्वपूर्ण इकाई है। शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन के कार्यों में रुचियों का महत्वपूर्ण स्थान स्वीकार किया जाता है। रुचियां व्यक्ति की सुखद अनुभूतियों तथा लगाव को इंगित करती हैं। निर्देशक या काउन्सलर यह देखता है कि प्रयोज्य की परिपक्वता तथा अनुभव के साथ-साथ रुचियों में भी परिवर्तन होता रहता है।

   काउन्सलर प्रयोज्य की रुचियों को चार भागों में बांट सकता है:-

   i. अभिव्यक्त रुचियां
   ii. प्रदर्शित रुचियां (दिन प्रतिदिन के व्यवहार से सम्बन्धित होती हैं)
   iii. आंकलित रुचियां (परीक्षणों द्वारा आंकलित ज्ञान प्राप्त करना)
   iv. सूचित रुचियां

द्वितियक प्रणाली के अन्तर्गत काउन्सलर प्रयोज्य की रुचियों के मापन के लिए अवलोकन, साक्षात्कार, प्रश्नावली उपलब्धि परीक्षण तथा रुचि सूचियों का भी प्रयोग कर सकता है। लेकिन कभी-कभी इनसे अवलोकन द्वारा प्राप्त आँकड़े पूर्णतः सत्य नहीं होते हैं।

3. **बुद्धिलब्धि परीक्षण**

   बुद्धि परीक्षण का निर्माण भी चार सोपानों के अन्तर्गत किया जाता है। ये इस प्रकार हैं:-

   i. परीक्षण की योजना बनाना
   ii. प्रश्न तैयार करना
   iii. प्रश्नों को छांटना
   iv. परीक्षण का मूल्यांकन करना

परीक्षण निर्माण के अंतिम सोपान में काउन्सलर परीक्षण की विश्वसनीयता एवं वैधता ज्ञात करता है तथा इसके बाद काउन्सलर प्रयोज्यों द्वारा प्राप्त मानकों की गणना करता है और इसी चरण में परीक्षण निर्देशिका या रिपोर्ट भी तैयार की जाती है।

बुद्धि मापन के लिए प्रायः बुद्धिलब्धि ज्ञात की जाती है जो मानसिक आयु को वास्तविक आयु से भाग देकर तथा 100 से गुणा करके प्राप्त होता है। यदि बुद्धिलब्धि का मान 100 होता है तो व्यक्ति को

सामान्य बुद्धि वाला, 100 से कम व अधिक होने पर क्रमशः कम बुद्धि वाला या अधिक बुद्धि वाला प्रयोज्य कह सकते हैं। बुद्धिलब्धि का सूत्र इस प्रकार है:-

बुद्धिलब्धि =(मानसिक आयु / वास्तविक आयु) × 100

उदाहरण केलिएछात्र की मानसिक आयु 12 वर्ष है और वास्तविक आयु 10 वर्ष है तो उसकी बुद्धिलब्धि निम्नलिखित प्रकार से निकाली जाएगी:-

बुद्धिलब्धि = (12 / 10) × 100

बुद्धिलब्धि = 120

टरमन के अध्ययन के आधार पर बुद्धि का वर्गीकरण किया गया जिसे डा0 मैरिल ने निम्न प्रकार स्वीकृत और मान्य किया:-

बुद्धिलब्धि	बुद्धि के प्रकार
140-169	अत्युत्कृष्ट
120-139	उत्कृष्ट
110-119	सामान्य से ऊपर
90-109	सामान्य
80-89	सामान्य से नीचे
70-79	हीन बुद्धि की सीमा रेखा
60-69	महामूर्ख
50-59	मूर्ख
25-49	मूढ़
0-24	जड़

काउन्सलर को बुद्धि परीक्षण के मापन के लिए विभिन्न कार्यों के प्रकार को जानना आवश्यक है:-

i. सूचना कार्य
ii. शाब्दिक कार्य
iii. चिन्तन कार्य
iv. आंकिक कार्य

बुद्धि परीक्षणों के परिणाम प्राप्तांकों के रूप में प्राप्त होते हैं। बुद्धिलब्धि परीक्षणों का प्रयोग काउन्सलरों द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में प्रचुरता से उपयोग किया जाता है। शैक्षिक, व्यावसायिक निर्देशन

तथा व्यावसायिक क्षेत्रों में बुद्धि परीक्षणों का महत्वपूर्ण उपयोग है। भारत तथा विदेशों में अनेक बुद्धिपरीक्षण सम्बन्धी प्रश्न तैयार किएगए हैं।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. रुचियां मानव व्यक्तित्व की एक महत्वपूर्ण इकाई है। शैक्षिक तथा व्यावसायिक _____ के कार्यों में रुचियों का महत्वपूर्ण स्थान स्वीकार किया जाता है।
2. बुद्धि मापन के लिए _____ ज्ञात की जाती है जो मानसिक आयु को वास्तविक आयु से भाग देकर तथा 100 से गुणा करके प्राप्त होता है।
3. शैक्षिक, व्यावसायिक निर्देशन तथा व्यावसायिक क्षेत्रों में _____ का महत्वपूर्ण उपयोग है।

7.8 शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन की उपयोगिता

1. शैक्षिक निर्देशन ,निर्देशन का वह महत्वपूर्ण प्रकार है जो व्यावसायिक एवं व्यक्तिगत निर्देशन की सीमाओं को भी स्पर्श करता हुआ चलता है।
2. शैक्षिक निर्देशन बालक के विकास अथवा शिक्षा हेतु अनुकूल परिस्थितियां उत्पन्न करने के लिए छात्र के विभिन्न गुणों एवं विकास के अवसरों के विभिन्न समूहों के बीच सम्बन्ध स्थापित करने वाला उपक्रम है।
3. प्रमुखतः विकल्पों के वरण के समय शैक्षिक स्तरों पर अपेक्षित प्रगति न कर सकने के समय अवांछनीय आदतें बन जाने पर या समायोजन में कठिनाई आने पर शैक्षिक निर्देशन आवश्यक हो जाता है।
4. किण्डरगार्टन विद्यालयों से लेकर उच्च शैक्षिक संस्थाओं के स्तरों तक छात्रों की समुचित शैक्षिक प्रगति के लिए निर्देशन की व्यवस्था आवश्यक है।

7.9 सारांश

इसी सन्दर्भ में यदि यह कहा जाए कि सभी व्यक्ति समान होते तो सामान्य अथवा व्यावसायिक निर्देशन की आवश्यकता ही नहीं पड़ती।वैयक्तिक भिन्नताओं के अतिरिक्त व्यावसायिक निर्देशन का दूसरा आधार व्यवसायों की अनेकरूपता है। स्कूल शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर शैक्षिक निर्देशन बिना विद्यालय के सहयोग से व्यावसायिक निर्देशन की सफलता संदिग्ध है। कार्यों के प्रति उन्मुख करने का

कार्य प्राथमिक स्तर से ही किया जाना चाहिए।प्राथमिक स्तर पर आठवीं कक्षा व्यावसायिक निर्देशन की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। इसे 'डेल्टा' कक्षा भी कहते हैं। शिक्षा के उच्च स्तरों पर व्यावसायिक निर्देशन का कार्य छात्र की योग्यता, रुचि, अभिरुचि के अनुरूप उपलब्ध अवसरों तथा कार्यक्षेत्रों के विषय में व्यापक जानकारी प्रदान करना।उच्च सेवाओं के लिए होने वाली प्रतियोगिताओं एवं तत्सम्बन्धी प्रशिक्षण के विषय में परिचित कराना भी व्यावसायिक निर्देशन का कार्य है। इसके अतिरिक्त भी औपचारिक व अनौपचारिक रूप से भी शैक्षिक व व्यावसायिक निर्देशन काउन्सलर द्वारा दिया जाता है।

इस विषय में निर्देशक (काउन्सलर) प्रयोज्य के विषय सम्बन्धी पहलुओं का अध्ययन सम्बन्धी जानकारी व प्राथमिक व द्वितियक आंकड़ों के द्वारा प्राप्त करता है और इस अध्ययन में वह विभिन्न रीतियों का आश्रय लेता है। इसमें शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन में काउन्सलर की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वह प्राथमिक व द्वितियक आंकड़ों के संकलन सम्बन्धी स्रोतों का पता लगा कर विभिन्न आँकड़े एकत्रित करता है। तभी वह प्रयोज्य से सम्बन्धित सभी समस्याओं के निराकरण हेतु सही मार्गदर्शन दे पाएगा तथा प्रयोज्य के भावी जीवन को सही आधारशिला प्रदान कर पाएगा जिससे उसका सम्पूर्ण विकास सम्भव हो सके।

7.10 स्वमूल्यांकन प्रश्नों के उत्तर

1. अप्रत्यक्ष व्यक्तिगत प्रश्नोत्तर प्रणाली
2. प्रयोज्य
3. निर्देशक
4. निर्देशन
5. बुद्धिलब्धि
6. बुद्धि परीक्षणों

7.11संदर्भ ग्रंथ सूची

1. पशारिचा, पी0 (1977), गाइडेन्स एण्ड काउंसलिंग इन इण्डिया, एन0सी0 ई0 आर0 टी0, न्यू दिल्ली।
2. अग्रवाल जे0 सी0 (1989), 'एजुकेशनल वुकेशनल गाइडैन्स एण्ड काउंसलिंग', दुआबा हाउस, दिल्ली।

3. क्रो डी0 एण्ड क्रो (लेटेस्ट् एडीसन), 'एन इन्ट्रोडक्शन टू गाइडेन्स', यूरेशिया पब्लिसिंग हाउस, दिल्ली।
4. आनन्द एस0 पी0 (1994), ए वी सी ऑफ गाइडेन्स इन एडुकेशन, यूनीक पब्लिसर, पठानकोट, ।

7.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. आँकड़े क्या होते हैं? प्राथमिक व द्वितियक आंकड़ों को परिभाषित कीजिए।
2. प्राथमिक व द्वितियक आँकड़े एकत्रित करने में निर्देशक या काउन्सलर की भूमिका बताइए।
3. बुद्धिलब्धिसे आप क्या समझते हैं?

इकाई 8- परामर्श का अर्थ, आवश्यकता, प्रक्रिया और परामर्श के प्रकार

8.1 प्रस्तावना
8.2 उद्देश्य
8.3 परामर्श- अर्थ, परिभाषाएं,
8.4 परामर्श की आवश्यकता और महत्व
8.4.1 मनोवैज्ञानिक कारण
8.4.2 सामाजिक कारण
8.5 परामर्श के क्षेत्र
8.6 परामर्श की प्रक्रिया
8.6.1 परामर्श की प्रक्रिया के घटक
8.6.2 परामर्श की प्रक्रिया के चरण
8.7 परामर्श के प्रकार
8.7.1 निदेशात्मक परामर्श
8.7.2 अनिर्देशिक परामर्श
8.7.3 समझौतावादी परामर्श
8.8 सारांश
8.9 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
8.10 संदर्भ ग्रंथ सूची
8.11 निबंधात्मक प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

बढ़ती हुई जनसंख्या, विज्ञान और तकनीकी के कारण, नित् हो रहे परिवर्तनों के फलस्वरूप व्यक्ति को अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। इन समस्याओं के समाधान के साथ ही वह जीवन में आगे बढ़ता है। समस्या समाधान की इस प्रक्रिया में समुचित मार्गदर्शन प्राप्त करना सदैव से एक स्वाभाविक प्रक्रिया रही, जिसमें वयस्क तथा परिपक्व व्यक्तियों द्वारा अपेक्षाकृत

अपरिपक्व व्यक्तियों केलिएनिर्देशक की भूमिका निभाई जाती रही है। समस्या समाधान हेतु सहायता प्रदान की दिशा में निर्देशन प्रक्रिया की भूमिका अहम् महत्व रखती है। जिसमें विभिन्न सेवाओं का संगठन किया जाता है। इनमें से परामर्श सेवा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है। प्राचीन समय से ही व्यक्ति अथवा छात्र को परामर्श सेवा की आवश्यकता रही है। लेकिन पिछले 30 वर्षो में आए बदलावों के कारण केवल छात्रों को ही नहीं अपितु प्रत्येक व्यक्ति को अपनी समस्याओं के समाधान केलिएकुशल, योग्य एवं प्रशिक्षित विशेषज्ञों की आवश्यकता पड़ रही है।

प्रस्तुत इकाई परामर्श के अर्थ, प्रक्रिया तथा परामर्श के विभिन्न प्रकारों से सम्बन्धित है। परामर्श का सीधा सम्बन्ध छात्रों, शिक्षकों, प्रबन्धकों और अभिभावकों से है। वर्तमान में परामर्श सेवा व्यक्ति अथवा छात्र केंद्रित है।

परामर्श सहायता प्रदान करने वाली प्रक्रिया है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति स्वंय की खुशी और समाज के विकास में योगदान करने केलिएअपनी क्षमताओं का आंकलन कर, कुशलताओं को विकसित करता है। परामर्श का परम् उद्देश्य व्यक्ति की समस्याओं का समाधान करने में सहायता देना है।प्रस्तुत इकाई में आप परामर्श का अर्थ क्या है?उसकी प्रकृति कैसी है? वह क्यों आवश्यक है? परामर्श प्रक्रिया के विभिन्न चरण कौन से हैं ?तथा परामर्श कितने प्रकार का है?उसका अध्ययन करेंगे।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1. परामर्श के अर्थ को समझ सकेंगे।
2. परामर्श की आवश्यकता का वर्णन कर सकेंगे।
3. परामर्श की प्रक्रिया का विश्लेषण कर सकेंगे।
4. परामर्श के विभिन्न प्रकारों से अवगत हो सकेंगे।

8.3 परामर्श: अर्थ, परिभाषाएँ तथा उद्देश्य

परामर्श का अर्थ

सामान्यतः परामर्श शब्द का अर्थ किसी एक व्यक्ति के जीवन के विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित समस्याओं के समाधान हेतु किएगए प्रयासों की तकनीक से लगाया जाता है। यहां हम परामर्श के प्रत्यय और उसके अर्थ को विद्यालीय परिदर्शन में समझने का प्रयास करेंगे।

'उतरा' गॉव की रहने वाली एक मेधावी छात्रा है। जिसने इस वर्ष ही हाईस्कूल परीक्षा उतीर्ण की है। आस-पास कहीं भी आगे पढाई जारी रखने केलिएविद्यालय नहीं है। उतरा और उसके माता-पिता को इस बात की चिन्ता है कि उसे कब, कहॉ और कैसे विद्यालय में प्रवेश मिलेगा। स्वयं उतरा भी एक निर्णय नहीं कर पा रही है कि उसे 11वीं में क्या-क्या विषय लेने चाहिए। क्या चुने हुये विषय भावी जीवन केलिएव्यवसाय के चयन में सहायक होंगे या नहीं।

इस प्रकार की कई समस्याएं उतरा के सामने हैं। लगातार उसके मन में योग्यताओं और महत्वाकांक्षा के बीच संघर्ष चल रहा है। वर्तमान में व्यावसायिक अनिश्चितता और उतरा की शैक्षिक आकांक्षाओं की पूर्ति करने हेतु विद्यालयों में परामर्श सेवाओं की नितान्त आवश्यकता है।

परामर्श की परिभाषाएं

निर्देशन कार्यक्रम के अन्तर्गत सबसे महत्वपूर्ण स्थान परामर्श सेवा का है। परामर्श एक प्रकिया है जिसमें एक विशेषज्ञ द्वारा, व्यक्ति को समस्या समाधान हेतु आवश्यक सहायता प्रदान की जाती है।

वैबस्टर शब्दकोश (Webster Dictionary)के अनुसार- परामर्श का अर्थ 'सलाह करना परस्पर विचारों का आदान-प्रदान और मिलकर साथ सोचना है'।

कार्ल रोजर्स (Carl Rogers) के अनुसार- 'परामर्श एक निश्चित रूप से स्वीकृत सम्बन्ध है जो परामर्शी को उस मात्रा में स्वयं समझने में सहायता प्रदान करता है, जिससे उसका अधिक से अधिक विकास हो सके'।

क्रुमबोल्ट्स (Krumboltz)के अनुसार- 'परामर्श ऐसा प्रयास है जिसके द्वारा सेवार्थी को ऐसे कार्यों में व्यस्त कर दिया जाता है जो उसे समस्या के समाधान की तरफ ले जाते हैं'।

विद्वानों ने परामर्श की कई परिभाषाएं दी हैं जिनके आधार पर संक्षेप में परामर्श-

1. एक सतत् प्रक्रिया है।
2. परामर्शी (छात्र) और परामर्शदाता के मध्य अन्तक्रियात्मक सम्बन्ध है।
3. परामर्श, का मुख्य उद्देश्य परामर्शी को सहायता प्रदान करना है।
4. समायोजन की प्रक्रिया है।
5. परामर्शन का स्वरूप विकासात्मक, निरोधात्मक तथा उपचारात्मक होता है।
6. यह एक विशिष्ट तकनीकी सेवा है।

ध्यान रखें परामर्श नहीं है -

1. निर्देश देना
2. सलाह देना
3. आलोचना करना
4. प्रशंसा करना
5. विचारों को थोपना
6. नैतिकता का पाठ
7. व्याख्यान देना

परामर्श के उद्देश्य

ब्याय एवं पाइन (Boy & Pine)के अनुसार- परामर्श का उद्देश्य है- विद्यार्थी को और परिपक्व बनाने में सहायता प्रदान करना, स्वयं सक्रिय बनने और स्वयं के सही मूल्यांकन कर सकने में सहायता देना है।

लियाना टेलर (Liana Taylor)के अनुसार- "परामर्श का उद्देश्य व्यक्ति को परिवर्तित करना नहीं है वरन् उसको उन स्रोतों के उपयोग में सक्षम बनाना है जो उसके पास इस समय जीवन का सामना करने हेतु उपलब्ध है।"

रोलो मे (Rollo May) के अनुसार- "परामर्श का उद्देश्य परामर्श प्रार्थी (परामर्श लेने वाला) का सामाजिक दायित्वों को स्वीकार करने में सहायता देना तथा उसे साहस देना जिससे उसमें हीन भावना का उदय न हो।"

संक्षेप में परामर्श के उद्देश्य निम्न हैं-

1. व्यक्ति को स्वयं के वास्तविक स्वरूप, को पहचानने में सहायता प्रदान करना
2. व्यक्तित्व विकास करना
3. आत्म-ज्ञान और आत्म-स्वीकृति का विकास करना
4. विभिन्न मानसिक और सांवेगिक समस्याओं से सुरक्षा प्रदान करना
5. मानसिक स्वास्थ्य को सामान्य बनाना
6. वैयक्तिक क्षमताओं का विकास करना

7. समस्याओं का समाधान करना
8. निर्णय लेने की क्षमता का विकास करना
9. सामाजिक सामंजस्य का विकास करना

8.4 परामर्श की आवश्यकता और महत्व

बढती हुई जनसंख्या, विज्ञान और तकनीकी के कारण तेजी से हो रहे परिवर्तनों के फलस्वरूप मानव जीवन कठिन होता जा रहा है और उसे जीवन के हर मोड़ पर परामर्श की आवश्यकता है। रूचियां, अभिक्षमतायें, अभिवृतियां, व्यक्तित्व, सामाजिक, वृतिक और पारिवारिक दशायें कभी भी दो व्यक्तियों की एक जैसी नहीं होती हैं। वैयक्तिक विभिन्नताओं, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक कारणों से वह विभिन्न परिस्थितियों के साथ समायोजन करने में असहाय महसूस करता है। अतः परामर्श सेवा कई कारणों से आवश्यक हो गई है।

यहां हम निम्न उदाहरणों के माध्यम से परामर्श की आवश्यकता एवं महत्व को जानने का प्रयास करेंगे।

उदाहरण 1-एक व्यक्ति अपने विद्यार्थी जीवन में कुशल खिलाड़ी था। उसने कई बार अपने विद्यालय का नेतृत्व किया। उसकेलिएबहुत अच्छा होता कि उसे ऐसी नौकरी मिलती जिसमें वह एक जगह न बैठता और जहॉप्रेरणा, साहस, धैर्य, नेतृत्व आदि कुशल खिलाड़ी के गुणों की आवश्यकता होती। परन्तु वह वर्तमान में इस तरह की नौकरी नहीं करता है। उसके कार्यस्थल की परिस्थितियां बिल्कुल अलग हैं, जिससे वह अक्सर चिड़चिड़ा हो गया और उसका काम में मन नहीं लगता तथा अनेक व्यक्तिगत समस्याओं से घिर गया है। उपरोक्त उदाहरण से स्पष्ट है कि यह सब जीवन में उचित व्यावसायिक परामर्श न मिलने के कारण हुआ।

उदाहरण 2-एक छात्र स्कूल से भाग जाता है, इधर-उधर अवारागर्दी करता है, नाना प्रकार के अपराधों में पड़ गया है। स्कूल में उसका मन नहीं लगता है। वह घर में झूठ बोलता है। इन सब समस्याओं का कारण यह भी हो सकता है कि उसने पाठयक्रम का चुनाव ठीक ढंग से नहीं किया है।

यहां वर्णित उदाहरणों से स्पष्ट है कि इस प्रकार की समस्याओं का निवारण सही समय पर उचित परामर्श प्राप्त कर किया जा सकता है।इन्ही कारणों को ध्यान में रखकर मुख्यतः परामर्श सेवा की आवश्यकता को दो भागों में बाँटा गया हैं।

1. मनोवैज्ञानिक कारण
2. सामाजिक कारण

8.4.1 मनोवैज्ञानिक कारण

1. **विकास की विभिन्न अवस्थाएं-** जन्म से लेकर मृत्यु तक मनुष्य विकास की विभिन्न अवस्थाओं-शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था और प्रौढ़ावस्था से गुजरता है। प्रत्येक अवस्था में व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक और सामाजिक विकास की दशायें भिन्न-भिन्न होती हैं और उसे अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। उदाहरणस्वरूप यौन शिक्षा के अभाव, व्यवसायों के चयन, आत्मबोध, शारीरिक बनावट आदि कारणों से वह तनाव में रहता है। ऐसी परिस्थितियों में परामर्शदाता द्वारा आवश्यक सहायता प्रदान की जाती है।
2. **वैयक्तिक विभिन्नताएं-** रंग-रूप, लम्बा, पतला, छोटा, विकलांग, क्रोधी, चिड़चिड़े, विनोदप्रिय, शान्त, बुद्धिलब्धि आदि सभी गुणों के आधार पर प्रत्येक व्यक्ति, दूसरे व्यक्ति से भिन्न होता है। अतः एक ही परिस्थितियों में कोई व्यक्ति सरलता से समायोजन कर लेता है तो कोई परेशानी महसूस करता है। अतः वैयक्तिक विभिन्नताओं को ध्यान में रखकर परामर्श की आवश्यकता पड़ती है।

8.4.2 सामाजिक कारण

1. **पारिवारिक कारण-**संयुक्त परिवार में बच्चों में प्यार, स्नेह एवं सहयोग की भावनाओं का विकास होता था तथा उन पर परिवार के सभी सदस्य ध्यान देते थे। लेकिन बढ़तीहुईजनसंख्या, शहरीकरण तथा बेरोजगारी के कारण संयुक्त परिवारों में आए विधटन से व्यक्ति कई मनोवैज्ञानिक और सामाजिक समस्याओं से घिरा है, जिसके कारण उसे परामर्श की आवश्यकता है।
2. **खाली समय का सदुपयोग-** कहावत है कि 'खाली दिमाग शैतान का घर होता है', सही है। अतः वर्तमान मे खाली समय का कैसे सही ढंग से सदुपयोग किया जाए, जिससे शैक्षिक, व्यावसायिक या आर्थिक रूप से वृद्वि हो।
3. **पाठयक्रम विषयों के चयन में-** छात्रों को उनकी रूचियों, अभिवृत्तियों एवं बौद्विक और शारीरिक क्षमताओं के अनुरूप विषयों के चयन में परामर्श की आवश्यकता पड़ती है। ताकि भविष्य मे सफल हो सके।

4. **शिक्षा का मूल्य जानने हेतु-** शिक्षित व्यक्ति देश के विकास में बहुमूल्य योगदान देता है। अतः समाज के प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा के अर्थ से परिचित कराना तथा शिक्षा प्राप्त करने हेतु परामर्श की आवश्यकता होती है।
5. **समायोजन हेतु-** परिवार, विद्यालय, कक्षा तथा कार्यालय में व्यक्तिओं को अन्य सहपाठियों अथवा सहकर्मियों के साथ समायोजन हेतु परामर्श की आवश्यकता होती है।
6. **व्यावसायिक अवसरों की जानकारी प्रदान करना-** परामर्श द्वारा छात्रों को विभिन्न व्यवसायों की जानकारी प्रदान की जाती है तथा उनकी योग्यताओं, क्षमताओं, रूचियों, अभिरूचियों एवं विरक्तियों के अनुरूप विषयों के चयन में सहायता प्रदान कर भावी जीवन केलिएतैयार किया जाता है।
7. **स्वास्थ्य के लिए-** छात्रों को अच्छे स्वास्थ्य हेतु परामर्श की आवश्यकता होती है। स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का निर्माण होता है। मानसिक और शारीरिक रूप से कैसे स्वस्थ रहा जाए। परामर्श सहयोगी होता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. बढतीहुईजनसंख्या, विज्ञान और तकनीकी के कारण तेजी से हो रहे परिवर्तनों के फलस्वरूप मानव जीवन कठिन होता जा रहा है और उसे जीवन के हर मोड़ पर _____की आवश्यकता है।
2. यौन शिक्षा के अभाव, व्यवसायों के चयन, आत्मबोध, शारीरिक बनावट आदि कारणों से छात्र_____में रहता है।
3. शिक्षित व्यक्ति देश के _____में बहुमूल्य योगदान देता है।

8.5 परामर्श के क्षेत्र

छात्रों की वैयक्तिक विशेषताओं, आवश्यकताओं और विभिन्न परिस्थितियों के साथ समायोजन से सम्बन्धित समस्याओं के कारण विद्यालय में परामर्श सेवा को कई क्षेत्रों में बांटा गया है तथा उन क्षेत्रों के लक्ष्यों एंव उद्देश्यों का यहाँ पर वर्णन किया जा रहा है।

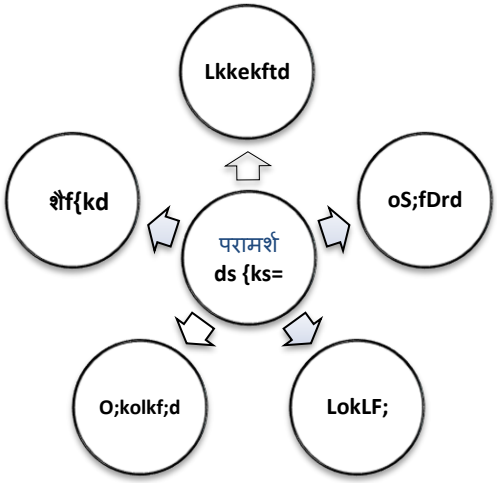

परामर्श सेवा के क्षेत्र, उनके लक्ष्य एवं उद्देश्य

क्षेत्र	लक्ष्य एंव उद्देश्य
शैक्षिक	• वैयक्तिक भिन्नता के अनुरूप शिक्षा प्रदान करना • छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि को जांचना तथा वांछित स्तरबनाएरखना • उच्च शिक्षा हेतु प्रेरित करना/शिक्षा जारी रखना • संगत पाठयक्रम का चयन • कैरियर सूचनाएं प्रदान करना • अधिगम समस्याओं का समाधान • खाली समय/अवकाश का समुचित उपयोग करना • छात्रों को अन्य शैक्षिक क्रियाकलापों में प्रतिभाग करने के लिए अवसर प्रदान करना • छात्रों की हॉबी और रूचिपरक कार्य करने में सहायता प्रदान करना • खेलों और मनोरंजन के प्रति रूचि उत्पन्न करना।
सामाजिक	• समुचित स्थान्नापन का महत्व। • सामाजिक मूल्यों और अभिवृत्तियों का विकास।

	• नेतृत्व क्षमता के गुणों का विकास। • समूह में कार्य करने के कौशलों का विकास। • जनसंख्या वृद्धि की समस्या का समाधान। • महिलाओं को व्यावसायिक समायोजन करने में सहायता करना • मूल अधिकारों और कर्तव्यों केलिएजागरूक करना। • राष्ट्रीय एकता और अन्तराष्ट्रीय भावना का विकास करना। • नैतिक मूल्यों का विकास करना।
वैयक्तिक	• छात्रों को स्वयं के विकास केलिएउतरदायी बनाने हेतु • सहायता प्रदान करना। • शारीरिक और मानसिक स्वास्थ का विकास। • व्यक्तित्व का विकास करने में सहायक। • संवेगात्मक सहजन को बनाए रखना।
व्यावसायिक	• व्यवसाय से सम्बन्धित सूचनाओं को एकत्रित करना। • छात्रों की योग्यताओं तथा क्षमताओं का मूल्यांकन करना। • छात्रों को विभिन्न व्यावसायिक प्रशिक्षणों से अवगत कराना। • व्यवसाय के चयन में सहायता देना ।
स्वास्थ्य	• अच्छे स्वास्थ्य की आवश्यकता की जानकारी प्रदान करना। • यौन शिक्षा। • शारीरिक क्रियाकलापों हेतु संतुलित कार्य योजना का निर्माण करना। • आवश्यक चिकित्सीय जांच हेतु जागरूक करना।

8.6 परामर्श की प्रक्रिया

रूथ स्ट्रैंग (Ruth Strang)के अनुसार- "परामर्श प्रक्रिया एक संयुक्त प्रयास है, परामर्शदाता का उत्तरदायित्व इस प्रक्रिया में जब कभी छात्र को आवश्यकता हो, सहायता प्रदान करना है"।

जोन्स (Jones)के अनुसार- ''परामर्श प्रक्रिया में समस्त तथ्यों को संकलित किया जाता है, छात्रों की योग्यतायें विशेष परिस्थिति के अनुसार देखी जाती हैं और समस्या समाधान केलिएछात्र को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सहायता प्रदान की जाती है।''

8.6.1 परामर्श की प्रक्रिया के घटक

परामर्श एक त्रिध्रुवीय प्रक्रिया है जिसके तीन मुख्य घटक हैं-

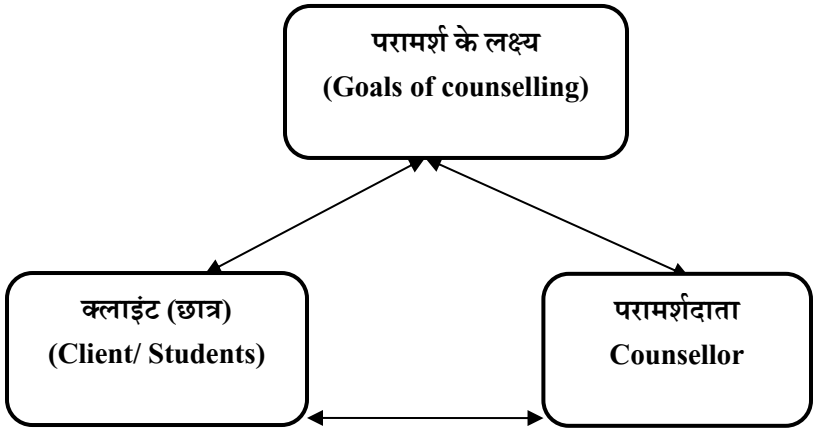

परामर्श की प्रक्रिया-परामर्शदाता और परामर्शी के अर्न्तसम्बन्धों में निहित होती है जो परामर्श के लक्ष्यों की प्राप्ति करने में सहायक होते हैं।

8.6.2 परामर्श की प्रक्रिया के चरण

यहाँ परामर्श की प्रक्रिया को परामर्शदाता और परामर्शी के पारस्परिक सम्पर्क और कार्यों के आधार पर मुख्यतः छः चरणों अथवा अवस्थाओं में बॉटा गया है।

1. सम्बन्ध विकास की अवस्था
2. आंकलन और पहचान की अवस्था
3. लक्ष्य निर्धारण अवस्था
4. समस्या समाधान अवस्था
5. सत्र समापन अवस्था
6. मूल्यांकन तथा अनुवर्तीकार्य अवस्था

सम्बन्ध विकास की अवस्था

इस चरण में परामर्शी और परामर्शदाता एक दूसरे को जानने की कोशिश करते हैं। जिसका मुख्य उद्देश्य उपयुक्त परामर्श परिवेश का सृजन करना है। यह एक चुनौतीपूर्ण कार्य है।

क्लार्कसन (Clarkson 1995)] के अनुसार - 'परामर्शदाता एवं परामर्शी के मध्य व्यक्ति से व्यक्ति का सम्बन्ध रूप ही परामर्श का केन्द्र बिन्दु है'।

इस चरण में सम्पादित होने वाले मुख्य कार्य-

- परामर्शदाता और परामर्शी का एक दूसरे के बारे में जानना और विश्वास की नींव रखना।
- परामर्शदाता द्वारा वार्ता स्थल का चयन तथा भौतिक परिवेश की रचना करना।
- परामर्शदाता और परामर्शी की भूमिकाओं को स्पष्ट करना।

परामर्श प्रक्रिया की सफलता के लिए आवश्यक परिस्थितियों के निर्माण हेतु कार्ल राजर्स ने निम्न तीन मुख्य विशेषताओं का(Core conditions) वर्णन किया है।

1. संगति (congrurence)
2. अप्रतिबंधित सकारात्मक सम्मान (Unconditional positive regards)
3. परानुभूति रूपी समझ (Empathetic understanding)

कक्रहूफ (Carkhuff 1969) ने उपरोक्त विशेषताओं के अलावा पांच अन्य विशेषताओं का वर्णन किया है-

1. आदर (Respect).
2. प्रत्यक्ष सामना करना (Confrontation)
3. तात्कालिकता (Immediately)
4. स्थूलता (Concreteness)
5. आत्म-प्रकटीकरण (Self disclosure)

परामर्शदाता केलिएसभी विशेषताओं में दक्ष होना क्यों आवश्यक है? यहाँ इसका अध्ययन करना आवश्यक है। इन विशेष गुणों के आधार पर परामर्शदाता, परामर्शी में वांछित परिवर्तन करने में सफलता प्राप्त करने हेतु करता है। प्रत्येक विशेष गुण अनुकूल परामर्श परिवेश के सृजन में सहायक होता है। इन गुणों के द्वारा परामर्शदाता परामर्श परिवेश से सम्बन्धित आधारभूत उद्देश्यों को प्राप्त करता है। उद्देश्यों के आधार पर इनको यहां सूचीबद्ध किया गया है।

- विशेषतायें - उद्देश्य
- संगति - पारस्परिक संचार में वृद्वि करना।

- अप्रतिबंधित सकारात्मक सम्मान - परामर्शी मूल्यवान है, वह उपकरण नहीं है।
- परानुभूति - सम्बन्धों में घनिष्टता और विश्वास उत्पन्न करना।
- आदर - परामर्शी की शक्ति पर घ्यान केन्द्रित करना
- प्रत्यक्ष सामना करना - सही विचार और वास्तविकता पर केन्द्रीकरण।
- तात्कालिकता - सही समय पर सहायता प्रदान करना।
- स्थूलता - कार्यकारी पक्ष पर ध्यान देना।

आत्म-प्रकटीकरण -सकारात्मक चिन्तन के विकास की ओर अग्रसर करने केलिएपरामर्श सम्बन्धों पर ध्यान देना।इस चरण में परामर्शदाता सक्रिय रूप से अपने परामर्शी पर ध्यान देता है और उसे धैर्यपूर्वक सुनता है। सक्रियता के साथ सुनने केलिएनिम्न बातों पर ध्यान दिया जाए-

परामर्शदाता क्या करे-

शाब्दिक अथवा अशाब्दिक सकेंतों का प्रयोग (जैसे हूं, हां, सिर हिलाना, चेहरे द्वारा उपयुक्त भावों का प्रकटीकरण)।

क्या नहीं करे-

- एकदम निष्कर्ष पर पहुँचना।
- परामर्शी के बजाए ध्यान कहीं अन्य जगह पर रखना।
- भाषा सम्बन्धी त्रुटि (सही अर्थांकन न करना)।

आंकलन और पहचान की अवस्था

परामर्श प्रक्रिया के इस चरण में सूचनाओं को प्राप्त कर परामर्शी की वास्तविक समस्या का आंकलन किया जाता है। इसके लिए मानकीकृत (जैसे-मनोवैज्ञानिक परीक्षण) तथा अमानकीकृत (जैसे-चिकित्सकीय साक्षात्कार) उपकरणों का प्रयोग किया जाता है।

इस चरण में सम्पादित होने वाले कार्य

- समस्या की प्रकृति की पहचान करना।
- परामर्शी के व्यवहार में समस्या के कारण आए परिवर्तनों की जाँच करना।
- समस्या समाधान हेतु परिकल्पनाओं का निर्माण करना।

लक्ष्य निर्धारण की अवस्था

समस्या के स्वरूप के आधार पर लक्ष्यों की स्पष्ट रूप से पहचान की जाती है। जिनको प्राप्त करने केलिएपरामर्शदाता और परामर्शी मिलकर कार्य करते हैं और परामर्शदाता लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कार्ययोजना का विकास करता है। परामर्श प्रक्रिया के दौरान आवश्यकतानुसार लक्ष्यों में बदलाव किया जा सकता है।

लक्ष्य निर्धारण करते समय निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देना महत्वपूर्ण है-

- आप क्या हैं? और क्या चाहते हैं ?
- आप लक्ष्यों को कैसे प्राप्त कर सकते हैं ?
- लक्ष्य प्राप्ति के समय क्या-2 समस्याएं आ सकती हैं ?
- लक्ष्य की प्राप्ति का मापन और मूल्यांकन कैसे किया जा सकता है?
- लक्ष्य कैसे हों ?

इसके लिए स्मार्ट (SMART)सिद्धांत का प्रयोग करते हैं-

- विशिष्ट (Specific)
- मापे जाने योग्य (Measurable)
- उपयुक्त (Appropriate)
- यर्थाथपूर्ण (Realistic)
- निर्धारित समय सीमा (Time)

समस्या समाधान की अवस्था

इस चरण में योजनाबद्व ढंग से लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए परामर्शदाता और परामर्शी कार्य करते हैं। आरविकिल के अनुसार-"परामर्शदाता अपने कौशलों और समझ के द्वारा परामर्शी को यह अनुभव कराता है कि समस्त सत्र परामर्शी से सम्बन्धित है तथा परामर्शदाता का केन्द्र परामर्शी ही है"।

समस्या समाधान की अवस्था में सम्पादित होने वाले मुख्य कार्य-

- परामर्शदाता और परामर्शी दोनों का अनुभवों की भागीदारी करना।
- पारस्परिक सहयोग के द्वारा द्वन्द की समाप्ति करना और एकमत होना।

सत्र समापन अवस्था

परामर्श के दौरान छात्र भावात्मक रूप से परामर्शदाता से इतना घनिष्ठ सम्बन्ध बना लेता है कि परामर्श प्रक्रिया के समापन के प्रस्ताव उसमें चिन्ता तथा भय उत्पन्न करते हैं। परामर्शदाता छात्र केलिएप्रेम, स्नेह और अभिप्रेरणा के स्रोत के रूप में कार्य करता है। अतः सम्बन्धों का समापन करना एक चुनौतिपूर्ण कार्य होता है।परामर्शदाता परामर्श की प्रक्रिया का समापन कैसे करे ?समापन केलिएपरामर्श प्रक्रिया की सफलता का मूल्यांकन किया जाता है। यहाँ सफलता का मूल्यांकन करने हेतु कुछ बिन्दुओं को दिया गया है जिनके आधार पर समापन का निर्णय लिया जाता है।

- यदि छात्र ने समस्या की पहचान कर ली और उसके पास समाधान है।
- छात्र ने आवश्यक कौशलों एवं व्यवहार की प्राप्ति कर ली है।
- छात्र नई परिस्थितियों का सामना करने में सक्षम है।
- समाधान हेतु नये मार्ग का अनुसरण कर लिया है।

मूल्यांकन तथा अनुवर्ती अवस्था

इस अवस्था में परामर्शदाता छात्र के व्यवहार और समस्या की वर्तमान स्थिति का मूल्यांकन कर परामर्श प्रक्रिया को भविष्य में जारी रखने अथवा समाप्ति का निर्णय लेता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

4. परामर्श एक _____प्रक्रिया है
5. समस्या के स्वरूप के आधार पर लक्ष्यों की स्पष्ट रूप से पहचान की जाती है। जिनको प्राप्त करने केलिए_____और _____मिलकर कार्य करते हैं
6. समापन केलिएपरामर्श प्रक्रिया की सफलता का _____किया जाता है।

8.7 परामर्श के प्रकार

क्षेत्रों और उद्देश्यों के आधार पर परामर्श को निम्न विविध प्रकारों में बॉटा गया है।

1. मनोवैज्ञानिक परामर्श (Psychological Counselling)
2. मनोचिकित्सात्मक परामर्श (Psychotherapeutic Counselling)
3. नैदानिक परामर्श (Clinical Counselling)
4. वैवाहिक परामर्श (Marriage Counselling)
5. व्यवसायिक परामर्श (Vocational Counselling)
6. छात्र परामर्श (Students Counselling)

7. स्थानापन्न परामर्श (Placement Counselling)

स्वरूप के आधार पर परामर्श को मुख्यतः तीन प्रकार से वर्णित किया जाता है:-

1. निदेशात्मक परामर्श (Directive Counselling)
2. अनिदेशात्मक परामर्श (Non-Directive Counselling)
3. समाहारक परामर्श (Electic Counselling)

8.7.1 निदेशात्मक परामर्श (Directive Counselling)

निदेशात्मक परामर्श की विधि को परामर्शदाता केन्द्रित परामर्श के नाम से भी जाना जाता है। इ.जी.विलियमसन इस विधि के प्रमुख समर्थक हैं। निदेशात्मक परामर्श में परामर्शदाता की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण होती है। वह छात्रों को सुझाव देता है। परामर्श प्रक्रिया में छात्र, परामर्शदाता के नेतृत्व में कार्य करता है। निदेशात्मक परामर्श में छात्र के व्यक्तित्व के संवेगात्मक पक्ष से ज्यादा बौद्विक पक्ष पर ध्यान दिया जाता है।

विलियमसन ने निर्देशात्मक परामर्श के निम्न छः सोपान दिए हैं।

1. समस्या का विश्लेषण
2. समस्या का संश्लेषण
3. समस्या का निदान
4. पूर्व अनुमान अथवा छात्रों की समस्या के बारे में भविष्यवाणी
5. परामर्श
6. अनुगामी

8.7.2 अनिर्देशिक परामर्श (Non-Directive Counselling)

अनिर्देशिक परामर्श को परामर्शी (छात्र) केन्द्रित कहा जाता है। अनिर्देशिक परामर्श में छात्रों के बौद्विक पक्ष की अपेक्षा संवेगात्मक पक्ष पर ज्यादा ध्यान दिया जाता है। इस प्रकार के परामर्श को प्रतिपादन करने का श्रेय कार्ल रोजर (Carl Roger) को है। उनके अनुसार अनिर्देशिक परामर्श के निम्न सोपान है:-

- वार्तालाप या उद्देश्यपरक मुलाकात।
- परिस्थिति का विश्लेषण करना।
- उपयुक्त परिवेश का निर्माण करना।
- छात्रों से सहयोग, सहानुभूति और मैत्रीय सम्बन्ध स्थापित करना।

- छात्रों की अनुभूतियों को समझना।
- नकारात्मक और सकारात्मक अनुभूतियों की पहचान करना।
- छात्रों को अपनी अंतर्दृष्टि को कार्यरूप में परिवर्तित करने में सहायता करना।
- छात्रों को समस्या समाधान की ओर अग्रसर करना।
- छात्रों द्वारा स्वंय सहायता की आवश्यकता कम करते हुये परामर्श का अन्त करना।

8.7.3 समझौतावादी परामर्श

समझौतावादी परामर्श के मुख्य प्रर्वतक एफ. सी. थोर्न (F.C.Thorne) है। समझौतावादी परामर्श एक प्रकार से निर्देशक और अनिर्देशात्मक परामर्श के मध्य का परामर्श है। अतः इसे मध्य मार्गीय के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है।

समझौतावादी परामर्श के सोपान

- कारण का निदान।
- समस्या का विश्लेषण।
- परिर्वतन हेतु अस्थायी योजना।
- परामर्श की प्रभावी दशायें प्राप्त करना।
- साक्षात्कार और प्रोत्साहन।
- समस्याओं का समाधान।

8.8 सारांश

परामर्श एक प्रक्रिया है जिसमें परामर्शी की समस्याओं के समाधान करने केलिएपरामर्शदाता द्वारा सहायता प्रदान की जाती है जिससे वह स्वयं (परामर्शी) ही अपनी समस्याओं के समाधान करने के योग्य बन जाए।

- परामर्श का उद्देश्य छात्र में आत्मबोध का विकास करना है।
- परामर्श विकासशील तथा तकनीकी प्रक्रिया है।
- परामर्श सुसंगठित सेवा है।

- परामर्श त्रिध्रुवीय प्रक्रिया है, जिसमें परामर्शदाता, परामर्शी तथा परामर्श के उद्देश्य निहित होते हैं।
- विभिन्न कार्यों के आधार परामर्श की प्रक्रिया को मुख्यतः छः चरणों में बॉटा गया है।
- वर्तमान समय में किसी भी व्यक्ति अथवा छात्र को व्यक्तिगत, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक, समस्याओं के कारण परामर्श सेवा की आवश्यकता रहती है।

  स्वरूप के आधार पर परामर्श के तीन प्रकार हैं।

  a. निदेशात्मक
  b. अर्निदेशात्मक
  c. समाहारक परामर्श

8.9 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. परामर्श
2. तनाव
3. विकास
4. त्रिध्रुवी
5. परामर्शदाता , परामर्शी
6. मूल्यांकन

8.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. पशारिचा, पी0 (1977), गाइडेन्स एण्ड काउंसलिंग इन इण्डिया, एन0सी0 ई0 आर0 टी0, न्यू दिल्ली।
2. अग्रवाल जे0 सी0 (1989), 'एजुकेशनल वुकेशनल गाइडैन्स एण्ड काउंसलिंग', दुआबा हाउस, दिल्ली।
3. क्रो डी0 एण्ड क्रो (लेटेस्ट् एडीसन), 'एन इन्ट्रोडक्शन टू गाइडेन्स', यूरेशिया पब्लिसिंग हाउस, दिल्ली।
4. आनन्द एस0 पी0 (1994), ए वी सी ऑफ गाइडेन्स इन एडुकेशन, यूनीक पब्लिसर, पठानकोट, ।

5. बेंगले,एम0 टी0 (1984), गाइडेन्स एण्ड कान्सिलिंग, सेठ पब्लिसर, बम्बई।

8.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. "परामर्श का सम्बन्ध व्यक्ति के जीवन की सभी अवस्थाओं और विभिन्न क्षेत्रों से है"। इस कथन की विवेचना कीजिए।
2. विद्यालय में छात्रों केलिएपरामर्श क्यों आवश्यक है और इसके महत्व की विस्तृत व्याखा कीजिए।
3. उच्चत्तर माध्यमिक स्तर के किसी छात्र के शैक्षिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर परामर्श की प्रक्रिया का आयोजन कर मूल्यांकन कीजिए।

इकाई 9 - परामर्शदाता के गुण, भूमिका तथा उत्तरदायित्व

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 परामर्शदाता

- 9.3.1 परामर्शदाता के गुण
- 9.3.2 परामर्शदाता का प्रशिक्षण
- 9.3.3 प्रशिक्षण से सम्बन्धित अध्ययन क्षेत्र
- 9.3.4 परामर्शदाता के गुणों का विकास
- 9.3.5 परामर्श कौशल

9.4 परामर्शदाता के कार्यव कार्यक्षेत्र

9.5 परामर्शदाता की भूमिका

- 9.5.1 मनोविश्लेषणात्मक उपागम
- 9.5.2 व्यक्ति केन्द्रित उपागम
- 9.5.3 संज्ञानात्मक उपागम
- 9.5.4 व्यवहार उपागम

9.6 परामर्शदाता के उत्तरदायित्व

- 9.6.1 कार्यकारी उत्तरदायित्व
- 9.6.2 नैतिक उत्तरदायित्व

9.7 सारांश

9.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

9.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

9.10 निबंधात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

इकाई 8 में आपने परामर्श के प्रत्यय, आवश्यकता, प्रक्रिया और परामर्श के विभिन्न प्रकारों का अध्ययन किया। परामर्श की प्रक्रिया में परामर्शदाता की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। परामर्शदाता ही परामर्श से सम्बन्धित सभी कार्यों के सफल संचालन केलिएउतरदायी होता है।

इस इकाई में आप परामर्शदाता के गुणों, भूमिका तथा उतरदायित्वों का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप परामर्श की प्रक्रिया में परामर्शदाता के महत्व को समझ सकेंगे। एक अच्छे परामर्शदाता में क्या-क्या गुण होने चाहिए तथा इन गुणों का विकास कैसे किया जाए, से अवगत हो सकेंगे।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

1. बता सकेंगे कि परामर्शदाता कौन होता है।
2. परामर्शदाता के गुणों को सूचीबद्ध कर सकेंगे।
3. विभिन्न परामर्श कौशलों को जान सकेंगे।
4. परामर्श प्रक्रिया में परामर्शदाता की भूमिका की व्याख्या कर सकेंगे।
5. परामर्शदाता के उत्तरदायित्वों से अवगत हो सकेंगे।

9.3 परामर्शदाता

परामर्शदाता से तात्पर्य उस व्यक्ति अथवा शिक्षक से होता है जिसके ऊपर विद्यालीय परामर्श और निर्देशन सेवाओं को संचालित करने की जिम्मेदारी होती है। वह अपने कौशलों के द्वारा परामर्शी अथवा छात्रों को समस्याओं के समाधान की ओर अग्रसर कर भावी जीवन को तैयार करने में मदद करता है।

परामर्शदाता वह है जो-

- परामर्शी (छात्र) की भावनाओं को भलीभांति समझकर तथ्यात्मक जानकारी हांसिल करे।
- सभी प्राप्त सूचनाओं को गोपनीय रखे।
- परामर्शी को अभिव्यक्ति का पूरा मौका दे।
- परामर्शी के आत्मविश्वास में वृद्धि कर सके।

- परामर्शी की भावनाओं और विचारों का सम्मान कर सके।
- परामर्शी यदि असुरक्षित महसूस करें तो उसमें सुरक्षा की भावना का विकास कर सके।
- परामर्शी जिसके साथ सकारात्मक सम्मान और संगति का अनुभव कर सके।
- परामर्शी की आवश्यकताओं को समझकर लक्ष्यों का निर्धारण कर सके।
- अपने को विशेषज्ञ समझने की भूल न करे।

9.3.1 परामर्शदाता के गुण

एक अच्छे परामर्शदाता में निम्नलिखित गुण होने चाहिए।

1. **व्यक्तिगत गुण-** परामर्शदाता को विनोदप्रिय, धैर्यवान, मृदुभाषी, स्वस्थ एवं आकर्षक व्यक्तित्व वाला होना चाहिए। उसमें नागरिकता का भाव हो। उसका जीवन-दर्शन सकारात्मक और आचरण उत्तम होना चाहिए। उसका व्यवहार एवं वेशभूषा ऐसी न हो जिसकी कोई हंसी उड़ाये।
2. **बौद्धिक क्षमता-** परामर्शदाता को विभिन्न व्यावसायिक, अध्ययन एवं परामर्श क्षेत्रों का ज्ञान होना चाहिए। उसमें तर्कयुक्त एवं व्यवस्थित चिन्तन करने की योग्यता होनी चाहिए। ताकि वह सूचनाओं को एकत्र कर योजनाबद्ध ढंग से परामर्शी को आवश्यक सहायता प्रदान कर सके।
3. **ऊर्जावान-** परामर्श सेवा एक भावात्मक मांग है। परामर्श के सामने कई समस्याएं होती हैं। वह अपने को कमजोर और असहाय समझता है। परामर्शदाता के उत्साह के द्वारा परामर्शी में आत्मविश्वास और स्वयं कार्य करने की प्रेरणा मिलती है।
4. **लचीलापन-** अच्छा परामर्शदाता कभी भी परामर्श के दौरान एक विधि का अनुसरण नहीं करता है। वह छात्र की व्यक्तिगत विभिन्नताओं और समस्या के स्वरूप को ध्यान में रखकर यह निर्णय लेता है कि-कौन सी विधि, तकनीक एवं व्यवहार छात्र की समस्या समाधान हेतु उपयुक्त होगी।
5. **सहयोग-** परामर्शदाता को सहयोगी प्रवृति का होना आवश्यक है। तभी छात्र उसका आदर व सम्मान करते हैं।

6. **स्वतत्परता-** परामर्शदाता के मनोभावों, विचारों और कार्य का प्रभाव परामर्शी के व्यवहार पर पड़ता है। परामर्शदाता की मानसिक, शारीरिक और बौद्धिक तत्परता के द्वारा परामर्शी से वांछनीय सहयोग मिलता है।
7. **संवेदनशीलता-** परामर्शदाता को अपने व्यवसाय और परामर्शी (छात्र) के प्रति संवेदनशील होना चाहिए तभी वह पूर्ण तत्परता के साथ अपने कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों का निर्वहन कर पाएगा।
8. **परानुभूति-** परानुभूति परामर्शदाता के व्यवहार की वह विशेषता अथवा योग्यता है जिसके द्वारा वह परामर्शी के द्वारा संसार को देखने की कोशिश करता है और वह अपने विचार मतों को परामर्शी की भावनाओं के साथ जोड़ने की जरा सी भी भूल नहीं करता है। इस गुण के द्वारा परामर्शदाता अपने सेवार्थी को भलीभांति जान सकता है।
9. **सकारात्मक सोच-**"परामर्शदाता परामर्शी को बिना किसी शर्त के आत्म महत्व के रूप में स्वीकार करता है चाहे उसकी दशा जैसी भी हो फिर भी वह मूल्यवान है" (राजर्स)। परामर्शदाता जब बिना किसी शर्त के परामर्शी का आदर व सम्मान करता है तो दोनों के मध्य उपयुक्त सम्बन्ध स्थापित होता है जिससे सहजता के साथ परामर्श की प्रकिया को पूरा किया जाता है। परामर्श के बाद कई बार वांछनीय परिणाम प्राप्त नहीं होते, ऐसी परिस्थितियों में परामर्शदाता यह निर्णय नहीं देता कि 'तुम यह कभी नहीं कर सकते हो'। परामर्शदाता को आशावादी और सकारात्मक सोच वाला होना चाहिए।
10. **संगति-** परामर्शन के दौरान परामर्शदाता जो अनुभव कर रहा है और परामर्शी (छात्र) को जो कुछ अनुभव संप्रेषित कर रहा है उसमें कोई भी द्वन्द नहीं है यदि है भी तो वह न्यूनतम है। यह तभी सम्भव है जब परामर्शदाता का व्यवहार दिखावटी न हो वह परामर्शी के सम्मुख ईमानदार और वास्तविक दिखाई पड़े ऐसा न हो कि परामर्शदाता कोई ड्रामा कर रहा हो।

9.3.2 परामर्शदाता का प्रशिक्षण

परामर्शन की सफलता परामर्शदाताओं के प्रशिक्षण एवं अनुभव पर निर्भर करती है। यदि छात्रों को अप्रशिक्षित और अनुभवहीन व्यक्तियों को सौंप दिया जाता है तो उनको अपेक्षित लाभ नहीं मिल पाता। परामर्श सेवा में संलग्न व्यक्तियों केलिएनिर्देशन व परामर्शन से सम्बन्धित आवश्यक प्रशिक्षण प्राप्त करना आवश्यक है। सामान्य रूप से परामर्शदाता को मनोविज्ञान विषय का ज्ञान होना चाहिए।

इसकेलिएप्रशिक्षण को तीन स्तरों में बांटा जा सकता है।

i. प्रथम स्तर- स्नातक तथा बी0 एड0/ आवश्यक अनुभव
ii. द्वितीय स्तर- परामर्शन सम्बन्धी कोर्स में स्नातकोत्तर उपाधि / एम0 एड0
iii. तृतीय स्तर- पी0 एच0 डी0 उपाधि प्राप्त / शोध अनुभव

9.3.3 प्रशिक्षण से सम्बन्धित अध्ययन क्षेत्र

वर्तमान में विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा निर्देशन एवं परामर्श से सम्बन्धित सर्टीफिकेट, डिप्लोमा, स्नातक, स्नातकोत्तर स्तर के कोर्सों के साथ ही शोध कार्यों का संचालन किया जा रहा है। जिनके अन्तर्गत निम्न विषयों का अध्ययन करना अनिवार्य है।

- व्यावसायिक पहचान
- निर्देशन और परामर्श
- सामाजिक और सांस्कृतिक विविधता
- बाल मनोविज्ञान
- मानव वृद्धि और विकास
- वृत्तिक विकास
- पारस्परिक सम्बन्ध विकास का अध्ययन
- सामूहिक कार्य
- मापन और मूल्यांकन
- शोध की विधियां
- परामर्शदाता के गुणों का विकास
- परामर्शदाता के गुणों का विकास करनें में महत्वपूर्ण बिन्दु-
- दूसरों के विचारों, भावनाओं, हावभावों के द्वारा वर्तमान को समझने का प्रयास करना।
- स्वंय तथा दूसरे की भावनाओं को स्वीकार करना।
- स्वंय की राय को अलग रखना जिससे परामर्शन सेवा में परेशानियां उत्पन्न न हो।
- परामर्शी को खुले मन से स्वीकार करना तथा आत्मीयता के साथ सम्बन्ध स्थापित करना।

- लगातार सक्रिय रूप से सुनने की क्षमता का विकास व अभ्यास करना इसकेलिएधैर्य की आवश्यकता होती है।

उदाहरण- छात्रः मैं कल बाजार में था, लेकिन गणित विषय के शिक्षक को देखते ही छिप गया और डर के मारे पसीने से तर-बतर हो गया।

परामर्शदाता-अच्छा तुमने गृहकार्य नहीं किया होगा (यह निर्णय लेना एकदम गलत होगा)। परामर्शदाता को छात्र से बातचीत कर ऐसा माहौल तैयार करना होगा ताकि छात्र स्वयं ही इस भय का कारण बता सके अथवा परामर्शदाता को अन्य स्रोतों के माध्यम से तथ्यात्मक जानकारी एकत्रित कर किसी नतीजे पर पहुंचना चाहिए।

9.3.5 परामर्श कौशल

एक अच्छे परामर्शदाता केलिएपरामर्श सम्बन्धी कौशलों की जानकारी होनी चाहिए। परामर्श की सफलता परामर्शदाता तथा छात्र के मध्य मानवीय सम्बन्धों की प्रगाढ़ता पर निर्भर करती है। सभी प्रकार के परामर्श में दो प्रकार के अर्न्तसम्बन्ध निहित होते हैं।

1. परामर्शदाता का छात्र से सम्बन्ध तथा
2. छात्र का परामर्शदाता से सम्बन्ध

सभी प्रकार के परामर्श में परामर्शदाता को विशेष कौशलों की आवश्यकता होती है। फ्रेन्सिसका इंसकिप्प (Francesca Inskipp, 2000)ने परामर्श केलिएछः सामान्य कौशलों का वर्णन किया है।

1. परामर्शी से सम्पर्क स्थापित करना
2. परामर्शन दशा की संरचना सुनिश्चित करने का कौशल
3. सम्बन्ध विकास करना
4. परामर्शी के साथ अन्तक्रिया का विकास एवं अनुरक्षण
5. मूल्यांकन कार्य
6. परामर्शन की प्रक्रिया में स्वयं का अनुश्रवण (मॉनिटरिंग) करना।

यदि आप परामर्शदाता के रूप में कार्य करना चाहते हैं तो निम्न कौशलों में दक्ष होना अनिवार्य है।

a. ध्यान देना
b. श्रवण कौशल
c. चुनौती देना
d. प्रश्न पूछना

e. प्रत्यावर्तन
f. पुर्नकथनीकरण
g. व्यवस्था सम्बन्धी कौशल

i. **ध्यान देना-**ध्यान देना किसी व्यक्ति के व्यवहार और अभिव्यक्ति का संयुक्त रूप है। ध्यान देने की प्रक्रिया में किसी सम्प्रेषण से सम्बन्धित शाब्दिक और अशाब्दिक पक्षों की जटिल श्रृंखला निहित होती है।

परामर्शी पर ध्यान देने से वह सकारात्मक संगति का अहसास करता है जिससे वह सुरक्षा की भावना महसूस करता है।

इसके लिए परामर्शदाता का ध्यान व्यवहारों के प्रयोग में दक्ष होना चाहिए। यहाँ पर संक्षेप में कुछ ध्यान व्यवहारों के नाम दिए हैं।

- चेहरा परामर्शी की तरफ रखना
- सिर हिलाना
- सही ढंग से बैठना
- शाब्दिक तालमेल एवं प्रवाह
- वाणी
- परामर्शी की तरफ झुकाव
- नजरें मिलाना
- शान्त अथवा धैर्य रखना

ii. **श्रवण कौशल-**परामर्श की प्रक्रिया में श्रवण कौशल का सम्बन्ध कान और आंख से है। परामर्शी के शाब्दिक और अशाब्दिक व्यवहार तथा संकेतो को सुनकर व देखकर परामर्शदाता, समस्या की पहचान कर आवश्यक सहायता प्रदान करता है।

श्रवण कौशल में तीन मुख्य पक्ष होते हैं।

a. **भाषा-**परामर्शदाता को भाषा की अच्छी जानकारी होनी चाहिए जिससे परामर्शी के शब्दों, वाक्यों, उक्तियों, अलंकारों आदि का सही अर्थापन कर उसकी सही दशा का आंकलन किया जा सके।

b. **भाषाई संकेत-**जैसे- उच्चारण, लय, सुर, गति, विराम, वलाघात् आदि पर ध्यान देना तथा उनका सही अर्थापन करना।

c. **अशाब्दिक संकेत-**जैसे- परामर्शी के चेहरे के हावभाव, शारीरिक स्थिति, हिलना-डुलना, हाथ-पैरों के इशारे तथा परामर्शदाता की निकटता (ध्यान रखें-एक निश्चित सीमा में रहकर परामर्शी को छूना विशेषकर परामर्शी के विषम लिंगी होने पर) का ज्ञान।

उपरोक्त तीनों पक्ष परामर्शी के आन्तरिक व्यवहार को प्रदर्शित करते हैं। अतः परामर्श केलिएपरामर्शदाता को श्रवण कौशल में दक्ष होना चाहिए।

iii. **चुनौती देना-**परामर्शी को लक्ष्य एवं उद्देश्यकी दिशा में अग्रसर करने केलिएऐसी परिस्थितियों का निर्माण करता है जो परामर्शी केलिएचुनौती पूर्ण हो तथा वह स्वंय समाधान के मार्ग को ढूँढकर उसका अनुसरण कर सके। अथवा स्वंय की समझ को विकसित कर सकारात्मक ढंग से संसार को देख सके।

चुनौती देने केलिएपरामर्शदाता को परामर्शी के बारे में ज्ञान होना चाहिए। उसे स्वंय तथा परामर्शी के भय और क्रोध अथवा अन्य कुसमायोजित व्यवहार की संभावना का बोध होना चाहिए। चुनौती देने केलिएउपयुक्त समय कब होगा। इसका ज्ञान परामर्शदाता को होना चाहिए।

iv. **प्रश्न पूछना-** परामर्श की प्रक्रिया में परामर्शदाता प्रश्न के माध्यम से आवश्यक सामग्री एकत्रित कर लेता है। प्रश्न पूछने की कला में दक्ष होना चाहिए। प्रश्न क्यों, क्या, किसका, कब और कैसे से सम्बन्धित होने चाहिए ताकि परामर्शी से सम्बन्धित सही जानकारी प्राप्त हो, लेकिन प्रश्न को परामर्शी की मनोदशा को ध्यान में रखकर उचित समय पर पूछा जाना चाहिए।

उदाहरण-

परामर्शदाता -

1. अपने परिवार के बारे में बताइए।
2. आपका परिवार आपकेलिए क्यूँ महत्वपूर्ण है?
3. क्या आपके माता-पिता आपकी बातों पर ध्यान देते हैं?
4. आपको ऐसा क्यों लगता है, कि आपके माता-पिता आपकी बातों पर ध्यान नही देते हैं।
5. आपके परिवार मे दुर्घटना कब हुई?
6. यह दुर्घटना कैसे हुई?
7. दुर्घटना के बाद आप कैसा महसूस करते हैं?

v. **प्रत्यावर्तन-**प्रत्यावर्तन का अर्थ परामर्शी द्वारा अभिव्यक्त किएगए विचारों, शब्दों आदि के कुछ अंशो का परामर्शदाता द्वारा दोहराना है।

उदाहरण-

परामर्शी-परीक्षाओं केलिएएक महीना शेष है। जब भी मैं पढ़ने बैठती हूँ मुझे लगता है कि मैं सब कुछ भूल गई हूँ और मुझे कुछ भी समझ में नहीं आ रहा है।

परामर्शदाता-अच्छा आपको लगता है कि आप सब कुछ भूल गए हो।

vi. **पुर्नकथनीकरण-**परामर्शदाता परामर्श के दौरान परामर्शी के द्वारा दी जाने वाली सूचनाओं का सही अर्थ जानने तथा किसी नतीजे पर पहुँचने केलिएकथनों को सही ढंग से अभिव्यक्त करता है।

उदाहरण

छात्र- गणित विषय में बहुत डर लग रहा है मेरा परीक्षाफल ठीक नही रहेगा। यहाँ कोई भी ऐसा नहीं है जो मेरी सहायता कर सके।

परामर्शदाता-यदि कोई आपके गणित के कठिन पाठों को समझने मे आपकी सहायता करे तो क्या आपका परीक्षाफल अच्छा रहेगा।

vii. **व्यवस्था सम्बन्धी कौशल-**परामर्शदाता को अच्छी व्यवसायिक वृत्ति से सम्बन्धित कौशलों मे निपुण होना चाहिए। इसकेलिएकॉलिन फैल्थम (2000) ने निम्न कौशलों को सूचीवत किया गया है।

अर्पण प्राप्त करना।

परामर्शी तथा परामर्शदाता दोनों की सुरक्षा को ध्यान में रखना।

परामर्श के लिए उपयुक्त भौतिक परिवेश (कक्ष, मेज, कुर्सी, लाइट तथा अन्य आवश्यक सुविधाओं आदि की व्यवस्था) का निर्माण।

अभिलेख तैयार करना।

इसके अलावा परामर्शदाता को आधुनिक उपकरणों जैसे-कम्प्यूटर, मोबाइल, क्लोज सर्किट कैमरा, आडियो-विडियो रिकॉडिंग आदि के संचालन में दक्ष होना चाहिए।

परामर्शी कई प्रकार के शाब्दिक और अशाब्दिक व्यवहार करता है। जिसमें वाणी की गुणवत्ता, सांस लेना, ऑखों के इशारे, चेहरे के भाव, हाथ-पैरों और अन्य शारीरिक गतिविधियॉ शामिल हैं। जिनके अध्ययन के द्वारा परामर्शदाता किसी नतीजे पर पहुँच सकता है। यहाँ पर कुछ संकेत

और उनके सम्भावित अर्थ को सूचीबद्ध किया गया है। आप इनका अध्ययन कर किसी एक छात्र के व्यवहार का अध्ययन करें-

अंग	अशाब्दिक संकेत (परामर्शी के)	सम्भावित अर्थ
मुख	हंसमुख चेहरा होंठो को दबाना होंठो को चबाना खुला मुँह	सकारात्मक रूख चिन्ता/क्रोध चिन्ता/बुरी हालत अवाक् रहना/थकान/अपने में रहना (ध्यान न देना)
आँख	नजरें मिलाना ऑखे नीची रखना या इधर-उधर देखना पलकें झपकाना ऑखे एक जगह पर स्थिर रखना	ध्यान प्रदर्शित करना कम ध्यान देना, ज्यादा उत्साह न दिखाना, झेंपना। चिन्ता/उत्साह का प्रदर्शन मानसिक रूप से परेशान रहना
चेहरा	मुहं खोलते हुये आँखों कोबड़ी कर देखना उदासीन चेहरा	अवाक रहना/ संशय का प्रकटीकरण चिन्ता/उत्साह न दिखाना/आन्तरिक रूप से कमजोर / मानसिक आघात
हाथ	हाथों को मसलना नाखून चबाना नाखून के सामने की त्वचा छीलना	चिन्ता/भय चिन्ता/एकाग्रताकीकमी/चिन्ता/क्रोध/मानसिक आघात
कंधा	झुके हुये कंधे अकड़ कर बैठना	दुःख/संकोची क्रोध/आत्मविश्वास में कमी
पैर	पैर हिलाना बार-बार पैरों को क्रास कर बैठना	चिन्ता/एकाग्रता की कमी /आत्मविश्वास की कमी।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. परामर्शन की सफलता _____के प्रशिक्षण एवं अनुभव पर निर्भर करती है।
2. अच्छा परामर्शदाता कभी भी परामर्श के दौरान एक विधि का _____नहीं करता है।
3. चुनौती देने केलिएपरामर्शदाता को परामर्शी के बारे में _____होना चाहिए।

9.4 परामर्शदाता के कार्य व कार्य क्षेत्र

विद्यालीय परामर्शन में परामर्शदाता बहुत से कार्यों और सेवाओं का निर्वहन करता है।

i. **व्यक्तिगत परामर्श-** परामर्शदाता विद्यालय में अलग से समय निर्धारित कर छात्रों को उनकी शैक्षिक और व्यक्तिगत समस्याओं के समाधान केलिएपरामर्श प्रक्रिया को पूरा करता है।

ii. **सामूहिक परामर्श-** परामर्शदाता छात्रों के छोटे-छोटे समूह बनाकर उनको समस्याओं के समाधान हेतु प्रेरित करता है। छात्रों के विचारों और आवश्यकताओं को समझकर शैक्षिक योजना का निर्माण करता है।

iii. **अर्पण कार्य-** परामर्शदाता एक अपर्ण कार्यकर्ता की भांति कार्य करता है। वह छात्रों की समस्या समाधान हेतु उनके परिवार और अन्य स्रोत्रों से प्राप्त अभिलेखों के साथ परामर्शी को अन्य परामर्शदाता के पास भी भेज सकता है अथवा दूसरों से प्राप्त करता है।

iv. **सलाह देना-** परामर्शदाता छात्र की योग्यता और आवश्यकता के अनुरूप शिक्षकों ओर अभिभावकों को सलाह व सुझाव देता है।

v. **वृत्रिक सहायता-** छात्रों की अभिवृत्ति, रूचि, योग्यता, शारीरिक क्षमता के अनुरूप उन्हें रोजगार परक विषयों के चयन करने में सहायता प्रदान करता है ताकि भविष्य में जीवन में सफल हो सकें।

vi. **समन्वय-**परामर्शदाता अपने कार्यों और सेवाओं द्वारा छात्र, परिवार, शिक्षकों, प्रधानाचार्य एवं चिकित्सकों के मध्य समन्वय स्थापित करने का कार्य करता है। उदाहरण के तौर पर परामर्शदाता विद्यालयों में मानकीकृत परीक्षण के सत्र के आयोजन केलिएछात्रों, शिक्षकों और प्रशासकों के मध्य समन्वय का कार्य करता है।

vii. **मूल्यांकन-**मूल्यांकन के द्वारा परामर्शी की क्रियाओं और सफलता की प्रभाविकता का मापन किया जाता है।

viii. **शोधकार्य-**परामर्शदाता निरन्तर शोधकार्य में संलग्न रहता है तथा उस कार्य का उपयोग भावी परिस्थितियों में परामर्शदाता स्वंय अथवा अन्य परामर्शकों द्वारा परामर्शन सेवाओं में किया जाता है।

परामर्शदाता के कार्य क्षेत्र

परामर्शदाता कहाँ कार्य करता है?

- शैक्षिक संस्थाओं में

- पुनर्वास केन्द्रों में
- उद्योगों में
- सामुहिक या विभिन्न संगठनों में
- व्यक्तिगत व्यवसाय के रूप मे
- चिकित्सालयों में

9.5 परामर्शदाता की भूमिका

किसी भी व्यक्ति की समस्याएं और आवश्यकताएं भिन्न-भिन्न होती हैं जो परामर्शी के व्यवहार को प्रभावित करती हैं। शैक्षणिक आधार पर परामर्शन की तकनीकियों और प्रक्रिया लक्ष्यों में भिन्नता पाई जाती है। परामर्शन की प्रक्रिया का कई उपागमों में अध्ययन किया जाता है और प्रत्येक उपागम के अनुसार परामर्शदाता की भूमिका अलग-अलग होती है।

9.5.1 मनोविश्लेषणात्मक उपागम

- परामर्शी को वार्ता के दौरान प्रेरित करना ताकि वह अपने मस्तिष्क में निहित बाल्यावस्था के अनुभवों की अभिव्यक्ति कर सके।
- वार्ता हेतु उपयुक्त परिवेश का निमार्ण करना।
- मनोवैज्ञानिक परिक्षणों के द्वारा परामर्शी का मूल्यांकन करना।
- परामर्शी के चिन्ताग्रस्त रहने के कारणों की खोज करना जिनके कारण उसकी सोच व व्यवहार में अवांछनीय बदलाव आए।
- परामर्शी को उसकी सामर्थ्य से अवगत कराना तथा जीवन को बेहतर स्थिति में लाने केलिएसामाजिक जागरूकता का विकास करना।
- अनुभव, भावनाओं और विचारों को परामर्शी के साथ बांटना तथा मनोचिकित्सीय सम्बन्धों को स्थापित करना।
- परामर्शदाता एक मनोचिकित्सक तथा मित्र की भूमिका का निर्वहन करता है।

9.5.2 व्यक्ति केन्द्रित उपागम

- परामर्शदाता एक सहायता प्रदान करने वाले व्यक्ति की भूमिका का निर्वहन करता है। वह निर्देशक के रूप में कार्य नहीं करता।
- परामर्शदाता एक ऐसे परिवेश का निर्माण करता है जिसमें परामर्शी को सहज और मुक्त वातावरण की अनुभूति हो तथा वह अपनी समस्याओं से सम्बन्धित समाधान की खोज कर सके।

9.5.3 संज्ञानात्मक उपागम

इस प्रकार के परामर्शन में परामर्शदाता एक शिक्षक अथवा समन्वयक की तरह कार्य करता है। वह परामर्शी की क्षमताओं और योग्यताओं का मूल्यांकन कर शिक्षण कार्य करता है या अन्य शिक्षकों को परामर्शी के संज्ञानात्मक व्यवहार के बारे में अवगत कराकर उसके अनुरूप शिक्षण कार्य केलिएजानकारी प्रदान करता है।

9.5.4 व्यवहार उपागम

इस प्रकार के परामर्शन में परामर्शदाता सलाहकार, दिशा निर्देशन तथा प्रेरक का कार्य करता है वह परामर्शी के सामने एक आदर्श प्रस्तुत करता है जिससे वह परिस्थितियों के साथ समायोजन कर सके

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. शैक्षणिक आधार पर _____की तकनीकियों और प्रक्रिया लक्ष्यों में भिन्नता पाई जाती है।
2. _____एक सहायता प्रदान करने वाले व्यक्ति की भूमिका का निर्वहन करता है।
3. किसी भी व्यक्ति की समस्याएं और आवश्यकताएं भिन्न-भिन्न होती हैं जो _____के व्यवहार को प्रभावित करती है।

9.6 परामर्शदाता के उत्तरदायित्व

यहाँ परामर्शदाता के उत्तरदायित्वों का वर्णन दो भागों में किया गया गया है। प्रथम भाग उसके कार्यों तथा दूसरा प्रथम भाग व्यवसायिक नैतिकता से सम्बन्धित है।

9.6.1 कार्यकारी उत्तरदायित्व

परामर्शदाता परामर्शन सम्बन्धी कार्यों के सफल संगठन और संचालन केलिएउत्तरदायी होता है। उसके कार्यकारी उत्तरदायित्व निम्न हैं-

- परामर्श कार्यक्रम की योजना बनाना।

- परामर्शन/निर्देशन समितियों के कार्यों का समन्वयन।
- व्यवसायिक वार्ताओं एवं सम्मेलन दिवसों का आयोजन करना।
- अनुस्थापन कार्य।
- विषयों के चयन में सहायता देना।
- अध्ययन-आदतों का अध्ययन कर मार्गदर्शन करना।
- व्यवसायों के चयन में सहायता देना।
- उच्च शिक्षा हेतु प्रवेश प्राप्त करने में सहायता प्रदान करना।
- शोध कार्य करना।
- प्रकाशन कार्य करना।
- अभिभावकों, शिक्षकों, माता-पिता, सम्बन्धित अधिकारियों, व्यक्तियों और चिकित्सकों से परामर्शी के बारे में सूचनाएं लेना तथा उन्हें यथास्थिति से अवगत कराना।
- अभिलेखों का संग्रहण कर संरक्षित रखना।

9.6.2 नैतिक उत्तरदायित्व

परामर्शदाता के नैतिक उत्तरदायित्व निम्न हैं।

- परामर्शदाता को मानकों और अपनी सीमाओं का ज्ञान होना चाहिए। परामर्शदाता को परामर्शी की समस्या की पहचान कर उस पर अनावश्यक प्रयोग करने से बचना चाहिए।
- परामर्शदाता को अपनी क्षमताओं के अनुरूप निर्णय लेना चाहिए-कि क्या मैं इस समस्या के समाधान में छात्र की सहायता कर सकता हूँ या नहीं, यदि नहीं तो किसी अन्य एजेन्सी या परामर्शदाता के पास भेज देना चाहिए।
- परामर्शदाता को परामर्शी से प्राप्त सूचनाओं को गोपनीय रखना चाहिए।
- परामर्शदाता को परामर्शी के अधिकारों के बारे में उचित ज्ञान होना चाहिए।
- परामर्शदाता को नैतिक संहिता की जानकारी होनी चाहिए।
- व्यवसायिक संविदा सम्बन्धी शर्तों की अग्रिम एंव लिखित जानकारी परामर्शी को देना।
- परामर्शी का किसी भी रूप में यौनिक शोषण नहीं किया जाना चाहिए।

- परामर्शदाता द्वारा परामर्शी के प्रति धर्म, जाति, लिंग, क्षेत्र आदि आधार पर भेदभाव नहीं करना।
- प्राप्त सूचनाओं का ईमानदारी से विश्लेषण करना।
- परामर्शी और परामर्शदाता के हितों को संरक्षित करने केलिएभारत में नैतिक संहिता और निर्देशक नियमों से सम्बन्धित भारतीय पुर्नवास परिषद द्वारा लागू किया गया अधिनियम महत्वपूर्ण है। जबकि अमेरिका में अमेरिकिन पर्सनल गाइडेन्स एसोसिएसन द्वारा लागू की गई संहिता है।

9.7 सारांश

परामर्शदाता एक विशेषज्ञ होता है जिसके ऊपर विद्यालय परामर्शन और निर्देशन सेवाओं को सम्पादित करने की जिम्मेदारी होती है। विद्यालयों में परामर्शदाता का कार्य कुशल तथा अनुभवी शिक्षक करता है।परामर्शदाता का मुख्य उद्देश्य छात्रों को शैक्षिक, व्यवसायिक और वैयक्तिक समस्याओं की जानकारी प्राप्त करने और उनका समाधान करने में सहायता प्रदान करना है।एक अच्छे परामर्शदाता को बौद्धिक, शैक्षिक तथा वैयक्तिक रूप से योग्य होना चाहिए तथा उसने परामर्श सेवा से सम्बन्धित आवश्यक प्रशिक्षण किया हो।परामर्शदाता को विभिन्न परामर्श की विभिन्न विधियों तथा परीक्षण एवं उपकरणों के प्रशासन के बारे में ज्ञान होना चाहिए।परामर्शदाता को अपने व्यवसाय से सम्बन्धित नैतिक उत्तरदायित्वों की सम्पूर्ण जानकारी होनी चाहिए। इसकेलिएउसे समय-समय पर सेवा सम्बन्धी आचार संहिता का अध्ययन करना चाहिए।कैरियर के रूप में एक परामर्शदाता शैक्षिक संस्थाओं, पुर्नवास केन्द्रों, उद्योगों, सामुदायिक केन्द्रों, चिकित्सालयों अथवा व्यक्तिगत व्यवसाय के रूप में कार्य कर सकता है।परामर्शदाता, परामर्शन हेतु शिक्षक, मित्र, अभिभावक अथवा चिकित्सक की भांति कार्य करता है।विद्यालीय सन्दर्भ में परामर्शदाता का कार्य परामर्श प्रक्रिया का सफल संचालन करना है। सम्बन्धित सूचनाओं की जानकारी से शिक्षकों, अभिभावकों तथा अन्य सम्बन्धित व्यक्तियों को अवगत करना है।

9.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. परामर्शदाताओं
2. अनुसरण

3. ज्ञान
4. परामर्शन
5. परामर्शदाता
6. परामर्शी

9.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. बारकी वी0 जी0 एण्ड मुख्योपपध्याय, वी0 (1991), गाइडेन्स एण्ड कॉन्सिलिंग-ए मैन्युल, स्टर्लिंग पब्लिसर प्रा0 लि0, न्यू दिल्ली।
2. शर्मा आर0 ए0, शैक्षिक एंव व्यायसायिक निर्देशन तथा परामर्श, सूर्या पब्लिकेसन, मेरठ।
3. राय, अमरनाथ एंव अस्थाना (2006), निर्देशन एंव परामर्शन, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिकेशन, दिल्ली।
4. कक्कड़, एस0 बी0 (1989), 'एजुकेशनल साइकोलॉजी एण्ड गाइडेन्स, द इण्डियन पब्लिकेशन, हिल रोड, अम्बाला केन्ट।
5. भटनागर, आशा तथा गुप्ता निर्मल (1999), गाइडेन्स एण्ड कॉउन्सिलिंग: थ्योरिटिकल
6. http://www.addictionfo.org/articals/II/I/stages–of–changesmodel/page.html.

9.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. निम्नलिखित सूची को ध्यान में रखकर आप अपनी व्यक्तिगत विशेषताओं का आंकलन कीजिए।
   i. बौद्धिक क्षमता
   ii. अन्य व्यक्तियों को सक्रियता के साथ सुनने की क्षमता
   iii. सहनशीलता
   iv. आदर करना
   v. व्यवहार में लचीलापन
   vi. दूसरों की भावनाओं को स्वीकार करना
   vii. प्रयत्नशील
   viii. ईमानदारी
2. एक अच्छे परामर्शदाता में कौन कौन से मुख्य गुण होने चाहिए?

3. विद्यालयी सन्दर्भ में परामर्शदाता के कार्यों का वर्णन कीजिए?

इकाई 10 -आंकड़ों का संकलन तथा महत्व

10.1 प्रस्तावना
10.2 उद्देश्य
10.3 आंकड़ों के संकलन का महत्व
10.4 आंकड़ों के संकलन के उपकरण
10.5 सारांश
10.6 स्वमूल्यांकन प्रश्नों के उत्तर
10.7 संदर्भ ग्रंथ सूची
10.8 निबंधात्मक प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

विद्यालय में परामर्श का केन्द्र बिन्दु छात्र होता है। छात्र को बिना समझे उसकी समस्याओं का समाधान करने केलिएसहायता प्रदान करना असम्भव है। छात्र की व्यक्तिगत विशेषताओं, योग्यताओं तथा रूचियों को समझकर ही प्रभावशाली ढंग से सहायता प्रदान की जाती है। इसकेलिएछात्र से सम्बन्धित अनेक प्रकार की सूचनाएं एकत्रित की जाती हैं। सूचनाएं ऐसी होनी चाहिए जो छात्र के व्यवहार के बारे में सटीक जानकारी दें। परामर्शदाता द्वारा सूचनाओं अथवा आँकड़ों के संग्रह करने केलिएकई प्रकार की विधियों और परीक्षण उपकरणों का उपयोग किया जाता है।

इस इकाई में आप परामर्श केलिएछात्र से सम्बन्धित सूचनाओं तथा तथ्यों का संग्रह करने के विभिन्न स्रोत कौन से हैं। प्राप्त आंकड़े परामर्श की प्रक्रिया में क्यों महत्वपूर्ण है तथा इनको प्राप्त करने की कौन सी महत्वपूर्ण विधियाँहैं। इसका विस्तार से अध्ययन करेंगे।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. सूचनाओं अथवा आंकड़ों के संकलन के महत्व को समझ सकेंगे।
2. सूचनाओं की प्राप्ति के स्रोतों से अवगत हो सकेंगे।
3. सूचनाओं के संग्रहण हेतु विभिन्न विधियों की व्याख्या कर सकेंगे।

10.3 आंकड़ों के संकलन का महत्व

आकड़ों का अर्थ

परामर्श की प्रक्रिया में आँकड़े वे तथ्य एवं सूचनाएं होती हैं जिनका सम्बन्ध परामर्शी और उसके परिवेश से होता है।

आकड़ों के संकलन का महत्व

परामर्शी और उसके परिवेश से सम्बन्धित आंकड़ों या सूचनाओं का परामर्श सेवा में महत्वपूर्ण स्थान है। जिनके अभाव में परामर्शदाता कभी भी छात्र को समस्या समाधान केलिएउचित दिशा प्रदान नहीं कर सकता है। प्राप्त सूचनाएं ही समस्या समाधान का मार्ग तैयार करती हैं। इनका महत्व निम्नलिखित बिन्दुओं से स्पष्ट है।

i. **यथार्थ का बोध-** आकड़ों अथवा सूचनाओं के द्वारा परामर्शदाता को परामर्शी के जीवन की साधारण तथा विशेष दशाओं की वास्तविकता से परिचित होने का अवसर प्राप्त होता है।
ii. **परिवर्तन के अध्ययन में सहायक-** आकड़ें परामर्शी के परिवेश तथा उसकी स्वयं की दशाओं में होने वाले परिवर्तन के बारे में अध्ययन करने में सहायक होते हैं।
iii. **योजना निर्माण में सहायक-** प्राप्त आंकड़ों अथवा सूचनाओं के आधार पर परामर्श की कार्य योजना का निर्माण किया जाता है तथा उसको फलीभूत करने का प्रयास परामर्शदाता करता है।
iv. **कार्य-कारण सम्बन्ध की खोज-** प्राप्त सूचनाएं परामर्शी की दशा तथा घटना के कारणों और उसके परिणामों से अवगत कराती हैं।
v. **समस्या के समाधान में सहायक-** समस्या के कारणों का पता करने के बाद समाधान का आधार ज्ञात किया जा सकता है।

आंकड़ों के क्षेत्र

परामर्श कार्यक्रम केलिएदो प्रकार की सूचनाओं की आवश्यकता होती हैः-

a. परामर्शी के बारे में
b. परामर्शी के परिवेश के बारे में।

परामर्शी से सम्बन्धित दोनों प्रकार की सूचनाओं के संकलन केलिएनिम्न क्षेत्रों का अध्ययन किया जाता है।

a. पारिवारिक पृष्ठभूमि

b. विद्यालीय अभिलेख
c. शैक्षिक उपलब्धि एंव प्रगति
d. मानसिक क्षमताएं
e. रूचियां
f. व्यक्तित्व
g. स्वास्थ्य सम्बन्धी

10.4 आंकड़ों के संकलन के उपकरण

परामर्श की प्रक्रिया में सूचनाओं को प्राप्त करने केलिएनिम्नलिखित उपकरणों का प्रयोग किया जाता है।

1. प्रश्नावली
2. साक्षात्कार
3. व्यक्ति इतिहास
4. संचयी अभिलेख
5. निर्धारण मापनी
6. अनुसूची
7. पर्यवेक्षण
8. सामाजिकता मापन
9. मनौवेज्ञानिक परीक्षण
    a. अभिरूचि परीक्षण
    b. बुद्धि परीक्षण
    c. रूचि मापन
    d. व्यक्तित्व मापन
10. शिक्षक निर्मित और मानकीकृत परीक्षण

प्रश्नावली

प्रश्नावली में प्रश्नों की एक व्यवस्थित श्रृंखला होती है जिसमें एक प्रपत्र में परामर्शी अथवा छात्र स्वंय उत्तर देता है। परामर्शदाता आवश्यकतानुसार स्वंय प्रश्नावली निर्मित कर उपयोगी सूचनाएं

प्राप्त करता है। प्रश्नावली को एक साथ बड़े समूह तथा दूरस्थ लोगों से सूचनाएं प्राप्त करने केलिएप्रयोग में लाया जाता है।

प्रश्नावली की दो मुख्य भागों में रचना की जाती है। पहला भाग परामर्शी के बारे में सामान्य जानकारी से सम्बन्धित होता है।

नमूना (प्रथम भाग)

छात्र का नाम -----

कक्षा तथा वर्ग -----

आयु -----

लिंग -----

निवास क्षेत्र-(ग्रामीण अथवा शहरी) -----

जाति (सामान्य/अनुसूचित जाति/अनुसूचित जन जाति/अ0पि0 वर्ग) -----

वैवाहिक स्थिति ------

माता-पिता की आय ------

दूसरे भाग में प्रश्नों की श्रृंखला निहित होती है जो छात्र के व्यवहार अथवा समस्या के आंकलन करने केलिएआवश्यक होते हैं।

प्रश्नों के आधार पर प्रश्नावली तीन प्रकार की होती है।

1. खुली प्रश्नावली
2. प्रतिबन्धित/बन्द प्रश्नावली
3. मिश्रित प्रश्नावली

खुली प्रश्नावली- इस प्रकार की प्रश्नावली में छात्र प्रश्नों का उत्तर अपने शब्दों में देते हैं।

उदाहरण-

प्रश्न-आप अपने सबसे प्रिय मित्र की दो आदतों के बारे में लिखिए।

बन्द प्रश्नावली-इस प्रकार की प्रश्नावली में प्रश्नों के सम्भावित उत्तर प्रश्नावली में निहित होते हैं।

उदाहरण-

प्रश्न-गणित विषय के शिक्षक आपके गृहकार्य की जांच करते हैं। (सही उत्तर के सामने सही(√) का चिह्न लगाएं)

उत्तर -हमेशा/कभी-कभी/बिल्कुल भी नहीं

मिश्रित प्रश्नावली-मिश्रित प्रश्नावली के अन्तर्गत खुली तथा बन्द दोनो प्रकार के प्रश्नों को सम्मिलित किया जाता है।

साक्षात्कार

व्यक्ति के बारे में सूचनाओं के संकलन के लिए साक्षात्कार किसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु वार्तालाप करना है। साक्षात्कार परामर्शी और परामर्शदाता के पारस्परिक सम्बन्धों पर आधारित अन्तःक्रिया की प्रविधि है। साक्षात्कार प्रविधि की मुख्य विशेषता इसका लचीलापन है अतः इसके कारण परामर्शदाता आवश्यकतानुसार प्रश्नों को परिवर्तित या उनमें सुधार कर सकता है। जिससे परामर्शी अपनी दिनचर्या, रूचियों अनुभवों, उपलब्धियों और योजनाओं के बारे में सहज रूप से भावनाओं की अभिव्यक्ति कर सके।

व्यक्ति इतिहास

जटिल शैक्षिक तथ्यों के कार्य-कारण सम्बन्धों से सम्बन्धित सूचनाओं को प्राप्त करने के लिए व्यक्ति इतिहास विधि का प्रयोग किया जाता है। इस विधि का उपयोग कुसमायोजित विद्यार्थियों और उनकी अध्ययन सम्बन्धी कठिनाईयों का अध्ययन करने केलिएकिया जाता है। इसकेलिएपरामर्शदाता को विद्यार्थियों के भूतकालीन अनुभव और वर्तमान समस्याओं के बारे में गहन एवं विस्तृत सूचना प्राप्त करनी होती हैं।

इस विधि में विद्यार्थी अथवा परामर्शी के बारे में प्राथमिक सूचनाओं जैसेः नाम, आयु, यौन, माता-पिता के बारे में जानकारी, शिक्षा, व्यवसाय, आय, सामाजिक स्तर, परिवार में सदस्यों की संख्या आदि एकत्रित की जाती है। जिसके बाद विद्यार्थी के गत इतिहास जिसमें गृहकार्य से लेकर वर्तमान दशाओं, बौद्धिक स्तर, रूचि, शौक, शैक्षिक उपलब्धि आदि सूचनाओं को प्राप्त किया जाता है। व्यक्ति अध्ययन विधि में सामान्य की अपेक्षा असामान्य व्यवहार करने वाले विद्यार्थियों के अध्ययन पर बल दिया जाता है।

व्यक्ति अध्ययन विधि -नमूना पत्रः

नाम	क ख ग
आयु	.....
भाषा	हिन्दी/.....
पिता का नाम	.....
पिता का व्यवसाय	.....

माता का नाम .....

माता का व्यवसाय .....

परिवार की मासिक आय .....

पता .....

वर्तमान समस्या

a. पढ़ाई में कमजोर
b. विद्यालय से अनुपस्थित रहना
c. .....

जन्म इतिहास-

जन्म के समय वजन .....

जन्म के समय लम्बाई .....

जन्म प्रक्रिया (सामान्य अथवा ऑपरेशन द्वारा) .....

परिवार की स्थिति- संयुक्त परिवार/एकल परिवार

व्यवहारिक समस्या- नाखुन चबाना,

अकेले बैठना,.....

शैक्षिक इतिहास- पिछले वर्षों का रिकार्ड तथा छात्र के विषय में शिक्षकों की राय।

निदान .....

संचयी अभिलेख

संचयी अभिलेख, किसी छात्र के शारीरिक, शैक्षिक तथा सामाजिक विकास से सम्बन्धित सूचनाओं का एक संग्रह होता है। परामर्शदाता, विद्यालयों में निहित अभिलेखों के माध्यम से सूचना प्राप्त कर छात्रों की समस्याओं का समाधान करते हैं।

संचयी अभिलेखों में निहित सूचनाएं-

1. परामर्शी (छात्र) का परिचय एंव फोटो
2. परिवारिक पृष्ठभूमि
3. छात्र का स्वास्थ्य अभिलेख
4. शैक्षिक अभिलेख
5. अतिरिक्त क्रिया-कलापों का अभिलेख
6. चारित्रिक अभिलेख

7. विशिष्ट घटनाओं का अभिलेख
8. छात्र के शौक से सम्बन्धित अभिलेख
9. विशिष्ट उपलब्धियों से सम्बन्धित अभिलेख

निर्धारण मापनी

निर्धारण मापनी में व्यक्ति द्वारा किसी परिस्थिति, संस्था, वस्तु तथा किसी अन्य व्यक्ति के बारे में दी गई अनुमति या निर्णय का मापन किया जाता है। इसमें व्यक्ति अथवा छात्र की उपलब्धियों के विभिन्न पक्षों का रेटिंग कर प्राप्त निर्णयों को अंकों में बदला जाता है।

निर्धारण मापनी को मुख्यतः पांच प्रकारों में बांटा गया है।

1. अंकीय मापनी
2. रेखीय मापनी
3. प्रमाणित मापनी
4. संचयी अंक मापनी
5. बलात् विकल्प मापनी

निर्धारण मापनी में प्राप्त निर्णयों अथवा अनुमति को तीन, पांच, सात तथा नौ बिन्दुओ में वर्गीकरण किया जाता है।

अतिउत्तम/ उत्तम/औसत/औसत से निम्न स्तर/हेय

उदाहरण- पांच बिन्दुओं की मापनी-

उदाहरणः- अंग्रेजी के अध्यापक के कक्षा शिक्षण कार्य की प्रभाविकता के बारे में आपकी क्या राय है। (सही विकल्प पर सही (√) का निशान लगायें)

बहुत अधिक प्रभावी/बहुत प्रभावी/ प्रभावी/कम प्रभावी/बहुत कम प्रभावी

अनुसूची

अनुसूची उन प्रश्नों के समूह को कहते हैं जो कि परामर्शदाता द्वारा स्वयं छात्र के सामने बैठकर पूछे तथा लिखे जाते हैं। अनुसूची तथा प्रश्नावली में प्रमुख अन्तर यह है कि प्रश्नावली डाक द्वारा भेजी जाती है जबकि अनुसूची का प्रशासन परामर्शदाता व्यक्तिगत रूप से सम्पर्क स्थापित करके करता है।

पर्यवेक्षण

पर्यवेक्षण उपकरण का प्रयोग किसी व्यक्ति के बाह्य व्यवहार के अध्ययन में किया जाता है। परामर्शदाता, छात्र के कक्षा व्यवहार और उससे सम्बन्धित विभिन्न भौतिक पहलुओं जैसे-विद्यालय

भवन, घर, अध्यापक, रहन-सहन, खेल, व्यायाम की सुविधाएं आदि का अवलोकन कर अभिलेख तैयार करता है।

पर्यवेक्षण दो प्रकार का होता है।

i. सहभागी
ii. असहभागी

सहभागी पर्यवेक्षण में पर्यवेक्षणकर्ता (परामर्शदाता) स्वयं उस समूह का सदस्य बन जाता है, जिसका कि उसे निरीक्षण करना होता है जबकि असहभागी पर्यवेक्षण में परामर्शदाता समूह या परामर्शी से कुछ दूरी बनाकर बिना किसी बाधा के सूचनाओं को प्राप्त करता है।पर्यवेक्षण अथवा अवलोकन करने केलिएविभिन्न उपकरणों जैसे-विडियो कैमरा, टेपरिकार्डर, क्लोज सर्किट कैमरा का प्रयोग किया जाता है। इनके उपयोग से छात्र के व्यवहार का सही आंकलन करने में सहायता मिलती है।

समाजमिति

समाजमिति उपकरण के द्वारा सामाजिक सम्बन्धों, मूल्यों एंव अभिवृत्तियों का अध्ययन किया जाता है। समाजमिति में छात्रों से सूचनाएंप्राप्त करने केलिएप्रश्नावली, अनुसूची, निरीक्षण, वर्गक्रम मापन का उपयोग किया जाता है। इन उपकरणों में कुछ वर्गीकृत स्थितियां होती हैं जिनका विस्तार स्वीकृत से लेकर अस्वीकृत (नकारात्मक) तक होता है।

उदाहरण-

आप कक्षा में शीला के साथ बैठना पसंद नहीं करते हो। (सहमत/अनिश्चित/असहमत)

आप किसके साथ खेलना पंसंद करोगे? (छात्रों के नाम अपनी पसंद के अनुसार क्रमानुसार लिखें जिसे आप सबसे ज्यादा पसंद करते हो उसका नाम पहले क्रमांक में, दूसरे को क्रमांक 2 पर, तीसरे को क्रमांक 3, चौथे को..... पर लिखें)।

1. .....
2. .....
3. .....
4. .....
5. .....

मनौवैज्ञानिक परीक्षण

छात्र की वर्तमान योग्यताओं, विशेषताओं और व्यवहारों के बारे में विश्वनीय एवं वैध सूचनाएं मनौवेज्ञानिक परीक्षणों के माध्यम से प्राप्त की जाती हैं। यहां पर हम कुछ महत्वपूर्ण मनौवैज्ञानिक परीक्षणों का वर्णन करेंगे।

बुद्धि परीक्षण

बुद्धि परीक्षण के द्वारा परामर्शी की बुद्धि लब्धि को ज्ञात किया जाता है।

बुद्धि लब्धि को ज्ञात करने केलिएसूत्र-

बुद्धि लब्धि = मानसिक आयु /वास्तविक आयुx100

बुद्धि लब्धि के आधार पर व्यक्तियों को निम्न श्रेणियों में बांटा गया है

बुद्धि लब्धि	श्रैणी
140 से अधिक	प्रतिभाशाली
120-140	प्रखर बुद्धि
110-120	तीव्र बुद्धि
100-110	सामान्य बुद्धि
80-100	बुद्धि दौर्बल्य
70-80	बुद्धू
50-70	मूर्ख
25-50	मूढ़
0-25	जड़

बुद्धि परीक्षणों को प्रशासन, विषयवस्तु तथा स्वरूप के आधार पर निम्न वर्गों मे विभक्त किया जाता है।

विषयवस्तु के आधार पर-

1. शाब्दिक परीक्षण- इन परीक्षणों में मात्रा का उपयोग किया जाता है।
2. अशाब्दिक परीक्षण-इनमें चित्रों, चिन्हों, आकृतियों आदि संकेतों का प्रयोग किया जाता है।

मापन के आधार पर-

1. पेपर पेंसिल परीक्षण - यह शिक्षित लोगों केलिएबनाया गया है।
2. निष्पादन परीक्षण- इन परीक्षण में शब्दों के स्थान पर अमूर्त वस्तुओं का प्रयोग किया जाता है।

प्रशासन के आधार पर-

1. व्यक्तिगत बुद्धि परीक्षण
2. सामूहिक बुद्धि परीक्षण

व्यक्तिगत परीक्षण में एक समय में एक व्यक्ति की परीक्षा ली जाती है तथा सामूहिक परीक्षण में एक समय में कई व्यक्तियों की परीक्षा ली जाती है।

स्वरूप के आधार पर-

1. गति परीक्षण
2. शक्ति परीक्षण

गति परीक्षण में एक निर्धारित समय में निश्चित प्रश्नों को हल करना पड़ता है तथा शक्ति परीक्षण में सरल से कठिन क्रम में प्रश्नों को प्रस्तुत किया जाता है जिससे यह ज्ञात किया जाता है कि, विद्यार्थी किस स्तर तक के कठिन प्रश्नों को हल कर सकता है।

कुछ महत्वपूर्ण बुद्धि परीक्षण-

1. स्टैनफॉर्ड-बिने बुद्धि परीक्षण
2. वेश्लर वयस्क बुद्धिमापनी
3. भाटिया निष्पादन बुद्धि परीक्षण माला
4. कैटेल का संस्कृत मुक्त बुद्धि परीक्षण।

अभिक्षमता परीक्षण

किसी व्यक्ति की अभिक्षमता किसी कार्य या व्यवसाय हेतु उसकी योग्यता है। व्यवसाय के चयन में परामर्शी को सहायता प्रदान करने के लिए परामर्शदाता अभिक्षमता का निर्धारण करता है। कुछ प्रमुख अभिक्षमता परीक्षण निम्न हैं।

1. सामान्य अभिक्षमता परीक्षण माला
2. विभेदक अभिक्षमता परीक्षण माला
3. यांत्रिक अभिक्षमता परीक्षण माला

रूचि मापनी

रूचि किसी वस्तु, व्यक्ति या तथ्य को पसन्द करने, उस के प्रति ध्यान केन्द्रित करने तथा उससे संतुष्टी पाने की प्रवृति है। रूचि ही वह कारण है जिसकी आवश्यकता किसी कार्य को पूर्ण क्षमता से करने की दिशा में प्रेरित करती है।

प्रमुख रूचि परीक्षण-

1. स्ट्रांग का व्यावसायिक रूचि प्रपत्र
2. कुलश्रैष्ठ का शैक्षिक रूचि प्रपत्र
3. जीस्ट चित्र रूचि सूची

व्यक्तित्व परीक्षण

व्यक्तित्व व्यक्ति के मनौदैहिक पक्षों का एक गत्यात्मक स्वरूप होता है। जिसके अंतर्गत उसके स्वभाव, चरित्र, बुद्धि, शारीरिक गठन आदि से सम्बन्धित विशेषताओं को सम्मिलित किया जाता है। परामर्शदाता व्यक्तित्व परीक्षण के द्वारा छात्रों के मूलभूत गुणों के विषय में जानकारी प्राप्त करने के पश्चात आवश्यक परामर्श कार्य करता है।

प्रमुख व्यक्तित्व परीक्षण

1. आर. वी. कैटल. का सोलह व्यक्तित्व कारक परीक्षण
2. मिनसोटा बहुपक्षीय व्यक्तित्व सूची
3. प्रसंगात्मक बोध परीक्षण
4. रोर्शा इंक ब्लाट परीक्षण

शिक्षक निर्मित और मानकीकृत परीक्षण

शिक्षक छात्रों के विभिन्न गुणों को मापने केलिएउपलब्धि परीक्षणों की रचना करता है। इन परीक्षणों के माध्यम से छात्रों द्वारा कक्षा में पढ़े गए विषयों के ज्ञान का मापन किया जाता है। शिक्षक कक्षा, खेल के मैदान और अन्य क्रियाकलापों में छात्रों के व्यवहार का अवलोकन करके उनके गुणों का मापन करता है। शिक्षक मापन हेतु मानकीकृत और अमानकीकृत परीक्षणों का उपयोग करता है। मानकीकृत परीक्षणों को स्वीकार्य उद्देश्यों के आधार पर योजनाबद्ध ढ़ंग से बनाया जाता है। इन परीक्षणों के निर्देश, प्रशासन विधि, समय सीमा, फंलाकन विधि और विवेचना निश्चित होती है।

मानकीकृत परीक्षण का प्रयोग

1. विभिन्न क्षेत्रों में अर्जित कौशलों के तुलनात्मक अध्ययन में।
2. विभिन्न विद्यालयों और कक्षाओं की तुलना करने में करने किया जाता है।

शिक्षक निर्मित परीक्षणों का प्रयोग

1. छात्रों की विशिष्ट इकाईयों में अर्जित ज्ञान का,
2. शिक्षा के विशिष्ट उद्देश्यों की पूर्ति सीमा की जानकारी केलिएकिया जाता है।

शिक्षक निर्मित परीक्षणों को निम्न प्रकार से बांटा गया है।

1. मौखिक
2. लिखित
3. प्रयोगात्मक

मानकीकृत परीक्षणों की रचना करने हेतु निम्न पदों का अनुसरण किया जाता है।

- नियोजन
- परीक्षण पदों की रचना
- परीक्षा का प्रशासन
- मानकों का निर्माण करना
- मैन्युअल का निर्माण करना

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. प्रश्नावली में प्रश्नों की एक _____ श्रृंखला होती है जिसमें एक प्रपत्र में परामर्शी अथवा छात्र स्वयं उत्तर देता है।
2. संचयी अभिलेख, किसी छात्र के शारीरिक, शैक्षिक तथा सामाजिक विकास से सम्बन्धित सूचनाओं का एक _____होता है।
3. _____उपकरण के द्वारा सामाजिक सम्बन्धों, मूल्यों एवं अभिवृत्तियों का अध्ययन किया जाता है।
4. व्यक्तित्व व्यक्ति के मनौदैहिक पक्षों का एक _____ स्वरूप होता है। जिसके अंतर्गत उसके स्वभाव, चरित्र, बुद्धि, शारीरिक गठन आदि से सम्बन्धित विशेषताओं को _____किया जाता है।
5. मानकीकृत परीक्षणों को स्वीकार्य उद्देश्यों के आधार पर_____ढ़ंग से बनाया जाता है।

10.5 सारांश

परामर्श की प्रक्रिया में परामर्शी और उसके परिवेश से सम्बन्धित आंकड़ों अथवा सूचनाओं का महत्वपूर्ण स्थान है। ये सभी आंकड़ेपरामर्शदाता को परामर्शी की वास्तविक स्थिति से अवगत कराने में सहायक होते हैं।परामर्शी से सम्बन्धित दोनों प्रकार की सूचनाओं के संकलन केलिएनिम्न क्षेत्रों काअध्ययन किया जाता है।उचित परामर्श हेतु परामर्शी की पारिवारिक पृष्ठभूमि, विद्यालीय अभिलेख, शैक्षिक उपलब्धि एंव प्रगति, मानसिक क्षमताएं, रूचियां, व्यक्तित्व तथा स्वास्थ्य से सम्बन्धित सूचनाएं एकत्रित की जाती हैं।

सूचनाएं प्रश्नावली, साक्षात्कार, व्यक्ति इतिहास, संचयी अभिलेख, निर्धारण मापनी, अनुसूची, पर्यवेक्षण, सामाजिकता मापन, मनौवेज्ञानिक परीक्षण तथा शिक्षक निर्मित और मानकीकृत परीक्षण आदि विधियों एवं उपकरणों के माध्यम से संकलित की जाती हैं। मानकीकृत परीक्षणों की रचना करने हेतु पद-नियोजन, परीक्षण पदों की रचना, परीक्षा का प्रशासन, मानकों का निर्माण करना तथा मैन्युअल का निर्माण करना है।

10.6 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. व्यवस्थित
2. संग्रह
3. समाजमिति
4. गत्यात्मक,सम्मिलित
5. योजनाबद्ध

10.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. एनेस्टेसी, एन0,(1958) साइकोलॉजिकल टैस्टिंग, दी मैकमिलन क0, न्यूयार्क।
2. क्रोनबैक,एल0जे0,(1970) ऐसेन्सियल्स ऑफ साइकोलॉजिकल टैस्टिंग, थर्ड एडिसन, न्यूयार्क हारपर एण्ड रॉ।
3. चौबे, एस0 पी0, एक्सपेरिमेन्टल साइकोलॉजी, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल एजुकेशनल पब्लिसर, आगरा।
4. टेलर, आर एल0 (1993) ऐसेसमेन्ट ऑफ एक्सेप्सलन स्टूडेन्ट्स, बोस्टन: ऐलन एण्ड बैकन।

5. गेलडार्ड, के0 एण्ड गेलडार्ड, डी0 (1997) कॉन्सिलिंग चिल्ड्रन-अ0 प्रेक्टिकल इन्ट्रोडक्सन, सेज पब्लिकेशन, न्यू देहली।
6. ली एण्ड पलौन (लेटेस्ट एडीसन) गाइडेन्स एण्ड कॉन्सिलिंग इन स्कूल्स: फाउडेन्स एण्ड प्रोसस, मैकग्रेव-हिल बुक कम्पनी, न्यूयार्क।

10.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. किसी एक छात्र की शैक्षिक और शारीरिक स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्या के कारणों का अध्ययन कर उनके निवारण के उपायों का वर्णन करे?
2. परामर्श हेतु छात्र के बारे में सूचनाओं के संकलन की विधियां कौन-कौन सी हैं। आप के दृष्टिकोण में कौन सी विधि उत्तम है, उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।

इकाई 11- मानसिक स्वास्थ्य और मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्देश्य

11.3 मानसिक स्वास्थ्य और मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान

11.3.1 मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ एवं परिभाषा

11.3.2 मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्तियों की विशेषताएं

11.4 मानसिक स्वास्थ्य की आवश्यकता

11.4.1 मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारक

11.4.2 बालक के मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने में शिक्षक् की भूमिका

11.5 मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का अर्थ

11.5.1 मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान की परिभाषाएं

11.5.2 मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के उद्देश्य

11.5.3 मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के बारे में प्रमुख तथ्य

11.6 सारांश

11.7 शब्दावली

11.8 स्वमूल्यांकन प्रश्नों के उत्तर

11.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

11.10 निबंधात्मक प्रश्न

11.1 प्रस्तावना

शिक्षा का प्रमुख कार्य एवं उद्देश्य व्यक्ति का सर्वांगीण विकास करना है। यह कथन है कि स्वस्थ शरीर में स्वस्थ्य मन का वास ही शिक्षा है। व्यक्ति के शरीर में मस्तिष्क का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि व्यक्ति जो भी कार्य करता है वह अपने मस्तिष्क के संकेत पर या मन के अनुसार करता है। जिन लोगों का मस्तिष्क स्वस्थ नहीं रहता वे जीवन की विभिन्न परिस्थितियों का सामना सफलतापूर्वक नहीं कर पाते, वे सदा एक प्रकार से मानसिक परेशानी या उलझन में रहते हैं। इसका

कारण मानसिक दुर्बलता या किसी प्रकार का विकार होता है। उन्हें जीवन में पग-पग पर कठिनाइयों, निराशाओं का सामना करना पड़ता है। मानसिक उलझनों के कारण वे समाज में अपने को समायोजित नहीं कर पाते। संसार में वे ही व्यक्ति भौतिक और सामाजिक परिस्थितियों मे अपने को समायोजित कर पाते हैं जिनका मानसिक स्वास्थ्य अच्छा होता है। मानव जीवन में शारीरिक स्वास्थ्य के साथ ही मानसिक स्वास्थ्य की ओर ध्यान दिया जाना आवष्यक है। व्यक्तित्व का विकास तभी सम्भव है जब बालक का शरीर और मन पूर्ण रूप से स्वस्थ हो, क्योंकि शरीर और मन का घनिष्ट सम्बंध है।

11.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. मानसिक स्वास्थ्य और मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
2. मानसिंक स्वास्थ्य का अर्थ, परिभाषाएं व मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्तियों की विशेषताओं का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
3. मानसिक स्वास्थ्य की आवश्यकता व मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारकों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
4. मानसिक स्वास्थ्य में शिक्षक् की भूमिका का ज्ञान करसकेंगे।
5. मानसिकक स्वास्थ्य विज्ञान का अर्थ, परिभाषाएं व उद्देश्योका ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
6. मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के प्रमुख तथ्यों को जान सकेंगे।

11.3 मानसिक स्वास्थ्य और मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान

मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान एक ऐसा विज्ञान है जो व्यक्तियों में मानसिक स्वास्थ्य (mental Health) को सुदृढ़ रखने तथा मानसिक बीमारी (Mental Illness) न होने देने संबंधित तथ्यों को उजागर करता है। मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के बारे में हमें अतीत काल में भी चर्चा का प्रसंग मिलता है, परन्तु इसकी वैज्ञानिक शुरूआत किल्फोर्ड बीयर्स (Clifford Bears) द्वारा 1990 में हुई। बीयर्स येल विश्वविद्यालय (Yale University) के स्नातक थे जो अनावश्यक मानसिक तनाव के कारण आत्महत्या कर लेना चाहते थे, परन्तु उन्हें आत्महत्या नहीं करने दी गई। जब वे मानसिक रूप से स्वस्थ्य होकर निकले तो उन्होंने अपनी आत्मकथा (Autobiography)1908 में लिखी, जिसमें उन्होंने अमानवीय व्यवहारों का भी जिक्र किया, जो अस्पताल में उन्हें सहने पड़े थे। इसका परिणाम यह हुआ कि उस समय मानसिक अस्पतालों में रोगियों के साथ मानवीय व्यवहार किए जाने पर

एडोल्फ मायर्स (Adolf Meyers) के नेतृत्व में एक आन्दोलन चलाया गया, तभी से मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का विधिवत प्रयोग होने लगा। 1911 में मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के लिए पहला संघ (First Society) की भी स्थापना की गई। सन् 1919 में अमेरिका में स्वास्थ्य विज्ञान के लिए एक राष्ट्रीय संघ का निर्माण किया गया और आगे चलकर अंतर्राष्ट्रीय कमेटी (International Committee) में बदल गया।

11.3.1 मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ एवं परिभाषा

मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ मानसिक रोगों की अनुपस्थिति नहीं है। इसके विपरीत यह व्यक्ति के दैनिक जीवन का सक्रिय और निश्चित गुण है। यह गुण उस व्यक्ति के व्यवहार में व्यक्त होता है, जिसका शरीर और मस्तिष्क एक ही दिशा में साथ-साथ कार्य करते हैं। उसके विचार, भावनाएं और क्रियाएं एक ही उद्देश्य की ओर सम्मिलितरूप से कार्य करती है। मानसिक स्वास्थ्य, कार्य की ऐसे आदतों और व्यक्तियों तथा वस्तुओं के प्रति ऐसे दृष्टिकोणों को व्यक्त करता है। जिनसें व्यक्ति को अधिकतम संतोष और आनन्द प्राप्त होता है। और व्यक्तियों तथा वस्तुओं के प्रति ऐसे दृष्टिकोणों को व्यक्त करता है। जिनमें व्यक्ति को अधिकतम संतोष और आनन्द प्राप्त होता है। व्यक्ति को यह संतोष और आनन्द उस समूह या समाज से जिसका कि वह सदस्य होता है तनिक भी विरोध किए बिना प्राप्त करना पड़ता है। इस प्रकार मानसिक स्वास्थ्य, समायोजन की यह प्रक्रिया है। जिसमें समझौता और सामंजस्य, विकास और निरन्तरता का समावेश् रहता है।

मानसिक स्वास्थ्य की परिभाषा

मानसिक स्वास्थ्य से सम्बंधित कुछ परिभाषाएं निम्नलिखित हैं

कार्ल मेंनिगर (Karle Meninger)1945 के अनुसार- ''मानसिक स्वास्थ्य अधिकतम खुश तथा प्रभावशीलता के साथ वातावरण एवं उसके प्रत्येक दूसरे व्यक्तियों के साथ मानव का समायोजन है। यह एक संतुलित मनोदशा, सतर्क बुद्धि, सामाजिक रूप से मान्य व्यवहार तथा खुशमिजाजबनाएरखने की क्षमता है।''

स्ट्रेज (Strange)1965 के अनुसार- ''मानसिक स्वास्थ्य एक ऐसी सीखे गए व्यवहार के वर्णन के अलावा कुछ नहीं है जो सामाजिक रूप से समायोजी होता है और जो व्यक्ति को जिन्दगी के साथ पर्याप्त रूप से अनुकूलन में मदद करता है।''

हेडफील्ड (Healdfield) के अनुसार- ''मानसिक स्वास्थ्य सम्पूर्ण व्यक्तित्व का पूर्ण सांमजस्य के साथ कार्य करना है।''

लैडेल (Ladel) के अनुसार- ''मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ है वास्वविकता के धरातल पर वातावरण से पर्याप्त सांमजस्य करने की योग्यता।''

कुप्पूस्वामी (Kupuswami) के अनुसार- ''मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ है दैनिक जीवन में भावनाओं, इच्छाओं, महत्वाकांक्षाओं, आदर्शों में सन्तुलन रखने की योग्यता। इसका अर्थ है जीवन की वास्तविकताओं का सामना करने और स्वीकार करने की योग्यता।''

11.3.3 मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्तियों की विशेषताएं

मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्तियों की विशेषताएं निम्नलिखित हैं-

1. **आत्मज्ञान Self Knowledge :-** मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्ति की एक प्रमुख विशेषताए यह है कि उसे अपनी प्रेरणा, इच्छा, भाव, आकांक्षाओं आदि का पूर्ण ज्ञान होता है। वह क्या कर रहा है?क्यों इसमें इस ढंग का भाव उत्पन्न हो रहा है?उसकी आकाक्षाएं क्या हैं? आदि-आदि।
2. **आत्म मूल्यांकन Self Evolution-** मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्ति आसानी से अपने गुण-दोष की परख कर लेता है। वह अपने व्यवहार का तटस्थ होकर अध्ययन करता है तथा अपने व्यवहार की परिसीमाओं (Limitation) की परख करता है।
3. **आत्म श्रद्धा Self Steam:-** मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्ति में आत्म श्रद्धा काफी होती है, जिसके कारण उसमें आत्मविश्वास (Self Confidence) आत्मबल तथा अपने भावों (Feeling) को स्वीकार करते हुए कार्य करने की क्षमता होती है।
4. **संतोषजनक संबंधबनाएं रखने की क्षमता (Abilityto Form Satisfying Relationship)** :- मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्ति की एक विशेषता यह है कि वह दूसरों के साथ संतोषजनक सम्बंध बनाए रखने में सक्षम होता है। वह कभी दूसरों के सामने अवास्तविक मांग नहीं पेश् करता। अर्थात उसका सम्बंधदूसरों के साथ हमेशा संतोषजनक बना रहता है।
5. **शारारिक इच्छाओं की संतुष्टि (Satisfaction of Body Desire):-** मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्ति की एक विशेषता है कि वह अपनेशारीरिक अंगों के कार्यों के प्रति एक स्वस्थ्य एवं धनात्मक मनोवृत्ति रखता है। वह इनके कार्यों से पूर्ण रूप से अवगत रहते हुए भी उसमें कोई भी आशक्ति(Indulgence)नहीं दिखाता है।
6. **उत्पादी एवं खुश् रहने की क्षमता (Ability to be Productive and Happy):-** मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति अपनी क्षमता को उत्पादी कार्य (Productive Work) में

लगाते हैं तथा उस कार्य से वे काफी खुश रहते हैं। वह ऐसे कार्य में अच्छा उत्साह एवं मनोबल दिखाते हैं और अपने कोखुशमिजाज दिखाते हैं।

7. **स्पष्ट जीवन लक्ष्य Clear Life Goal :-** मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति का एक स्पष्ट जीवन लक्ष्यहोता है। वह जीवन लक्ष्य को निर्धारित कर उसे प्राप्त करने का हर सम्भव प्रयास करता है। प्रायः वह अपनेजीवन लक्ष्य का निर्धारण करने में अपनी क्षमताओं, योग्यताओं एवं दुर्बलताओं को मजेदार रखता है।
8. **वास्तविक प्रत्यक्षण (Realistic Perception) :-** मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति किसी वस्तु, घटना याचीज का प्रत्यक्षण वस्तुनिष्ठ ढंग से करते हैं। वे इन चीजों का प्रत्यक्षण ठीक उसी ढंग से करने की कोशिश करते हैं जो हकीकत होती है। वे अपनी ओर से प्रत्यक्षण करते समय कुछ काल्पनिक तथ्यों का सहारा नहीं लेते।
9. **व्यक्तिगत सुरक्षा की भावना Sense of Personal safety) :-**ऐसे व्यक्ति में व्यक्तिगत सुरक्षा की भावना होती है। वह अपने समूह में अपने को सुरक्षित समझता है। वह जानता है कि उसका समूह उससे प्रेम करता है और उसे उसकी आवश्यकता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. _____में मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के लिए पहला संघ (First Society) की भी स्थापना की गई।
2. मानसिक स्वास्थ्य, कार्य की ऐसी आदतों और व्यक्तियों तथा वस्तुओं के प्रति ऐसे दृष्टिकोणों को व्यक्त करता है। जिनसे व्यक्ति को अधिकतम _____और _____प्राप्त होता है।
3. मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति की एक विशेषता है कि वह अपनेशारीरिक अंगों के कार्यों के प्रति एक स्वस्थ एवं धनात्मक _____रखता है।
4. मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति किसी वस्तु, घटना याचीज का प्रत्यक्षण _____ढंग से करते हैं।

11.4 मानसिक स्वास्थ्य की आवश्यकता

बालक तथा शिक्षक के मानसिक स्वास्थ्य का शिक्षा में अत्यधिक ध्यान रखा जाता है। बालक भविष्य की नींव है, इसलिए उसका मानसिक रूप से स्वस्थ्य बने रहना आवश्यक होता है। शिक्षक भविष्य का निर्माता है। इसलिए, अगर निर्माता मानसिक रूप से स्वस्थ नहीं होगा तो भावी

समाज विकृत हो जाएगा। क्योंकि बालक तथा शिक्षक दोनों के मानसिक स्वास्थ्य का ध्यान रखना आवश्यक है। फ्रेंडसन के अनुसार-'' मानसिक स्वास्थ्य और अधिगम से सफलता का बहुत अधिक घनिष्ठ सम्बंध है।'' उन शब्दों से यह स्पष्ट होता है कि बालक और शिक्षक दोनों का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा होना अनिवार्य है। यदि शिक्षक प्रभावशाली, त्याग, कर्तव्यपरायण, नैतिक, सदाचारी है, तब इन गुणों का प्रभाव छात्रों के मस्तिष्क पर सकारात्मक रूप से पड़ता है, जिससे समाज का सही विकास होता है।

11.4.1 मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारक

बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक निम्नलिखित हैं:-

1. **शारीरिक स्वास्थ्य (Physical Health)** - मनौवैज्ञानिक अध्ययनों से यह स्पष्ट हो गया है कि शारीरिक स्वास्थ्य तथा मानसिक स्वास्थ्य में बहुत ही घनिष्ठ सम्बंध है। जिस बालक का शरीर निरोग होता है व स्वस्थ्यहोता है। वह अत्यधिक खुश रहता है, तथा साथ ही साथ उसमें किसी प्रकार की चिन्ता, संघर्ष एवं विरोधाभास जैसे तत्व नहीं होते हैं।
2. **घरेलू वातावरण (Home Environment)-** हेडफील्ड (Headfield)1962 के अनुसार जब बालक का घरेलू वातावरण ऐसा होता है जहां उसे विशेष दुलार-प्यार, स्नेह आदि मिलता है तथा उसकी अधिकतर आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, तो ऐसे बालक का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा होता है। यदि घरेलू वातावरण में झगड़ा अधिक व शान्ति कम पाई जाती है तो बालक तनावग्रस्त जीवन यापन करता है।
3. **स्कूल का वातावरण (School Environment)-**यदि बालक ऐसे स्कूल में पढ़ता है जहां का वातावरण अधिक सख्त होता है, तथा अनुशासन पर जरूरत से ज्यादा बल दिया जाता है तथा जहां के शिक्षक के व्यवहार छात्रों के प्रति नरम न होकर हृदयविदारक होते हैं वहां के बालकों का मानसिक स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता है।
4. **माता-पिता का मानसिक रोग से पीड़ित होना(Mentally ill Person)-** यदि बालक ऐसा है जिसके माता-पिता दुर्भाग्यवश् स्वयं ही मानसिक रोग से पीड़ित हैं तो उनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता तथा उसमें भी मानसिक रोग से पीड़ित हो जाने की सम्भावना अधिक बढ़ जाती है। इसके दो कारण हैं पहला कारण अनुवांशिकता है तथा दूसरा कारण ऐसे माता-पिता द्वारा एक दोषपूर्ण मॉडल (Faulty Model) के रूप में बालकों के समक्ष पेश् आना माना जाता है

5. **मुख्य आवश्यकताओं की संतुष्टी (Satisfaction of Primary Need)** -- जब बालकों की मुख्य आवश्यकताएं- भूख, प्यास आदि, तथा अन्य प्राथमिक आवश्यकताएं- जैसे कागज, पेंसिल की आवश्यकता, स्कूल आने जाने की सुविधा, समय पर स्कूल फीस जमा करने आदि की आवश्यकता पूर्ति समय पर हो जाती है तब बालक का मानसिक स्वास्थ्य ठीक रहता है अन्यथा मानसिक स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।
6. **वास्तविक मनोवृति की कमी (Lack of Realistic Attitude)-** यदि बालकों में घटनाओं, तथ्यों एवं अन्य व्यक्तियों के प्रति वास्तविक एवं वस्तुनिष्ठ मनोवृति की कमी पाई जाती है तो इससे बालकों में अवास्तविक एवं काल्पनिक चिन्तन को अधिक बढ़ावा मिलता है तब उसमें अन्तर्गस्ता (Involvement) बढ़ जाती है।

11.4.2 बालक के मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने में शिक्षक की भूमिका

निम्नलिखित उपायों के माध्यम से शिक्षक बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बना सकते हैं:

1. **अच्छी आदतों का निर्माण (Fostering Good Habit)**-शिक्षक छात्रों में अच्छी आदतों का निर्माण करके उनके मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बना सकते हैं। समय से स्कूल आना, गृहकार्य करके लाना, साफ सुथरे वस्त्र पहनना, नाखून तथा बाल न बढ़ने देना, ध्यान से शिक्षक की बात को सुनना आदि आदतें छात्रों में डालकर उनके मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बना सकते हैं।
2. **संतुलित पाठयक्रम (Balance Curriculum)** - शिक्षक छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य को एक अच्छा एवं संतुलित पाठयक्रम बनाकर भी उन्नत बना सकते हैं। पाठयक्रम संतुलित होने से बालक उसे पढ़ने एवं समझने में रूचि दिखाता है। इससे उनमें शैक्षिक उपलब्धि बढ़ती है तथा उनमें आत्मविश्वास पनपता है।
3. **अच्छे अनुशासन पर बल (Emphasis Upon Good Discipline)** - शिक्षक छात्रों में अच्छे आत्मअनुशासन की आदत डालकर उनके मानसिक स्वास्थ्य को मजबूत बना सकते हैं। स्कूल काअनुशासन यदि वे ऐसा रखते हैं जिसका पालन छात्र आसानी से कर सकते हैं तो निश्चित है उनका मानसिक स्वास्थ्य ठीक रहेगा।
4. **स्नेहपूर्ण एवं सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार Affecting and Sympathetic Behavior** - छात्र शिक्षकों के स्नेहपूर्ण एवं सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार के भूखे होते हैं शिक्षकों द्वारा इस तरह के व्यवहार मिलने से उन्हें इस ढंग की मानसिक शाति मिलती है। जैन्डन (Zanden)1982 ने अपने अध्ययन में पाया कि जब शिक्षकों द्वारा लगातार बालकों के प्रति स्नेहपूर्ण एवं सहानुभूतिपूर्ण

व्यवहार किया जाता है तो इससे छात्रों में आत्मसम्मान (Self Respect) एवं आत्मविश्वास बढ़ता है तथा उनका मानसिक स्वास्थ्य मजबूत होता है।

5. **शिक्षक निर्देशन(Education Guidence) -** शिक्षक छात्र को उचित शैक्षिक निर्देशन देकर भी उनके मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बना सकते हैं। इस प्रकार उचित निर्देशन पाकर छात्र सही दिशा की ओर बढ़कर अपने लक्ष्य की प्राप्ति शीघ्र कर सकते हैं।
6. **व्यक्तिगत निर्देशन(Personal Guidance**) - अनेक छात्र ऐसे होते हैं जिनकी व्यक्तिगत समस्याएं एवं उलझनें इतनी अधिक होती हैं कि वे काफी कुंठित और निराश् रहते हैं। शिक्षक् छात्रों को व्यक्तिगत निर्देशन देकर उनकी कुंठा एवं निराशा को दूर कर सकते हैं। इस तरह व्यक्तिगत समस्या का हल कर अध्यापक उनके मानसिक संतुलन को सहीबनाएरख सकते हैं।

11.5 मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का अर्थ

मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का शाब्दिक अर्थ मानसिक क्रियाओं से सम्बंधित निरोग या रोगहीन दशा को कायम करने वाला विज्ञान है। जैसे-शारीरिक आरोग्य शरीर को स्वस्थ रखने के नियम तथा उपाय प्रतिपादित करता है वैसे ही मानसिक आरोग्य मन को स्वस्थ रखने के नियम तथा उपाय निकालता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान वह विज्ञान है जो मानसिक स्वास्थ्य कोबनाएरखने, मानसिक रोगों को दूर करने और इन रोगों की रोकथाम के उपाय बताता है। मानसिक आरोग्य का काम केवल मानसिक चिकित्सकों के हाथ में नहीं है। अध्यापक, माता-पिता, संरक्षक समाज सुधारक और साधु-संत आदि धार्मिक व्यक्तियों का भी उसमें महत्वपूर्ण योगदान है। सत्य तो यह है कि मानव मनोविज्ञान का ज्ञान और अंतर्दृष्टि होने पर कोई भी व्यक्ति मानसिक आरोग्य में सहायक हो सकता है।

11.5.1 मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान की परिभाषाएं

क्रो एव क्रो के अनुसार- ''मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान वह विज्ञान है जिसका सम्बंध मानव कल्याण से है और जो मानव सम्बंधों के सब क्षेत्रों को प्रभावित करता है।''

ड्रेबर के अनुसार- ''मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का अर्थ-मानसिक स्वास्थ्य की रक्षा और मानसिक अव्यवस्थापन को दूर करने से है।''

कालसनिक के अनुसार- ''मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान नियमों के समूह है जो व्यक्ति को स्वयं तथा दूसरों के साथ शांति से रहने के योग्य बनाता है।''

वेबस्टर्स डिक्सनरी (Webster's Dictionary) के अनुसार- ''मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान वह विज्ञान है जिसके द्वारा हम मानसिक स्वास्थ्य को स्थिर रखते हैं तथा पागलपन और स्नायु सम्बंधित रोगों को पनपने से रोकते हैं। साधारण स्वास्थ्य विज्ञान से केवल शारीरिक स्वास्थ्य पर ही ध्यान दिया जाता है परन्तु मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान में मानसिक स्वास्थ्य के साथ-साथ शारीरिक स्वास्थ्य को भी सम्मिलित किया जाता है।''

ए.जे. रोजानफ के अनुसार- ''मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान व्यक्ति की कठिनाइयों को दूर करने में सहायता करता है तथा कठिनाइयों के समाधान के लिए साधन प्रस्तुत करता है।''

11.5.2 मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के उद्देश्य

मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के विशिष्ट उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

1. **मानसिक बीमारियों का निरोध (Presentation of Mental Health) --** मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान उन सभी उपायों का वर्णन करता है, जिनसे व्यक्ति में किसी प्रकार की मानसिक बीमारी या मानसिक व्याधि उत्पन्न ही न हो। इनके लिए यह विज्ञान मानसिक तनाव को कम करने तथा मानसिक संघर्षों से छुटकारा पाने की मनोवैज्ञानिक एवं अन्य विधियों का विस्तृत रूप से उल्लेख करता है। इन विधियों को अपनाकर व्यक्ति अपने आपको चिन्ता एवं संघर्ष से दूर रखता है।
2. **मानसिक रोग का उपचार (Treatment of Mental Health)**-यदि कोई व्यक्ति मानसिक रोग का शिकार हो गया है तो उपयुक्त उपायों द्वारा उस व्यक्ति के रोग का उपचार करके पुनः उसे एक स्वस्थ्य व्यक्ति बना दें। ऐसा करने के लिए मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान में उन तमाम प्रविधियों का उल्लेख होता है जिनका उपयोग नैदानिक मनोवैज्ञानिक (Clinical Psychology) एवं मनोचिकित्सक (Psychiatristics) लोग करते हैं।
3. **अपनी अन्तःशक्तियों से अनुभव कराना (Realization of Own Potentialities)-** मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का एक प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति को अपने अन्दर छिपी अन्तःशक्तियों(Potentialities) से परिचय कराना है ताकि व्यक्ति अपने आपको एक सही परिप्रेक्ष्य में समझ सके तथा मानसिक स्वास्थ्य की बागडोर को मजबूत कर सके।
4. **मानसिक स्वास्थ्य की सुरक्षा (Preservation of mental Health)** --मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य को सुरक्षा प्रदान करता है। मानसिक विज्ञान के द्वारा कोई भी व्यक्ति व्यक्तिगत, सामाजिक एवं सांवेगिक समायोजन ठीक ढंग से करके अपने मानसिक स्वास्थ्य को बचाए रख सकता है।

5. **मानसिक अस्पताल की अवस्थाओं में सुधार लाना (To Improve the Condition of Mental Health)-**मानसिक अस्पतालों में रोगियों के साथ मानवीय संबंधों में सुधार लाया जाए, क्योंकि यह विज्ञान मानसिक रोग को एक रोग मानता है भूत-प्रेत या पिशाच का प्रकोप नहीं। जब तक उनके साथ मानवीय व्यवहार नहीं किएजाएंगे, उनका रोग ठीक नहीं हो पाएगा।
6. **व्यक्तियों के आत्मविश्वस में परिवर्तन लाना (To Bring a change in General Belief of the People)-**मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का एक उद्देश्य यह भी है कि आम लोगों के इस विश्वास को गलत साबित कर दिया जाए कि मानसिक रोग असाध्य (Incurve) है। मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के कारण आम लोगों की वह पुरानी धारणा बदलने जा रही है जिसमें वे सोचा करते थे कि मानसिक रोग किसी पाप का परिणाम है और यह एक तरह का असाध्य रोग होता है।

11.5.3 मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के बारे में प्रमुख तथ्य

मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के बारे में कुछ प्रमुख तथ्य निम्नलिखित हैं-

- मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान में मानसिक एवं सांवेगिक कठिनाइयों को प्रारंभिक अवस्था में ही पता लगा लेने की कोशिश की जाती है।
- मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान यथासम्भव जल्द से जल्द मानसिक बिमारियों की पहचान कर उसे दूर करने के उपायों पर बल देता है।
- मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान मूलतः एक शैक्षिक कार्यक्रम है।
- इस विज्ञान में व्यक्तियों का मानसिक स्वास्थ्य बना रहे, इसके लिए उपयुक्त रहन-सहन पर भी बल दिया जाता है।
- मानसिक विज्ञान में व्यक्तियों को आधुनिक समाज के एक सदस्य के रूप में जीवन व्यतीत करने पर अधिक बल दिया जाता है।
- इस विज्ञान में मानसिक रोगियों के प्रति आम लोगों की एक वस्तुनिष्ठ एवं सहानुभूतिपूर्ण मनोवृति विकसित करने का भरसक प्रयास किया जाता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

5. मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का शाब्दिक अर्थ _____से सम्बंधित निरोग या रोगहीन दशा को कायम करने वाला विज्ञान है।

6. मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का एक प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति को अपने अन्दर छिपी _____से परिचय कराना है।
7. मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का एक उद्देश्य यह भी है कि आम लोगों के इस विश्वास को गलत साबित कर दिया जाए कि मानसिक रोग _____है।

11.6 सारांश

मानव एक चिन्तनशील प्राणी है। वह हमेशा मानव विकास के बारे में चिन्तन करता रहता है। उसके इस चिन्तन का वह स्वयं व आने वाली पीढ़ी लाभ उठाती है, लेकिन यह चिन्तन तभी सम्भव हो पाता है जब उसका मानसिक व शारीरिक स्वास्थ्य स्वस्थ बना रहे। यदि व्यक्ति किसी मानसिक रोग से ग्रस्त हो जाता है तब उसकी कार्यकुशलता में कमी महसूस की जा सकती है। आज के तनाव व भागदौड़ भरी जिन्दगी में व्यक्ति स्वयं अपने स्वास्थ्य व खाने-पीने की ओर ध्यान न देकर केवल कार्य को महत्व दे रहा है, जिससे उसके स्वास्थ्य में गिरावट आ जाती है। शारीरिक स्वास्थ्य का मानसिक स्वास्थ्य पर भी गहरा प्रभाव पड़ता है। मानसिक अस्वस्थता के कारण व्यक्ति के सम्मान, सामाजिक सहयोग, कार्यकुशलता, शिक्षण कार्य, कार्यक्षमता आदि में कमी पाई जाती है। इस कमी को पूरा करने के लिए स्वास्थ्य मानव विज्ञान व्यक्ति को स्वस्थ्य बनाने व रोग से निदान करने के उपाय बताता है, जिससे वह व्यक्ति निरोगी होकर पुनः कार्य करने लग जाता है। वह सामान्य व्यक्तियों की तरह अपना व्यवहार करता है। आज किसी भी बीमारी का उपचार सम्भव है, यदि हम उसका सही समय पर समाधान कर सके।

11.7 शब्दावली

1. **मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान (Mental Hygiene)**- मानसिक रोगों का उपचार करने वाला विज्ञान
2. **अमानवीय व्यवहार**-किसी व्यक्ति के साथ निर्दयता, क्रूरता, पशुता जैसा व्यवहार अमानवीय व्यवहार है।
3. **आत्म ज्ञान (Self Knowledge)-** अपनी इच्छा, प्रेरणा, भाव, आकांक्षाओं आदि का पूर्ण ज्ञान।
4. **आत्म श्रद्धा (Self Esteem)**-आत्मविश्वास, आत्मबल अपने भावों को स्वीकार करने की क्षमता, आत्म श्रद्धा कहलाती है।

11.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. 1911
2. संतोष, आनन्द
3. मनोवृत्ति
4. वस्तुनिष्ठ
5. मानसिक क्रियाओं
6. अन्तःशक्तियों
7. असाध्य

11.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सिंह अरूण कुमार (1998), शिक्षा मनोविज्ञान, भारती भवन, पटना, पृष्ठ 593-605
2. पाठक पी.डी., (2005) शिक्षा मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
3. सारस्वत (डां) मालती (1997) शिक्षा मनोविज्ञान की रूपरेखा, आलोक प्रकाश, आगरा, पृष्ठ-524-335
4. शार्मा डा. वी.एल. सक्सेना, डा. आर.एन. शिक्षा शास्त्र, सूर्या प्रकाश्न, मेरठ।

11.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्तियों की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. बालकों के मानसिक स्वास्थ्य को उन्नत बनाने में शिक्षक की भूमिका का वर्णन कीजिए।
3. मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ बताते हुए इसके प्रमुख उद्देश्यों का वर्णन लिखिए।
4. मानसिक स्वास्थ्य की परिभाषाएं लिखिए व मानसिक स्वास्थ्य की आवश्यकता पर एक विस्तृत लेख लिखिए।
5. मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों का वर्णन लिखिए।

इकाई 12- कुसमायोजन के कारण एवं लक्षण

12.1 प्रस्तावना
12.2 उद्देश्य
12.3 कुसमायोजन के कारण एवं लक्षण
12.3.1 कुसमायोजन का अर्थ
12.3.2 बालकों में कुसमायोजन के कारण
12.3.3 भग्नाशा या कुण्ठा का अर्थ
12.3.4 भग्नाशा के कारण
12.4 मानसिक द्वन्द का अर्थ
12.4.1 मानसिक द्वन्द या संघर्ष के दुष्प्रभाव
12.4.2 संघर्ष की परिभाषा
12.4.3 द्वन्द या संघर्ष से बचने के सामान्य उपाय
12.5 कुसमायोजन के लक्षण
12.5.1 समायोजित व्यक्ति के लक्षण
12.5.2 मानसिक द्वन्दको सुलझाने एवं तनावों को कम करने के विशिष्ट उपाय
12.6 सारांश
12.7 तकनीकी शब्दावली
12.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
12.9 संदर्भ ग्रंथ सूची
12.10 निबंधात्मक प्रश्न

12.1 प्रस्तावना

समायोजन की विपरीत स्थिति कुसमायोजन या विसमायोजन (Maladjustment) की स्थिति कहलाती है। समायोजन के विरूद्ध इस स्थिति में जीवित प्राणी अपनी आवश्यकताओं और उन आवश्यकताओं की तुष्टि को प्रभावित करने वाली परिस्थितियों में संतुलन नहीं रख पाता। अतः

इस स्थिति में ऐसी प्रतिक्रियायें दिखलाई पड़ती हैं जिनमें यह संतुलन बनने की अपेक्षा और भी बिगड़ता है। इस प्रकार की प्रतिक्रियाओं में से वे सभी व्यवहार आते हैं जो असामान्य कहे जा सकते हैं। उदाहरण के लिए सभी तरह के मानसिक रोग कुसमायोजित प्रतिक्रियाओं में गिने जाएंगे। इसी तरह अपराधी और किशोर अपराधी व्यवहार तथा समाज विरोधी व्यवहार कुसमायोजित माना जाएगा। कुसमायोजित व्यक्ति अपनी परिस्थितियों में समायोजन नहीं कर पाता और वस्तुस्थिति का सामना करने की बजाए उससे भागने का प्रयास करता है। उसमें नाना प्रकार के असामान्य भय और मानसिक रचनाएं दिखलाई पड़ती हैं। उसमें सहयोग की सामर्थ्य बहुत कम होती है। वह दूसरों के साथ मिल-जुलकर नहीं रह सकता। बहुदा वह अकेला रहना पसन्द करता है। और कल्पनालोक में डूबा रहता है। अत्यधिक दिवास्वपन देखना एक कुसमायोजित प्रतिक्रया है।

12.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

1. कुसमायोजन का अर्थ व बालकों मे कुसमायोजन के कारणों को जान सकेंगे।
2. भग्नाशा या कुन्ठा के कारणों को जान सकेंगे।
3. मानसिक द्वन्द या संघर्ष के दुष्प्रभाव के कारणों का वर्णन कर सकेंगे।
4. द्वन्द या संघर्ष से बचने के उपायों को जान सकेंगे।
5. कुसमायोजन के लक्षणों के व्याख्या कर सकेंगे।
6. समायोजित व्यक्ति के लक्षणों को सूचीबद्ध सकेंगे।

12.3 कुसमायोजन के कारण एवं लक्षण

व्यक्ति को सफल जीवन व्यतीत करने के लिए अपने वातावरण और परिस्थितियों के साथ समायोजन स्थापित करना आवश्यक हो जाता है। व्यक्ति के जीवन में अनेक प्रकार की अनुकूल एवं प्रतिकूल परिस्थितियां आती रहती हैं जिनका उसे सामना करना पड़ता है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी अलग-अलग क्षमता के अनुसार समायोजन करने का प्रयत्न करते हैं। कुछ लोग प्रतिकूल परिस्थतियों का सामना करने में सफल होते हैं और कुछ लोग अपना मानसिक संतुलन खो बैठते हैं। इस प्रकार के व्यक्ति असंतोष या भग्नाशा, मानसिक द्वन्द एवं तनाव का शिकार बन जाते हैं। और अपने को असमायोजित पाते हैं, जिससे वे समाज विरोधी कार्य करने लगते हैं, जिसका प्रभाव उन्हें जीवन के प्रत्येक पक्ष में देखने को मिलता है।

12.3.1 कुसमायोजन का अर्थ Meaning of Maladjustment

जब व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं (Needs) एवं इच्छाओं तथा वातावरण के उन कारकों, जिनसे उन इच्छाओं एवं आवश्यकताओं की सही ढंग से संतुष्टि होती है, के बीच एक संतुलन (Balance) बनाए रखता है, तब हम इस प्रक्रिया को समायोजन की संज्ञा देते हैं। परन्तु जब किसी कारणों से यह संतुलन बिगड़ जाता है तब इस अवस्था को कुसमायोजन (Maladjustment) कहा जाता है। शिक्षा मनोवैज्ञानिकों का मत है कि कुसमायोजन छात्रों में भी हो सकता है, तथा शिक्षकों में भी। अध्ययनों से पता चलता है कि कुसमायोजन की समस्या छात्रों में शिक्षकों की कुसमायोजन की समस्या से अधिक गंभीर होती है। यदि छात्र या शिक्षक में कुसमायोजन की स्थिति लम्बे अरसे से बनी रहती है तो इससे उसके व्यक्तित्व में असामान्यता (Abnormality) उत्पन्न होने की संभावना बढ़ जाती है।

12.3.2 बालकों में कुसमायोजन के कारण Cause of Maladjustment in the Children

प्रमुख मनोवैज्ञानिक फ्राइड (freud) एडलर (Adler) युंग (young) आदि ने बालकों में कुसमायोजन के प्रमुख कारणों का वर्णन निम्नलिखित बताया है-

i. **कुंठा (Frustration)-** जब बालक की प्रमुख आवश्यकताओं (Needs) की संतुष्टि नहीं हो पाती, तो उनमें कुंठा उत्पन्न होती है। जब कुंठा की मात्रा धीरे-धीरे असहनीय हो जाती है तो बालकों का व्यवहार कुसमायोजित होने लगता है। अन्य बालकों के अलावा उनमें चिड़चिड़ापन एवं अक्रामकता बढ़ जाती है।

ii. **गरीबी (Poverty)-** कुसमायोजन तथा गरीबी में घनात्मक सहसम्बंध (Positive Correlation) है। अधिकतर कुसमायोजित बालक निम्न आर्थिक, सामाजिक स्तर वाले परिवार से आते हैं। इसका मूल कारण है कि ऐसे परिवार के माता-पिता या अभिभावक अपने बच्चों की उचित आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ रहते हैं, जिससे इनमें कुसमायोजन की समस्या पैदा हो जाती है।

iii. **ब्रोकेन होम्स (Broken Homes)-** ब्रोकेन होम्स से हमारा अभिप्राय ऐसे घरों से होता है जो माता-पिता में सम्बंध विच्छेद हो जाने के कारण, मृत्यु हो जाने के कारण, न्यायालय से माता-पिता से अलगाव हो जाने के कारण, बालकों को अपने माता-पिता या परिवार के अन्य सदस्यों

से उचित प्यार, स्नेह, सहानुभूति, सुरक्षा आदि नहीं मिल पाती है। ऐसे बच्चों में कुसमायोजन विकसित होने लगता है।

iv. **माता-पिता की मनोवृति (Parental Attitude)-** माता-पिता की प्रतिकूल मनोवृति (Unfavorable Attitude) से बालकों का व्यवहार कुसमायोजित हो जाता है। जब माता-पिता बालकों को अस्वीकृत कर देते हैं तो इससे उनके अहम को चोट पहुंचती है और वेअपना न्यूनांकलन (Underestimate) करने लगते हैं।उनमें असुरक्षा लाचारी एवं अकेलापन का भाव उत्पन्न हो जाता है। ऐसे भाव बालकों को धीरे-धीरे कुसमायोजित बना देते हैं।

v. **शरीरिक (Physique)-** गिलवर्ग (1963) ने अध्ययन में पाया है कि जब बालकों की शरीरिक बनावट सामान्य बालक से हटकर कुछ अलग होती है तो ऐसे बालक की अन्य बालकों द्वारा खिल्ली उड़ायी जाती है। इससे बालक में हीनता का भाव पनपता है और वह कुसमायोजित हो जाता है।

vi. **अंगीकरण (Adoption) -** अध्ययनों के आधार पर यह देखा गया है कि दत्तकी बालक (Adopted) सामान्य बालकों की अपेक्षा अधिक कुसमायोजित हो जाता है। इसका कारण यह है कि ऐसे बालक को जब उनके और माता-पिता के सम्बंधों की वास्तविकता का पता चलता है तो उसे मानसिक आघात लगता है और बालक कुसमायोजित हो जाता है।

vii. **बालकों के प्रति यौन आधारित व्यवहार (Sex Behavior Towards Children)-** जिस परिवार में माता-पिता द्वारा लड़कों पर लड़कियों की अपेक्षा अधिक ध्यान दिया जाता है और उनको शिक्षा के अलावा अन्य कार्यों में वरीयता दी जाती है, तब लड़कियों में हीनता व कुण्ठा की भावना पनपने लगती है, जिसके कारण वे कुसमायोजित हो जाती हैं।

viii. **मनोरंजन के साधन में कमी (Sex Based Behavior towards Children)-** जब बालकों के लिए मनोरंजन के पर्याप्त साधन स्कूल या घर में नहीं होते, तो उनमें एक तरह की घुटन हो जाती है, उनमें संवेगात्मक तनाव बढ़ जाता है और उनका व्यवहार चिड़चिड़ा तथा अन्य दृष्टिकोण से कुसमायोजित हो जाता है।

ix. **धार्मिक विश्वास (Religious Beliefs) -** प्रत्येक बालक को अपने माता-पिता के धर्म को मानना होता है और उनके धार्मिक विश्वास के अनुकूल कुछ व्यवहार करना पड़ता है। कभी-कभी बालक को ऐसी क्रियायें, कर्मकांड करने पड़ते हैं जिसको बालक न तो समझ पाता है और न ही वह उसको करना चाहता है, ऐसी स्थिति में बालक में कुसमायोजन के गुण पैदा हो जाते हैं।

12.3.3 भग्नाशा या कुण्ठा का अर्थ (Meaning of Frustration)

व्यक्ति दिन में प्रतिक्षण प्रायः छोटी-छोटी कठिनाइयों और बाधाओं को सहन करता रहता है। उनमें से अधिकांश ऐसी होती हैं, जिन्हे आसानी से सुलझाया जा सकता है, परन्तु कभी-कभी ऐसी बाधाएं या अवरोध उत्पन्न हो जाते हैं जो व्यक्ति की आवश्यकताओं और प्रेरकों की पूर्ति में हस्तक्षेप करते हैं। अर्थात् वह लक्ष्य तक पहुंचने में रूकावट डालते हैं। व्यक्ति इन बाधाओं या अवरोधों को दूर करने का भरसक प्रयत्न करता है। जब बाधाओं को दूर करके अपने लक्ष्य तक पहुंचने में सफल हो जाता है तो उसे एक प्रकार की खुशी और संतोष की अनुभूति होती है। किन्तु जब अनेक प्रयास करने के बावजूद भी वह बाधाओं या अवरोधों को दूर नहीं कर पाता और लक्ष्य तक नहीं पहुंच पाता तो उसे दुःख होता है, और एक प्रकार की विफलता या निराशा की अनुभूति होती है, जिसे मनोवैज्ञानिक भाषा में भग्नाशा या कुण्ठा कहते हैं। ऐसी स्थिति में छात्र या व्यक्ति कुसमायोजन का शिकार हो जाता है और समाज में अपने को समायोजन करने में काफी परेशानी हो जाती है।

12.3.4 भग्नाशा के कारण (Reason of Frustration)

भग्नाशा के अनेक कारण एवं स्रोत हो सकते हैं जिनमें से कुछ कारण निम्नलिखित हैं-

i. **व्यक्तिगत कारण-** कुछ व्यक्ति अथवा बालक अपने मानसिक, संवेगात्मक या शरीरिक दोषों जैसे बुद्धि की कमी, भय हीनता की भावना, अकुशलता, अंधापन, बहरापन, लंगड़ापन आदि के कारण अपनी इच्छाओं और आवश्यकताओं की पूर्ति में असफल रह जाते हैं। इससे भी असंतोष और कुण्ठा की अनुभूति होती है।

ii. **आर्थिक कारण-** आर्थिक परिस्थिति अच्छी न होने के कारण व्यक्ति अपनी बहुत सी इच्छाओं और आवश्यकताओं को पूरी कर पाने में असमर्थ होता है और अपने लक्ष्य तक नहीं पहुंच पाता है।

iii. **भौतिक कारण-** वातावरण में पाए जाने वाले अनेक भौतिक या प्राकृतिक तत्व जहां एक ओर व्यक्ति की आवश्यकताओं और प्रेरकों की पूर्ति में सहायक होते हैं वहीं दूसरी ओर अनेकभौतिक तत्व जैसे अकाल, बाढ़ या अनावृष्टि, भूचाल आदि आवश्यकताओं और प्रेरकों की पूर्ति में बाधक सिद्ध होते हैं जिससे व्यक्ति के मन में घोर निराशा और असंतोष उत्पन्न होता है।

iv. **सामाजिक कारण-** समाज के कठोर नियम, रीति रिवाज, परम्पराएं, जाति-प्रजाति, धर्म और कानून भी व्यक्ति की स्वतंत्रता इच्छाओं और आवश्यकताओं की पूर्ति में बाधक होते हैं,

जिससे व्यक्ति को निराशा और असंतोष का सामना करना पड़ता है, जिससे उसमें कुसमायोजन के भाव पनप जाते हैं।

v. **असंगत परिस्थितियां और दशाएं-** सामाजिक महंगाई, निर्धनता, बेकारी, रहने का अनुपयुक्त स्थान, घर का अशांत वातावरण आदि के कारण बालक की बहुत सी आवश्यकताएं एवं इच्छाएं अपूर्ण रह जाती हैं। इससे उसमें कुण्ठा पैदा हो जाती है और असामाजिक व्यवहार करने लगता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. कुसमायोजन व्यक्ति अपने को समायोजित नहीं कर पाता है -
   (अ) समाज में (ब) परिवार में (स) विद्यालय में (द) सभी जगह
2. कुण्ठा व्यक्ति में एक निश्चित आयु पर अवश्य होती है- (सत्य/ असत्य)
3. कमजोर आर्थिक स्थिति भी कुण्ठा के लिए उत्तरदायी होती है -(सत्य/ असत्य)
4. ब्रोकन होम्स वाले प्रत्येक बच्चा कुसमायोजित होता है -(सत्य/ असत्य)
5. कुसमायोजन तथा गरीबी में सहसंबंध है -
   (अ) धनात्मक (ब) ऋणात्मक (स) शून्यात्मक

12.4 मानसिक द्वन्द का अर्थ (Meaning of Mental Health)

मानव एक जिज्ञासु प्राणी है। उसकी एक इच्छा की पूर्ति के बाद उसकी दूसरी इच्छा जागृत हो जाती है। लेकिन यदि किसी कारणवश उसकी वह इच्छा पूर्ण नहीं हो पाती, तब उसके मन में एक प्रकार का संघर्ष उत्पन्न हो जाता है। जब व्यक्ति को दो बिल्कुल विरोधी वस्तुओं में से एक का चुनाव करना पड़ता है तो भी उसे संघर्ष का सामना करना पड़ता है। उदाहरण के लिए- एक विद्यार्थी जिसका पी.एच.डी. करने के लिए चयन हो जाता है, दूसरी ओर उसका अध्यापक के लिए भी चयन हो जाता है, तो ऐसी परिस्थिति में वह दोनों से मोह करता है। इससे उसके मन में द्वन्द की स्थिति पैदा हो जाती है। ऐसी परिस्थिति को द्वन्द कहते हैं, जिसका परिणाम कुसमायोजन होता है।

12.4.1 मानसिक द्वन्द (संघर्ष) के दुष्प्रभाव (Demerits of Mental Conflict)

मानसिक द्वन्द के कुछ दुष्प्रभाव निम्नलिखित हैं:-

i. **असामान्य मानसिक क्रियाएं-** मानसिक द्वन्द की दशा में व्यक्ति की समस्त मानसिक प्रतिक्रियायें प्रभावित होती हैं। उसमें विस्मरण की मात्रा अधिक हो जाती है। स्वप्न अधिक देखने लगता है और प्रत्यक्षीकरण में कठिनाई का अनुभव करता है।

ii. **असामान्य संवेग प्रदर्शन-** व्यक्ति में प्रसन्नता, दुःख, हास्य, उत्साहहीनता, उदासी आदि बिल्कुल असाधारण रूप में परिलक्षित होती है।

iii. **असामाजिक व्यवहार**- एकान्तप्रिय, समाजविमुखता और अन्तर्मुखी (Introversion) व्यवहार दिखलाई पड़ता है।

iv. **मानसिक रूग्णता-** मानसिक द्वन्द के दुष्प्रभाव से व्यक्ति को अनेक स्नायुविक रोग हो जाते हैं एवं मानसिक तनाव बना रहता है।

v. **अपराधी प्रवृतियां**- मानसिक द्वन्दकी दशा में व्यक्ति का मानसिक संतुलन अस्त-व्यस्त हो जाता है। उसे भले बुरे का ज्ञान नहीं रह जाता है और वह सामाजिक और वैधानिक अपराध की ओर प्रवृत्त हो जाता है।

12.4.2 द्वन्द या संघर्ष की परिभाषाएं (Definition of Conflict)

व्यक्ति को लक्ष्य प्राप्ति के दौरान अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ता है। कई बार समय कम होने, अनेक विकल्पों में से एक को चुनने और लक्ष्य प्राप्ति के बाद अगले लक्ष्य के निर्धारण में अनेक बाधाएं आती हैं। ऐसे समय में मानसिक द्वन्द सा संघर्ष उत्पन्न होने लगता है। यह स्थिति मानसिक उथल-पुथल की स्थिति होती है। संघर्ष या द्वन्द की कुछ परिभाषाएं द्रष्टव्य हैं:-

डगलस व हालैन्ड - ''संघर्ष का अर्थ है विरोध और विपरीत इच्छाओं में तनाव के परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाली कष्टदायक संवेगात्मक दशा।'' ("Conflict means a painful emotion state. Which result from a tension between opposed and contradictory wishes" - Douglas and Holland)

क्रोव क्रो - ''संघर्ष उस समय उत्पन्न होता है जब व्यक्ति को अपने वातावरण में ऐसी शक्तियों का सामना करना पड़ता है, जो उसके स्वयं के हितों और इच्छाओं के विरूद्ध कार्य करती है।''

"Conflicts arise when an individual is faced with forces in his environment that act an opposition to his owen Interest and desires" – Crow and Crow

फ्राइड - ''इदं, अहम्, परम अहम् के मध्य सांमजस्य का अभाव होने से मानसिक द्वन्द उत्पन्न होता है''।

मन-''निरन्तर रहने वाला संघर्ष कष्टदायक होने के साथ-साथ शारीरिक स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है''।

"Continued conflict in addition to being unpleasant is also deleterious to physical health"-Man

12.4.3 द्वन्द या संघर्ष से बचने के सामान्य उपाय (Method of General Avoiding Conflict)

सोरेनसन के अनुसार - संघर्ष से बचने के लिए निम्नलिखित विधियों का प्रयोग किया गया हैः-

- बालकों के समक्ष न तो अच्छे आदर्श प्रस्तुत किए जाने चाहिए और न उनसे उनके पालन की आशा की जानी चाहिए।
- बालकों को असंतोषजनक परिस्थितियों का सामना करने और उनसे उपयुक्त समायोजन करने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
- बालकों की शक्तियों को किसी लक्ष्य की प्राप्ति की दिशा में निर्देशित करना चाहिए, ताकि उनका मस्तिष्क, संघर्षों का निवास स्थान न बन सके।
- भय और चिन्ता से उत्पन्न होने वाले मानसिक और संवेगात्मक संघर्षों का निवारण करने के लिए बालकों की मानसिक चिकित्सा की जानी चाहिए।
- परिवार और विद्यालय का वातावरण, विवेक और समझदारी पर आधारित होना चाहिए।
- बालकों में किसी प्रकार की समस्या उपस्थित नहीं होने देना चाहिए।
- बालकों को निराशाओं और असफलताओं का सामना करने के लिए प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
- बालकों के समक्ष विरोधी बातों और विरोधी प्रश्नों में चुनाव करने की परिस्थिति नहीं आनी चाहिए।
- बालकों को समूहों के सदस्यों के रूप में विभिन्न परिस्थितियों का सामना करने के अवसर दिए जाने चाहिए।
- बालकों के समक्ष न तो उच्च आदर्श प्रस्तुत किए जाने चाहिए और न ही उनसे उनके पालन की आशा की जानी चाहिए।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

6. मानसिक द्वन्द्व की स्थिति में व्यक्ति में _____बढ़ जाती हैं।
   (अ)अपराधी प्रवृतियां(ब) सादगी (स) कार्य करने की इच्छा (द) सहयोग की प्रवृतियां
7. इच्छाओं एवं आवश्यकताओं की सही ढंग से संतुलन की प्रक्रिया को _____की संज्ञा देते है:-
   (अ)कुंठा(ब) समायोजन(स) कुसमायोजित (द) असामान्यता
8. कुसमायोजित व्यक्ति का प्रमुख लक्षण है:-
   (अ) आदर्श चरित्र (ब) संतुष्ट (स) पर्यावरण का ज्ञान (द) संवेगात्मक रूप से असंतुलित
9. कुसमायोजित व्यक्ति में सुधार सम्भव है:-(सत्य/ असत्य)
10. कुसमायोजित व्यक्ति अधिक अव्यवहारिक बन जाता है(सत्य/ असत्य)

12.5 कुसमायोजन के लक्षण (Symptoms of Maladjustment)

छात्रों में कुसमायोजन की समस्या की पहचान करने के लिए कुछ प्रारम्भिक लक्षणों(Early symptoms) का वर्णन किया गया है। इन लक्षणों को निम्नलिखित तीन भागों में बांटा गया है:-

i. शारीरिक लक्षण (Physical Symptoms)
ii. व्यवहारात्मक लक्षण (Behavioural Symptoms)
iii. सांवेगिक लक्षण (Emotional Symptoms)

(क) शारीरिक लक्षण (Physical Symptoms)

बालकों में कुसमायोजन की स्थिति में स्पष्ट शारीरिक लक्षण दिखाई पड़ते हैं। शारीरिक लक्षण से तात्पर्य उन लक्षणों से होता है जिनका सम्बंध शारीरिक क्रियाओं (Bodily Activities) में उत्पन्नगड़बड़ी से होता है। बोलते समय हकला जाना, तुतलाकर बोल देना, उल्टी करना, सिर खुजलाना, सिर का बाल नोंचना, नाखून काटना, चेहरा फड़कना (Facial Twitching) आदि कुसमायोजन के प्रमुख शारीरिक लक्षण हैं।

(ख) व्यवहारात्मक लक्षण (Behavioral Symptoms)

कुसमायोजित बालकों के व्यवहारों में भी कुछ विचलन (Devotion) आ जाता है। कुसमायोजन की स्थिति में बालकों में चिड़चिड़ापन बढ़ जाता है तथा वे आक्रामक व्यवहार (Aggressive Behavior अधिक करने लगते हैं। उनमें झूठ बोलने की प्रवृति बढ़ जाती है। दूसरे बालकों को अकसर डराते-धमकाते रहते हैं। स्कूल की शैक्षिक उपलब्धि (Academic

Achievement) में कमी आ जाती है तथा किशोरों में कुछ यौन व्यवहार सम्बंधी गड़बड़ी (Sex Disturbance) भी देखने को मिलती है।

(ग) सांवेगिक लक्षण (Emotional Symptoms)

कुसमायोजन की स्थिति में बालकों में चिंता, डर, हीनता का भाव, आत्मदोष, मानसिक तनाव, बैचेनी आदि जैसे सांवेगिक लक्षण भी स्पष्ट रूप से देखने को मिलते हैं।

इनके अलावा कुसमायोजित व्यक्ति को निम्नलिखत लक्षणों द्वारा पहचाना जा सकता है-

1. कुसमायोजित व्यक्ति अपने को पर्यावरण के अनुकूलन बनाने में असमर्थ होता है।
2. वह अनिश्चित मन वाला, अस्थिर बुद्धि वाला, संवेगात्मक रूप से असंतुलित, अनिर्दिष्ट उद्देश्य वाला, घृणा, द्वेष और बदले की भावना वाला होता है।
3. वह असामाजिक, स्वार्थी और सर्वथा दुःखी होता है।
4. वह साधारण सी बाधा एवं समस्या उत्पन्न होने पर मानसिक संतुलन खो देने वाला होता है।
5. स्नायु रोगों से पीड़ित, मानसिक द्वन्द्व एवं कुण्ठा से ग्रस्त तथा तनावयुक्त होता है।

12.5.1 समायोजित व्यक्ति के लक्षण (Characteristic of Well Adjusted Person)

समायोजित व्यक्ति में निम्नलिखित लक्षण दिखाई पड़ते हैं-

1. समायोजित व्यक्ति पर्यावरण और परिस्थितियों का ज्ञान और नियंत्रण रखने वाला तथा उन्हीं के अनुकूल आचरण करने वाला होता है।
2. साधारण परिस्थितियों में भी संतुष्ट और सुखी रहकर अपनी कार्यकुशलता को बनाए रखता है।
3. अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए समाज के अन्य लोगों को बाधा नहीं पहुंचता है।
4. यह अपनी आवश्यकता एवं इच्छा के अनुसार पर्यावरण एवं वस्तुओं का लाभ उठाता है।
5. वह स्पष्ट उद्देश्य वाला तथा साहसपूर्ण व ठीक ढंग से कठिनाइयों तथा समस्याओं का सामना करने वाला होता है।
6. वह स्वयं तथा पर्यावरण के बीच संतुलनबनाएरखता है।

12.5.2 मानसिक द्वन्द को सुलझाने एवं तनावों को कम करने के विशिष्ट उपाय या विधियां (Methods of special Resolving the Conflicts and Tension Reduction)

मानसिक संघर्ष या तनाव की प्रचण्डता एवं तीव्र असन्तोष तथा संवेगात्मक उथल-पुथल के फलस्वरूप व्यक्ति का मानसिक संतुलन बिगड़ने लगता है। ऐसी दशा में इन कष्टदायी अनुभूतियों से बचने के लिए व्यक्ति अचेतन रूप से कुछ सुरक्षा प्रक्रियाओं का सहारा लेता है। मनौवैज्ञानिक कैमरन

तथा शेफर एवं शोवेन ने समायोजन की युक्तियों को दो प्रकार का बताया है। रक्षात्मक युक्तियां और पलायन युक्तियां- रक्षात्मक युक्तियों का मुख्य कार्य व्यक्ति के अहम् की रक्षा करना है। पलायन युक्तियों का मुख्य कार्य व्यक्ति को तनावपूर्ण स्थिति से हटाकर उसे व्यक्तिगत समायोजन में सहायता प्रदान करना है।

मनौवैज्ञानिक कैमरन ने निम्नलिखित पांच रक्षात्मक युक्तियों का वर्णन किया है:-

1. अवधान प्राप्ति (Attention Getting)
2. तादात्मीकरण(Identification)
3. प्रतिपूर्ति (Companion)
4. संयुक्तिकरण या औचित्य स्थापन (Rationalization)
5. प्रक्षेपण (Profection)

   (क)प्रत्यक्ष उपाय (Direct Method0

   (ख)अप्रत्यक्ष उपाय (Indirect Method)

   (ग)क्षतिपूरक विधियां (Comfetensatory Method)

   (घ)आक्रामक उपाय (Aggressive Method)

(क)प्रत्यक्ष उपाय:-

प्रत्यक्ष उपाय द्वारा व्यक्ति चेतनावस्था में अपने तनाव को कम करने के लिए कुछ प्रयत्न करता है। उन उपायों को करने में वह अपनी तर्क शक्ति का सहारा लेता है। कुछ प्रत्यक्ष उपाय निम्नलिखित हैं-

i. **बाधाओं को नष्ट या दूर करना -** व्यक्ति की आवश्यकता की पूर्ति में या लक्ष्य तक पहुंचने में जो अवरोध मार्ग में आते हैं वह उन्हें चेतन रूप से दूर करने या पूर्णरूपेण नष्ट करने का प्रयास करता है। इस प्रकार बाधाओं को दूर करने या नष्ट कर देने से व्यक्ति अपने उद्देश्य पूर्ति में सफल हो जाता है और उसका मानसिक तनाव दूर हो जाता है। उदाहरण के लिए बालक अपने लिखने की मंद गति को अभ्यास द्वारा दूर करके मानसिक तनाव को समाप्त कर सकता है।

ii. **अन्य मार्ग खोजना -** जब व्यक्ति अपने उद्देश्य पूर्ति के मार्ग में आई बाधा को नष्ट या दूर नहीं कर पाता है तो वह दूसरा रास्ता ढूंढ निकालता है। दूसरा रास्ता ढूंढ लेने पर जब वह अपने उद्देश्य को पूरा कर लेता है तो उसका मानसिक तनाव अपने आप दूर हो जाता है।

iii. **अवधान प्राप्ति की युक्ति -** जब एक व्यक्ति अपने को उपेक्षित अनुभव करता है तब वह इस युक्ति का प्रयोग दूसरे व्यक्तियों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करता है। इस विधि द्वारा वह चाहता है कि दूसरे उसकी ओर ध्यान दें। व्यक्ति की यह मनौवैज्ञानिक आवश्यकता होती है कि दूसरों द्वारा उसे अनुमोदन एवं मान्यता प्राप्त हो। माता-पिता द्वारा यदि किसी बच्चे को प्यार या दुलार न मिले तब वह सामाजिक समायोजन में कठिनाई अनुभव करता है।

iv. **अन्य लक्ष्यों का प्रतिस्थापन -** जब व्यक्ति अपने उपाय और हर संभव प्रयास करने पर भी अपने मूल लक्ष्य तक पहुंचने में असमर्थ रह जाता है तो वह उसी लक्ष्य से मिलता-जुलता दूसरा लक्ष्य अपनाता है, जो आसानी से पूरा हो सके। इस प्रतिस्थापित लक्ष्य की पूर्ति से उसका मानसिक तनाव कुछ कम हो जाता है। उदाहरण के लिए यदि एक व्यक्ति विश्वविद्यालय में प्रोफेसर बनना चाहता है लेकिन यदि वह किसी कारण से नहीं बनता है तब वह कालेज में लेक्चरर होकर ही अपनी मानसिक इच्छा की पूर्ति से संतुष्टि प्राप्त करता है।

v. **विश्लेषण एवं निर्णय -** जब व्यक्ति के सामने एक से अधिक विरोधी इच्छाएं या लक्ष्य होते हैं, तो उसके अन्दर मानसिक द्वन्द उत्पन्न होता है। और मानसिक तनाव बढ़ता है। ऐसी स्थिति उत्पन्न होने पर व्यक्ति दोनों लक्ष्यों के हर पहलू का भली-भांति विश्लेक्षण करता है। जो भी उसे अधिक समझ पड़ता है, उसी के पक्ष में निर्णय लेता है। ऐसा करते समय वह अपने पूर्ण अनुभवों की सहायता लेता है।

(ख) अप्रत्यक्ष उपाय:-

तनाव को कम करने के अप्रत्यक्ष उपाय वे हैं जिन्हें व्यक्ति अचेतन रूप से अपनाता है। तनाव से, अपनी मानसिक पीड़ा अथवा सुखद अनुभूतियों से बचने के लिए इन उपायों को सुरक्षा प्रक्रियाएं (Defence Machanisms) कहा जाता है। ये सुरक्षा प्रक्रियाएं अचेतन मन के द्वारा स्वयं होती रहती हैं, जिनका व्यक्ति को ज्ञान नहीं होता है। ये रक्षात्मक युक्तियां व्यक्ति द्वारा संतोषजनक सामंजस्य (Adjustment) प्राप्त करने तथा अपने मानसिक द्वन्द को दूर करने का प्रयत्न है।

शोधन (Siblimation): शोधन अचेतन मन की वह मानसिक प्रक्रिया है जिसके अन्दर व्यक्ति की मूल-प्रवृत्यात्मक शक्ति या संवेगात्मक शक्ति, पाशविक आवश्यकताएं या इच्छाएं आदि को ऐसे कृत्रिम पक्ष की ओर मोड़ दिया जाता है जिसे समाज की स्वीकृति प्राप्त है। इससे मूल प्रवृत्तियों का शोधन हो जाता है। इस विचार के समर्थक फ्राइड महोदय हैं।

i. **परावर्तन (Withdrawl) :** प्रायः व्यक्ति दुःखद या तनाव उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों से अपने आप को अलग कर लेता है या पीछे हट जाता है। ऐसे व्यक्ति को पलायनवादी कहा

जाता है। ये व्यक्ति किसी को कष्ट नहीं पहुंचाते, किन्तु जब इसका पलायन व्यवहार (परावर्तन) असाधारण रूप में परावर्तित हो जाता है तो ये समायोजित होने में कठिनाई का अनुभव करते हैं। उदाहरण के रूप में कक्षा में जब बालक को चिढ़ाया या अपमानित किया जाता है तो वह अपने आपको सहपाठियों से अलग रखने लगता है।

ii. **तादाम्य स्थापित करना (Identification):** तादाम्य स्थापित करना समायोजन की एक साधारण अवस्था है। यह प्रवृति लगभग सभी व्यक्तियों में पाई जाती है। जब व्यक्ति किसी क्षेत्र में असफल या गुणहीन होता है तो वह किसी अन्य सफल एवं गुणशील व्यक्ति के साथ तादाम्य स्थापित कर लेता है। अर्थात् उसके गुणों एवं कृत्यों को अपने में देखने लगता है। उदाहरण के लिए जैसे कोई बालक मंदबुद्धि है और उसके पिता कालेज में प्रोफेसर हैं तो वह अपना परिचय अपने पिता के बारे में बताकर देता है। इस तरह वह अपनी कमजोरी को कम कर लेता है।

iii. **आश्रित होना (Becoming dependent) :** जब व्यक्ति बार-बार प्रयत्न करने के बाद भी लगातार असफल हो जाता है तो वह अपनी समस्या को सुलझाने का उत्तरदायित्व किसी सबल या अधिक बुद्धिमान को सौंप देता है और उसके सुझावों, निर्देशों और आज्ञाओं का पालन करता है। तब आश्रित व्यक्ति का बहुत हित होता है।

iv. **प्रक्षेपण (Projection):** व्यक्ति अपनी असफलता का दोष वातावरण के अन्य पदार्थों या व्यक्तियों के सिर पर डाल देते हैं। उदाहरण के लिए किसी पद पर नियुक्ति के लिए अयोग्य ठहराये जाने पर और न चुने जाने पर व्यक्ति यह कहकर संतोष करता है कि किसी से कम योग्य नहीं था किन्तु चयन समिति (Selection Committee) ने पक्षपात किया है। इसी प्रकार परीक्षा में फेल होने वाला परिक्षार्थी सारा दोष प्रश्नपत्र और परीक्षक पर डाल देता है।

(ग) क्षतिपूर्ति विधियां (Compensatory Method)

क्षतिपूर्ति व्यक्ति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष दो प्रकार से करता हैः-

i. **प्रत्यक्ष ढंग -** इस विधि द्वारा व्यक्ति परिश्रम करके उसी क्षेत्र में सफलता प्राप्त करता है, जिसमें कि वह कमी का अनुभव करता है। उदाहरण के लिए पढ़ाई लिखाई में कमजोर बालक अधिक मेहनत करके और रात-दिन पढ़ाई कर अच्छा विद्यार्थी बन जाता है।

ii. **अप्रत्यक्ष ढंग -** इस विधि द्वारा व्यक्ति एक क्षेत्र में असफलता प्राप्त करने पर किसी दूसरे क्षेत्र में कुशल एवं प्रवीण होकर सफलता प्राप्त करता है। इस प्रकार उसकी हीनता की भावना जो

पहले क्षेत्र में असफलता के कारण उत्पन्न हुई थी दूर हो जाती है और उसका मानसिक तनाव कम हो जाता है। उदाहरण के लिए पढ़ाई लिखाई में कमजोर बालकअच्छा खिलाड़ी, वक्ता, कलाकार आदि बनकर उसकी क्षतिपूर्ति करने का प्रयास करता है।

(घ) आक्रामक उपाय (Aggressive Method) :

आक्रामक उपाय से तात्पर्य उस उपाय से है जिसमें व्यक्ति आवश्यकताओं की पूर्ति में बाधा पहुंचाने वाले या असंतोष उत्पन्न करने वाले व्यक्ति या वस्तु को चोट या हानि पहुंचाकर अपने मानसिक तनाव को कम करना चाहता है। आक्रामकता भी प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों प्रकार की हो सकती हैः-

i. **प्रत्यक्ष आक्रामकता -** इस विधि में व्यक्ति उसी व्यक्ति या वस्तु पर आक्रमण करता जो उसके असंतोष का कारण होता है। उदाहरण के लिए परीक्षा में नकल करते हुए पकड़े जाने पर वह कक्ष निरीक्षक पर ही आक्रमण कर देता है।

ii. **अप्रत्यक्ष आक्रामकता -** इसमें व्यक्ति असंतोष उत्पन्न करने वाले व्यक्ति या वस्तु पर आक्रमण न करके किसी दूसरे व्यक्ति या दूसरे पर आक्रमण करता है। इसे ही आक्रामकता प्रतिस्थापना (Displacent of Agression) भी कहते हैं। जैसे उक्त परीक्षार्थी कक्ष निरीक्षक पर आक्रमण न करके बाहर आकर अपने दोस्तों या छोटे भाइयों से लड़ झगड़कर भी अपना तनाव दूर कर लेता है। कभी-कभी व्यक्ति अपने को ही दण्डित करता है। इसे अंतनिर्देशित आक्रामकता कहते हैं।

12.6 सारांश

प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन को सुखी, सम्पन्न व सम्मानजनक स्थिति में चाहता है। यह कुछ व्यक्ति को पैतृक प्राप्त होती है और कुछ व्यक्तियों को इसके लिए कड़ी मेहनत करनी पड़ती है, जिससे व्यक्ति अपनी सम्मानजनक स्थिति कोबनाएरखता है। लेकिन कभी-कभी ऐसी स्थिति आ जाती है कि वह जो उद्देश्य बनाता है, उसको पूरा करने में असफल हो जाता है या उसको कोई व्यक्ति हानि पहुंचाता है, तब वह उसके प्रति आक्रोशित हो जाता है। उसके अन्दर एक मानसिक द्वन्द पैदा हो जाता है। यदि वह उससे बदला लेने में असमर्थ रहता है तब उसके अन्दर कुण्ठा की भावना पैदा हो जाती है। वह असामाजिक व्यवहार करने लगता है। उसमें कुसमायोजन के लक्षण पैदा हो जाते हैं। ऐसे व्यक्ति को समय व परिस्थितियों में सुधार करके सुधारा जा सकता है। उसका ध्यान किसी और कार्य में लगाकर समाजोपयोगी सदस्यबनाएरखा जाता है।

दूसरी ओर यदि छात्र ने विज्ञान विषय ले लिया, लेकिन वह उसमें सफल नहीं हो पाया, तब वह कुंठा से ग्रसित हो जाता है। यदि छात्र को खेल, कलाकारी या और विषय का अध्ययन कराकर जिसमें वह अच्छा परिणाम दे सकता है, तो इससे वह अपने पूर्व कुण्ठा को भूल कर नये सिरे से कार्य करने लगता है। अतः हमें छात्र व अन्य सभी व्यक्ति के साथ उचित सम्मानजनक व्यवहार करना चाहिए।

12.7 शब्दावली

1. **कुसमायोजन** -समाज में रहते हुए जब किसी कारण से कुण्ठा, भग्नाशा, मानसिक द्वन्द व्यक्ति के मस्तिष्क में पैदा हो जाता है, तब वह सामान्य व्यक्ति से हटकर समाज में असामान्य व्यवहार करता है। ऐसे व्यवहार को हम कुसमायोजन कहते हैं।
2. **ब्रोकेन होम्स** - ब्रोकेन होम्स से हमारा अभिप्रायः ऐसे परिवार से होता है जो किसी कारण माता-पिता से सम्बंध विच्छेद होने पर दोनों अलग-अलग रहते हैं। ऐसे परिवार के बच्चे प्यार व दुलार से वंचित रहते हैं, जिसके कारण ऐसे बच्चों में कुसमायोजन विकसित होने लगता है।
3. **सांवेगिक लक्षण (Emotional Symptoms)** - कुसमायोजन की स्थिति में बालकों में उत्पन्न चिन्ता, डर, हीनता का भाव, आत्मदोष, मानसिक तनाव, बैचेनी आदि जैसे लक्षण सांवेगिक लक्षण कहलाते हैं।

12.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. सभी जगह
2. असत्य
3. सत्य
4. असत्य
5. धनात्मक
6. अपराधी प्रवृतियां
7. समायोजन
8. संवेगात्मक रूप से असंतुलित
9. हां

10. सत्य

12.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सिंह अरूण कुमार (1998), शिक्षा मनोविज्ञान, भारती भवन, कदमकुआं पटना।
2. सारस्वत (डां) मालती (1997) शिक्षा मनोविज्ञान की रूपरेखा, आलोक प्रकाशनः लखनऊ।
3. पाठक पी.डी., शिक्षा मनोविज्ञान, विनोद पुस्तकः आगरा।
4. पाण्डा अनिल कुमार (2011), शिक्षा मनोविज्ञान, साहित्य रत्नालय: कानपुर

12.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. कुसमायोजन का अर्थ लिखिए। बालकों में कुसमायोजन होने के प्रमुख कारणों को लिखिए।
2. कुण्ठा से आप क्या समझते हैं? कुण्ठा के प्रमुख कारणों की विस्तार से व्याव्या कीजिए।
3. मानसिक द्वन्द के दुष्प्रभावों का वर्णन कीजिए।
4. द्वन्द की परिभाषाएं लिखिए। द्वन्द से बचने के सामान्य उपायों की व्याख्या कीजिए।
5. कुसमायोजन के प्रमुख लक्षण की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
6. कुसमायोजन का मानव जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है? विस्तृत व्याख्या कीजिए।
7. विद्यालय द्वारा कुसमायोजन को रोकने के उपायों का वर्णन कीजिए।

इकाई 13 - समायोजन युक्तियाँ तथा उनकी विशेषताएँ, कुण्ठा और द्वन्द की समस्या एवं उनका समाधान

13.1 प्रस्तावना
13.2 उद्देश्य
13.3 समायोजन का अर्थ
13.3.1 समायोजन प्रक्रिया
13.3.2 समायोजन की युक्तियाँ
13.4 कुण्ठा का अर्थ
13.4.1 कुण्ठा के स्रोत
13.4.2 कुण्ठा का समाधान
13.5 द्वन्द का अर्थ
13.5.1 द्वन्द के स्रोत
13.5.2 द्वन्द के प्रकार
13.5.3 द्वन्द का समाधान
13.6 सारांश
13.7 शब्दावली
13.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर
13.9 संदर्भ ग्रंथ सूची
13.10 निबंधात्मक प्रश्न

13.1 प्रस्तावना

आज का युग चिन्ता एवं तनाव का युग कहा जाता है। आधुनिक युग के तेजी से बदलते परिवेश में हमारे जीवन के प्रारम्भिक वर्षों से ही अनेक प्रतिबल अपना दबाब डालते हैं। आज हमारी आवश्यकताएँ अनन्त हैं। हम अपने साधनों के माध्यम से इन आवश्यकताओं की पूर्ति में प्रयत्नशील हैं, परन्तु प्रश्न यह उठता है कि क्या यह सम्भव है कि आज का मनुष्य उन सभी इच्छाओं की पूर्ति कर

सकता है जिनको वह प्राप्त करना चाहता है। आज की व्यवस्था में यह असम्भव ही प्रतीत होता है। ऐसी स्थिति में जब आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती, व्यक्ति मानसिक स्तर पर अतृप्त बना रहता है, लेकिन फिर भी वह अपनी बुद्धि एवं सामर्थ्य की सहायता से नई-नई समस्याओं, आवश्यकताओं एवं परिस्थितियों से निपटने की कोशिश करता रहता है। इस प्रकार के प्रयास को समायोजन की प्रक्रिया कहते हैं। उपस्थित समस्याओं का यथोचित समाधान ढूढंना जीवन को सुखी बनाए रखने के लिए आवश्यक होता है। समायोजन व्यक्तिगत एवं सामाजिक स्तर पर भी स्थापित करना पड़ता है। यह कार्य व्यक्ति को स्वयं करना पड़ता है। इसमें व्यक्ति के विचार, अनुभव, सोच या सम्पूर्ण व्यक्तित्व की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, हमारे व्यक्तित्व की मनोदैहिक विशेषताएँ जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में समायोजन स्थापित करने में योगदान देती है। ऐसे अनेक कारक हैं जो समस्या उत्पन्न करते हैं। मुख्यतः ये समस्याएं तीन प्रकार की होती हैं - (1) सर्वप्रथम, दैहिक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि की समस्याएं (2) दूसरे, सामाजिक -सांस्कृतिक अपेक्षायें, मान्यतायें व परम्परायें, जो कभी-कभी व्यक्ति के लक्ष्यों के मार्ग में बाधा उत्पन्न करती है (3) तीसरे, सम्बन्धित व्यक्ति की अपनी व्यक्तिगत व विशिष्ट मनोवैज्ञानिक समस्याएं जैसे अपने मान-सम्मान, सुरक्षा व प्रतिष्ठा, प्रेम व पर्याप्तता की समस्याएं। व्यक्ति का कार्य इनके प्रति उचित दृष्टिकोण अपनाते हुए सामंजस्य स्थापित करना होता है। यह कार्य वह जितनी कुशलता से कर लेता है, उसका समायोजन उतना ही अच्छा होता है।

प्रस्तुत इकाई में आप समायोजन युक्तियों एवं उनकी विशेषताओं को समझ सकेंगे तथा समायोजन की समस्या के मुख्य कारकों कुण्ठा और द्वन्द एवं उनके समाधान का अध्ययन भी कर सकेंगे।

जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में व्यक्ति कभी-कभी कुसमायोजित व्यवहार करता है। हमारे लिए यह समझना आवश्यक है कि कब व्यक्ति का समायोजन ठीक नहीं चल रहा है तथा उसे मदद की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, हमारे लिए यह जानना भी जरूरी है कि व्यक्ति के जीवन में कुण्ठा और द्वन्द की किस प्रकार की समस्याएं चल रही हैं, व्यक्ति इनका समाधान किस सीमा तक कर पा रहा है एवं वो कौन सी विधियाँ है जिनके द्वारा माता-पिता, अध्यापक, सहयोगी, मनोवैज्ञानिक इत्यादि ऐसे व्यक्तियों की सहायता कर सकते हैं।

13.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. समायोजन युक्तियों को भली-भांति समझ सकेंगे।

2. कुण्ठा के स्रोत एवं समाधान विधियों से अवगत हो सकेंगे।
3. द्वन्द के स्रोत, प्रकारों व समाधान विधियों से परिचित हो सकेंगे।
4. द्वन्द के प्रकारों व समाधान विधियों क वर्णन कर सकेंगे।
5. द्वन्द की समाधान विधियों की व्याख्या कर सकेंगे।

13.3 समायोजन का अर्थ

समायोजन की युक्तियों को जानने से पहले समायोजन का अर्थ एवं समायोजन प्रक्रिया को समझना आपके लिए लाभप्रद होगा।

मोहन का किस्सा

मोहन नाम का एक गरीब नवयुवक एक धनी परिवार की सुन्दर लड़की राधा से शादी करना चाहता था। राधा उससे शादी करने को तैयार थी परन्तु उससे यह शर्त रखी कि मोहन को शादी से पहले खूब सारा पैसा कमाना होगा। मोहन ईमानदारी से भरपूर मेहनत कर पैसा कमाने का प्रयास करता है, परन्तु वह इतनी जल्दी सफल नहीं हो पाता है। उसकी इस असफलता का देखकर राधा उससे शादी करने को मना कर देती है तथा एक दूसरे अमीर लड़के से विवाह कर लेती है। इस पर मोहन बहुत उदास हो जाता है लेकिन फिर भी वह अपना संतुलन बनाए रखता है। वो लगातार मेहनत करता रहता है तथा कुछ समय बाद वह एक सफल व धनी व्यक्ति बन जाता है। अब मोहन एक दूसरी लड़की से शादी कर अपना घर बसा लेता है। इस प्रकार मोहन अपने जीवन में समायोजन स्थापित कर लेता है।

समायोजन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं तथा परिस्थितियों के साथ सामंजस्य स्थापित करने में सफल होता है। मनुष्य का व्यवहार विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं से संचालित होता रहता है लेकिन इन आवश्यकताओं की प्रेरणा मात्र से ही मानव व्यवहार नहीं बनता क्योंकि एक ओर जहाँ आवश्यकताओं से व्यवहार को प्रेरणा मिलती है तो दूसरी ओर उस प्रेरणा को प्रभावित करने वाली अनेक व्यक्तिगत तथा सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियाँ भी होती हैं। समायोजन प्रक्रिया में व्यक्ति को इन दो रास्तों के बीच में से गुजरना होता है। यदि व्यक्ति ऐसा करता है तो वह सुसमायोजित होता है और यदि वह सामंजस्य स्थापित नहीं करता है, तो वह प्रतिबल, कुण्ठा तथा द्वन्द आदि से ग्रस्त होकर कुसमायोजित हो जाता है, इससे न केवल समाज में व्यक्ति की प्रभावशीलता घटती है, बल्कि उसका निजी जीवन भी अस्त-व्यस्त हो जाता है, इसलिए जीवन को खुशहाल बनाने के लिए व्यक्तिगत एवं समाजिक समायोजन का अच्छा होना आवश्यक है। इससे व्यक्ति की प्रभावशीलता बढ़ती है एवं व्यक्तिगत सन्तुष्टि प्राप्त होती है।

समायोजन के दो पक्ष होते हैं, ये हैं सामाजिक पक्ष एवं व्यक्तिगत पक्ष। समायोजित व्यक्ति का सामंजस्य दोनों ही आयामों पर सन्तोषजनक होता है। समायोजन की यह प्रक्रिया जीवन भर चलती रहती है। जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में संकटों पर विजय प्राप्त करना ही समायोजन है। इसके लिए मानसिक खुलापन तथा स्वयं में विश्वास आवश्यक होता है। व्यक्ति के पास अपने पर्यावरण का जितना अधिक ज्ञान होता है तथा जितना अधिक उसे अपने ऊपर विश्वास होता है, उसी के अनुरूप उसमें समायोजन की योग्यता भी विकसित होती है। अपने अर्जित ज्ञान से उसे यह निर्णय लेने में सहायता मिलती है कि उसे किस परिस्थिति में कैसा व्यवहार करना है।

समायोजन की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:-

1. समायोजन एक सतत् प्रक्रिया है।
2. इसका उद्देश्य समस्यात्मक परिस्थिति के साथ सामंजस्य स्थापित करना होता है।
3. आवश्यकता की पूर्ति में बाधा आ जाने पर समायोजन की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है।
4. आवश्यकता पूर्ति के लिए उचित लक्ष्य का चयन करना पड़ता है।
5. व्यक्ति द्वारा लक्ष्य प्राप्ति का प्रयास किया जाता है।
6. लक्ष्य प्राप्ति हो जाने पर सामंजस्य की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

अब तक आप यह समझ चुके होंगे कि अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के मार्गों में आयी परिस्थितियों के प्रति यथोचित व्यवहार करना ही समायोजन है। आइए अब समायोजन की प्रक्रिया को समझने का प्रयास करते हैं।

13.3.1 समायोजन प्रक्रिया

मानव एक बुद्धिमान प्राणी है, अतः वह अपनी आवश्यकताओं के प्रति स्वयं ही सजग रहता है तथा वह अपने वातावरण के साथ उचित सम्पर्क स्थापित करता है। समायोजन प्रक्रिया का अर्थ है - व्यक्ति व पर्यावरण के साथ प्रभावपूर्ण व उचित सामंजस्य बनाए रखना। आवश्यकता के जन्म के साथ ही व्यक्ति में प्रेरणा उत्पन्न होती है एवं उसकी मानसिक शान्ति प्रभावित होती है जिसके फलस्वरूप वह ऐसे कार्य करता है जिससे कि उस प्रेरणा की पूर्ति हो जाए, परन्तु प्रत्येक प्रकार की प्रेरणा की पूर्ति सम्भव नहीं है क्योंकि अनेक बाह्य एवं आन्तरिक कठिनाइयों के कारण इन प्रेरणाओं की सन्तुष्टि में बाधा उपस्थित होती है। व्यक्ति इन बाधाओं को दूर करने के लिए अन्य प्रकार के अप्रत्यक्ष साधनों का उपयोग करता है जिससे कि प्रेरणा या आवश्यकता की पूर्ति किसी न किसी प्रकार से हो जाए। जब उसका लक्ष्य सिद्ध हो जाता है तो उसे ऐसा अनुभव होता है कि मन का बोझ हल्का हो गया है। इस समायोजन प्रक्रिया से व्यक्ति के मानसिक जीवन को सन्तुष्टि प्राप्त होती है तथावह

पर्यावरण की तत्कालीन परिस्थितियों के बीच सामंजस्य अनुभव करने लगता है।

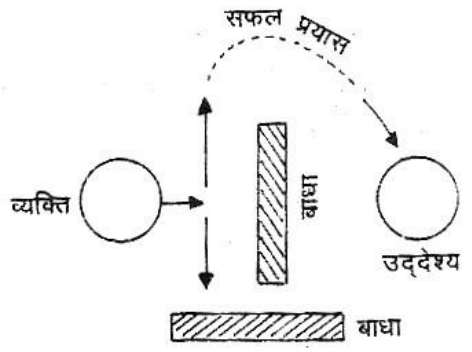

चित्र सं0 1 - समायोजन की प्रक्रिया

अब आपको यह स्पष्ट हो गया होगा कि समायोजन प्रक्रिया का तात्पर्य व्यक्ति की आवश्यकताओं के मार्ग में आने वाली तत्कालीन परिस्थितियों से सामंजस्य स्थापित कर लक्ष्य प्राप्त करना होता है।

13.3.2 समायोजन की युक्तियाँ

व्यक्ति अपने लक्ष्य के मार्ग में आने वाली परिस्थितियों से समायोजन स्थापित करने के लिए अनेक प्रकार की प्रतिक्रियाएँ करता है जिन्हें समायोजन की युक्तियाँ कहते हैं। इसमें मुख्यतः दो प्रकार के प्रयास किए जाते हैं:-

क. प्रत्यक्ष बचाव - जब व्यक्ति यह अनुभव करता है कि वह अपनी आवश्यकता के मार्ग में आने वाली परिस्थितियों का सामना करने में सक्षम है - तब वह प्रत्यक्ष बचाव की युक्ति अपनाता है। प्रत्यक्ष बचाव की युक्ति में तीन प्रकार की प्रतिक्रियाएँ होती हैं- आक्रमण, असक्रियता और समझौता।

i. **आक्रमण -** आक्रमण का अर्थ केवल विनाशकारी व्यवहार ही नहीं, बल्कि इसका अर्थ संघर्षपूर्ण व्यवहार भी है। आक्रामक व्यवहार द्वारा व्यक्ति अपने लक्ष्य के मार्ग की अड़चनों को दूर करने का भरसक प्रयत्न करता है। यह एक आदिम प्रवृत्ति है जो व्यक्ति को अड़चनों का सामना करने के लिए सक्रियता और ऊर्जा प्रदान करती है। व्यक्ति दृढ़ निश्चय और विश्वास के साथ अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने लगता है। वह 'प्रयत्न एवं त्रुटि' के आधार पर अपने ढंगों और तरीकों को बदलने में जरा भी नहीं हिचकिचाता। प्रत्येक असफलता उसमें नए उत्साह को जन्म देती है। वह उस समय तक सक्रिय रहता है जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाए।

ii. **असक्रियता -** असक्रियता का अर्थ है लक्ष्य के मार्ग में आने वाली परिस्थितियों से खुद को अलग कर लेना। शारीरिक असक्रियता करने के साथ-साथ व्यक्ति मानसिक असक्रियता भी दिखाता है, जैसे हार मान लेना, परिस्थिति से जुड़े अपने अहं को कम करना, आकांक्षा स्तर

को नीचा कर लेना, व्यवहार में जोश और उत्साह को कम कर लेना भय का संवेग असक्रियता को ऊर्जा प्रदान करता है। भय व्यक्ति को कष्टदायक परिस्थिति से बचने की प्रेरणा देकर सुरक्षित रहने में सहायक सिद्ध होता है। किसी लक्ष्य में बार-बार असफल हो जाने पर उसे छोड़ देना ही अधिक श्रेयकर होता है ताकि क्षमताओं और ऊर्जा का कहीं और सदुपयोग किया जा सके। यहाँ यह समझना जरूरी है कि आज के युग में कुछ परिस्थितियाँ ऐसी हैं जिनमें असक्रियता दिखाना असम्भव हो जाता है, जैसे - वार्षिक परीक्षा देना, नौकरी के लिए साक्षात्कार में उपस्थित होना, अत्यधिक स्पर्द्धा का सामना करना।

iii. **समझौता -** जीवन की अनेक परिस्थितियाँ ऐसी होती हैं। जिनमें न सीधे आक्रमण से सफलता प्राप्त की जा सकती है और न ही असक्रियता से। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक हो जाता है कि परिस्थितियों से किसी न किसी प्रकार का समझौता कर लिया जाए, जैसे - कार्य-विधि को संशोधित करना, प्रतिस्थापन लक्ष्यों को स्वीकार करना। जब व्यक्ति के सामने एक जैसे दो आकर्षक लक्ष्य होते हैं तब वह समझौते की ही प्रतिक्रिया करता है। एक लक्ष्य को पाने के लिए दूसरे लक्ष्य को छोड़ना ही पड़ता है।

उपर्युक्त तीनों प्रत्यक्ष बचाव प्रतिक्रियाओं - आक्रमण, असक्रियता और समझौते में समान रूप से निम्नलिखित चार चरण पाए जाते हैं:-

i. समस्या को समझना और परिभाषित करना।
ii. समस्या के वैकल्पिक समाधानों की तलाश करना।
iii. सर्वाधिक सुरक्षित और लाभदायक विकल्प का चयन करना।
iv. चयनित विकल्प के संभावित परिणामों का मूल्यांकन यह देखने के लिए करना कि कहाँ तक त्रुटियों में कमी और सुधार सम्भव है।

इन चार चरणों में तीसरा चरण विकल्प का चयन करना सर्वाधिक कठिन है क्योंकि इसमें गुण-दोषों को तौलना पड़ता है तथा भावी परिणामों पर विचार करना पड़ता है।

चूँकि प्रत्यक्ष बचाव की तीनों युक्तियों में से किसी एक के चयन का कोई वस्तुनिष्ठ आधार नहीं होता इसलिए व्यक्ति परिस्थिति के सम्बन्धी अपने आंकलन के आधार पर आक्रमण प्रतिगमन और समझौते में से किसी एक का चयन कर लेता है। इसमें कोई शक नहीं कि समायोजन की यह युक्तियाँ हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति में अत्यन्त सहायक हैं किन्तु सभी परिस्थितियों का सामना इनके द्वारा संभव नहीं होता, इसलिए विवश होकर व्यक्ति को दूसरी समायोजन युक्तियों मनोरचनाओं का सहारा लेना पड़ता है।

ख. मनोरचनाएँ - व्यक्ति को जीवन में अनेक विपरीत परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। व्यक्ति अपने लक्ष्य में बाधक इन विषम परिस्थितियों में यथा-सम्भव समायोजित होने का प्रयास करता है। व्यक्ति अपने ज्ञान व तर्क के आधार पर विषम परिस्थितियों से उत्पन्न निराशाओं, विफलताओं व हीनता के दुष्प्रभाव को कम करने का चेतन रूप से भरपूर प्रयत्न करता है, परन्तु जब व्यक्ति इस प्रक्रम में असफल रहता है, तब व्यक्ति का अचेतन अति कुशलता के साथ इन विषम परिस्थितियों से उत्पन्न कटु अनुभवों का निवारण तथा निराकरण प्रायः विभिन्न मनोरचनाओं के माध्यम से करता है। इन मनोरचनाओं का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति को आत्म-अवमूल्यांकन से बचाना और उसके कष्टदायक तनाव और चिन्ताओं को कम करना होता है। इसी कारण मनोरचनाओं को रक्षायुक्तियाँ भी कहते हैं। वास्तव में व्यक्ति के समायोजन प्रक्रम तथा उसके व्यक्तित्व के विकास में मनोरचनाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इन मनोरचनाओं में निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं।

a. मनोरचनाएं एक प्रकार की मानसिक क्रिया विधियाँ हैं।
b. मनोरचनाओं से व्यक्ति की समायोजन सम्बन्धी आवश्यकताओं की सरलता से सन्तुष्टि होती है।
c. यह सुरक्षात्मक उपाय हैं जिससे व्यक्ति के तनाव, निराशा व असफलता की भावना में विशेष रूप से कमी आती है।
d. मनोरचनाओं से व्यक्ति के आत्म-सम्मान की रक्षा होती है।
e. इनसे व्यक्ति में कुंठाओं के प्रति सहनशक्ति बढ़ती है।
f. समायोजन की यह युक्तियां अप्रत्यक्ष तथा अचेतन रूप से निर्धारित होती है। यह मनोरचनाएँ प्रयास रहित रूप से स्वतः ही कार्य करती रहती हैं।
g. मनोरचनाएँ विपरीत परिस्थितियों में व्यक्तित्व को बिखरने से बचाती है।
h. एक समय पर एक से अधिक मनोरचनाएँ भी सक्रिय रह सकती हैं।
i. मनोरचनाओं का समायोजी महत्व कुछ सीमाओं के अन्दर ही होता है। यदि इनका ज्यादा उपयोग किया जाए तो व्यक्ति में असामान्य व्यवहार के लक्षण दिखायी देने लगते हैं और व्यक्ति में मानसिक रोग उत्पन्न हो सकते हैं।

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में अपने विशेष अनुभव होते हैं, क्योंकि प्रत्येक के पालन-पोषण की पद्धतियाँ भी अपने परिवार के अनुसार विशेष प्रकार की होती है। विषम परिस्थितियों में प्रत्येक व्यक्ति की मनोरचनाओं का रूप भी एक समान न होकर प्रायः अलग-अलग होता है। यहाँ यह जानना आपके

लिए जरूरी है कि एक समय पर केवल एक ही मनोरचना विकसित नहीं होती, बल्कि अनेक मनोरचनाएँ एक साथ भी सक्रिय रह सकती हैं। मुख्य मनोरचनाएं निम्न हैं -

i. **दमन -** दमन का आशय तनाव उत्पन्न करने वाले विचारों को अचेतन में डाल देने से है। दमन प्रायः सामाजिक रूप से अस्वीकार्य इच्छाओं से बचने का उपाय है। किसी विशेष लक्ष्य की प्राप्ति में असफलता भी इसका एक कारण हो सकती है। दमन के माध्यम से चेतन स्तर के संघर्षों का समाधान होता है। दमन पूर्ण व आंशिक हो सकता है। अचेतन में डाले गए यह विचार समाप्त नहीं होते बल्कि यह अप्रत्यक्ष रूप से व्यवहार को प्रभावित करते हैं। व्यक्ति के स्वप्नों एवं नशे की अवस्था में भी यह सामने आ जाते हैं।

आइए एक उदाहरण के द्वारा इसको समझने का प्रयास करते हैं। दीपक नामक युवक के बड़े भाई की शादी होती है। दीपक अपनी सुन्दर भाभी की तरफ आकर्षित होता है तथा उसके मन में उनके साथ शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करने का भी विचार आता है। यह अनैतिक विचार उसका चेतन मन स्वीकार नहीं कर पाता और इसे अचेतन मन में धकेल देता है। कुछ दिन बाद दीपक का एक रिश्तेदार दीपक से उसकी भाभी का नाम पूछता है तो दीपक बहुत कोशिश करने के बाद भी अपनी भाभी का नाम याद नहीं कर पाता।

ii. **तादात्मीकरण -** इस मनोरचना में व्यक्ति अपने व्यवहार को अपने जीवन के महत्वपूर्ण व्यक्ति के अनुरूप बनाने का प्रयास करता है। हमारा प्रारम्भिक तादात्मीकरण अपने माता-पिता के साथ होता है। अपने छोटे बच्चों को 'घर-घर' खेलते तो देखा ही होगा। सबसे बड़ा लड़का पिता का और लड़की माता का अभिनय करती है और दोनों छोटे बच्चों को इस प्रकार डांटते हैं जैसे वे सचमुच माता-पिता हों। कई बार हम फिल्म देखते हुए हीरो के साथ तादात्मीकरण स्थापित कर लेते हैं। तादात्मीकरण चाहे किसी से हो, इसका मूल उद्देश्य सुरक्षा, स्वीकृति एवं महत्व प्राप्त करना होता है। व्यक्ति नये व्यवहार, रूचियाँ तथा अभिवृत्तियाँ इसी मनोरचना के कारण सीखता है। आवश्यकता से अधिक तादात्मीकरण करने से व्यक्ति वास्तविकता से दूर हो सकता है।

iii. **प्रक्षेपण -** अपनी कमियों और गलतियों का दोष दूसरों पर थोप देने को प्रक्षेपण कहते हैं। व्यक्ति ऐसा अचेतन रूप से करता है। आपने यह कहावत तो सुनी होगी 'नाच न जाने आँगन टेढ़ा'। इसी प्रकार छात्र जब परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त नहीं कर पाता तो वह अध्यापक अथवा परीक्षा पद्धति को दोषी ठहराता है। असावधानी के कारण जब कोई नुकसान हो जाए तो व्यक्ति अपने भाग्य को कोसने लगता है। प्रक्षेपण हमें चिन्ता और अपराध भावना से बचाता है।

iv. **युक्तिकरण -** इस मनोरचना में व्यक्ति अपने प्रत्येक कार्यों को उचित ठहराने के लिए अवास्तविक तर्क तथा कारण प्रस्तुत करने लगता है। 'अंगूर खट्टे हैं' यह कहावत तो आपने सुनी होगी। लोमड़ी जब अंगूरों के गुच्छे तक नहीं पहुँच पाती तो उसे अंगूर खट्टे नजर आने लगते है। नौकरी प्राप्त करने में असफल व्यक्ति अपनी प्रतिष्ठा को बचाने के लिए उस नौकरी के अवगुणों को देखने लगता है- ''वेतन कम था'', ''कार्य के घण्टे अधिक थे'', ''काम बहुत अरूचिकर था'' आदि। युक्तिकरण के द्वारा व्यक्ति अपमानजनक स्थितियों में अपने आत्म-सम्मान व आत्म-प्रतिष्ठा को बचाए रखने में सफल होता है।

v. **प्रतिक्रिया-निर्माण -** प्रतिक्रिया-निर्माण का तात्पर्य सामाजिक रूप से अस्वीकार्य इच्छा के ठीक विपरीत व्यवहार के विकास से है। इसमें व्यक्ति का चेतन व्यवहार उसके अचेतन में दमित इच्छाओं के विपरीत हेाता है। इससे व्यक्ति की चिन्ता कम हो जाती है। एक माता प्रतिदिन दो तीन बार अपने बच्चे के स्कूल जाकर उसकी कुशलता के बारे में पूछा करती थी। स्कूल के अध्यापक इस माता की अत्यधिक ममता व चिन्ता से परेशान हो गए थे। वस्तुस्थिति यह थी कि वह बच्चा उसका सौतेला बेटा था। उसके अचेतन में उसे बच्चे के प्रति घृणा की भावना थी, किन्तु चेतन स्तर पर वह अपनी अचेतन की इच्छा के विपरीत स्नेह प्रदर्शित करती थी।

vi. **विस्थापन** - विस्थापन की प्रक्रिया में दमित एवं कुण्ठित इच्छाएं वास्तविक व्यक्ति या परिस्थिति से हटकर अन्य व्यक्तियों या पदार्थ पर स्थानान्तरित हो जाती है। इस प्रकार की क्रियाओं से व्यक्ति अपनी वास्तविक इच्छाओं को व्यक्त नहीं कर पाता। माँ के द्वारा पीटे जाने के बाद बालक का अपने छोटे भाई या दोस्त को पीटना, खिलौने तोड़ना आदि विस्थापन का उदाहरण है। इसी प्रकार किसी क्लर्क का दफ्तर में अपमानित होने के बाद पत्नी या बच्चों पर गुस्सा दिखाना आदि भी इसी का उदाहरण है।

vii. **उदात्तीकरण** - उदात्तीकरण का तात्पर्य अचेतन में दमित अनैतिक इच्छाओं को सामाजिक रूप से स्वीकृत लक्ष्य में बदलने से होता है। प्रेम में असफल व्यक्ति विभिन्न प्रकार के सृजनात्मक कार्य जैसे संगीत, कविता लेखन, मूर्तिकला, चित्रकला आदि के द्वारा अपनी दमित प्रेम भावना का उदात्तीकरण करते हैं। इस मनोरचना में अचेतन की दमित इच्छाओं का समाधान रचनात्मक कार्यों के द्वारा होता है तथा इससे समाज में व्यक्ति का सम्मान बढ़ता है।

viii. **क्षतिपूर्ति -** क्षतिपूर्ति के माध्यम से व्यक्ति अपनी अनुपयुक्त व हीन-भावना से रक्षा करता है। व्यक्ति अपनी कमियों की पूर्ति के लिए चेतन तथा अचेतन स्तर पर विभिन्न प्रकार के प्रयास करता

है। शारीरिक रूप से दुर्बल व्यक्ति द्वारा बौद्धिक क्षेत्र में विशेष योग्यता प्राप्त करना क्षतिपूर्ति का ही उदाहरण है।

ix. **रूपान्तरण -** रूपान्तरण में व्यक्ति अपने मानसिक संघर्षों का समाधान विभिन्न शारीरिक रोगों के लक्षणों द्वारा करता है। इन लक्षणों का कारण दैहिक न होकर मानसिक होता है। इसमें दमित इच्छा वेष बदलकर शारीरिक रोगों के लक्षणों के रूप में परिवर्तित होती है। इससे व्यक्ति दबावपूर्ण दुखद स्थिति से छुटकारा प्राप्त कर लेता है। उसे परिवार के सदस्यों की सहानुभूति प्राप्त हो जाती है। जिस छात्र ने साल भर पढ़ाई नहीं की उसके मन में यह तीव्र इच्छा उत्पन्न होती है कि ''ईश्वर करे, परीक्षा के दिन मुझे 1050 बुखार आ जाए।''

x. **प्रतिगमन -** प्रतिगमन के माध्यम से व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत कठिनाइयों का समाधान प्रारम्भिक बाल्यकाल की प्रतिक्रियाओं द्वारा करता है। इसमें व्यक्ति अपनी अवस्था से कम आयु के लोगों के व्यवहार को अपनाता है। नये शिशु के आने पर पहले बच्चे द्वारा अपने माता-पिता का प्यार पाने के लिए छोटे बच्चे की तरह रोना, चलना, तुतलाना, अँगूठा चूसना आदि प्रतिगमन के उदाहरण हैं। अत्यधिक तनाव होने पर व्यक्ति द्वारा बच्चों की तरह नाँखून चबाना भी इसी का उदाहरण है।

xi. **कल्पना-तरंग -** प्रायः सभी व्यक्ति अपने जीवन की अनेक कमियों की पूर्ति कल्पना के माध्यम से करते हैं। कल्पना के माध्यम से व्यक्ति अपने संघर्षों एवं विफलताओं को कम करता है। कल्पना-तरंग आत्म केन्द्रित होती है। असफल व्यक्ति इसके द्वारा प्रसन्नता का अनुभव करता है। जैसे- एक दुर्बल व्यक्ति स्वयं की कल्पना एक पहलवान के रूप में करके प्रसन्न होता है।

xii. **वास्तविकता से पलायन -** यह सरलतम और सबसे आदिम मनोरचना है जिसमें व्यक्ति वास्तविकता के अस्तित्व से ही इन्कार कर देता है। आस्ट्रेलिया के रेगिस्तान में एक बहुत बड़े आकार का और तेज दौड़ने वाला पक्षी पाया जाता है जिसे शुतुरमुर्ग कहते हैं। इस पक्षी के लिए यह प्रसिद्ध है कि जब रेगिस्तान में भयानक रेतीले तूफान आते हैं, तो यह अपना सिर बालू में छिपाकर यह समझने लगता है कि तूफान समाप्त हो गया। उसकी इस आदत को शुतुरमुर्ग अभिवृत्ति कहा जाता है। पिंजड़े में बन्द तोता बिल्ली को आता देख अपनी आँखे बन्द कर लेता है और समझने लगता है कि बिल्ली चली गई। इसी प्रकार व्यक्ति भी उन सभी परिस्थितियों से बचना चाहता है जो अप्रिय होती है। उदाहरण के लिए वृद्धावस्था के कारण कमजोर शरीर वाला व्यक्ति यह बात मानने को तैयार नहीं होता है कि उसका शरीर अब पहले की तरह स्वस्थ्य नहीं रहा।

मनोरचनाओं का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति का उचित समायोजन करना है। मनोरचनाएँ असफलता से राहत पहुँचाती हैं, आन्तरिक सन्तुलन बनाए रखती हैं। इनके द्वारा व्यक्ति अपनी पर्याप्तता और महत्व को बनाए रखता है, किन्तु जब इन सुरक्षात्मक उपायों का आवश्यकता से अधिक उपयोग किया जाता है तो व्यक्ति में असामान्य व्यवहार के लक्षण दिखायी पड़ने लगते हैं। यदि कोई देश अपने बजट का बड़ा हिस्सा रक्षा-कार्यों में लगा दे तो वह निःसंदेह बाह्य आक्रमण से तो सुरक्षित हो जाएगा, किन्तु अत्यधिक रक्षा-खर्चों से उत्पन्न आर्थिक संकट से ही उस देश का पतन हो जाएगा। इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति अपनी मानसिक ऊर्जा का बहुत बड़ा भाग मनोरचनाओं पर खर्च कर दे तो उसके व्यक्तित्व का भी विघटन हो जाएगा।

अब तक आप समायोजन की युक्तियों के अर्थ, प्रकारों एवं उनकी विशेषताओं से परिचित हो गए होंगे। आइए अब हम समायोजन की समस्या के मुख्य कारकों कुण्ठा और द्वन्द्व एवं उनके समाधान को समझने का प्रयास करते हैं।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. समायोजन के दो पक्ष होते हैं, ये हैं _____एवं _____।
2. समायोजन प्रक्रिया का अर्थ है - व्यक्ति व पर्यावरण के साथ प्रभावपूर्ण व उचित _____बनाए रखना।
3. अपनी कमियों और गलतियों का दोष दूसरों पर थोप देने को _____कहते हैं।
4. मनोरचनाओं का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति का उचित _____करना है।

13.4 कुण्ठा का अर्थ

समायोजन की समस्या उत्पन्न करने में कुण्ठा का विशेष योगदान होता है। व्यक्ति की आवश्यकता तथा लक्ष्य के मार्ग में बाधा आ जाने से उत्पन्न असफलता की भावना को कुण्ठा कहते हैं। कुण्ठा की उत्पत्ति उस समय होती है। जब व्यक्ति की लक्ष्य में प्राप्ति में बाधा, असफलता या विलम्ब उत्पन्न हो जाता है। इससे व्यक्ति में तनाव पैदा होता है और वह निराशा का अनुभव करने लगता है। यदि व्यक्ति अपने लक्ष्य तक पहुँचने में सफल रहता है, तब इससे उसकी आवश्यकता की सन्तुष्टि हो जाने पर वह एक विशेष सन्तोष का सुखद अनुभव करता है, परन्तु जब उसके लक्ष्य के मार्ग में कोई विकट अड़चन आकर खड़ी होती है, और उसकी आवश्यकता अतृप्त रह जाती है, तब इससे व्यक्ति को संवेगात्मक तनाव का अनुभव होता है, जो कुण्ठा को जन्म देता है।

कुण्ठा के सम्बन्ध में एक मिथ्या धारणा यह रहती है कि इसका कारण हमेशा वाह्य वातावरण ही होता है, परन्तु यह धारणा भ्रामक है, क्योंकि कई बार व्यक्ति स्वयं भी इसके लिए उत्तरदायी होता है। उदाहरण के लिए, एक विद्यार्थी शिक्षा के क्षेत्र में उच्च उपलब्धि की आकांक्षा रखता है, परन्तु वह आलस्य के कारण आवश्यक परिश्रम नहीं करता। अतः वह असफल हो जाता है। यहाँ कुण्ठा के लिए वह विद्यार्थी स्वयं उत्तरदायी है।

कुण्ठा की दो अवस्थाएँ होती हैं -

प्रथम अवस्था में व्यक्ति को लक्ष्य प्राप्ति में किसी पर्यावरणीय कारक द्वारा बाधा उत्पन्न की जाती है।

दूसरी अवस्था में लक्ष्य प्राप्ति में बाधा के कारण व्यक्ति को असुखद अनुभूति होती है।

अब तक आप समझ चुके होंगे कि कुण्ठा एक प्रकार की असफलता की भावना है, जो लक्ष्य प्राप्त करने में आयी बाधाओं से उत्पन्न हेाती है। इसके कारण व्यक्ति का व्यवहार अनियमित तथा कभी-कभी असामान्य भी हो जाता है। ऐसे व्यक्ति जिनमें कुण्ठा के प्रति सहनशीलता पाई जाती है वे कुण्ठा की अवस्था में भी अपने व्यवहार को पूर्णतया सामान्यबनाएरखने का पूरा प्रयास करते हैं। कुण्ठा के अर्थ एवं स्वरूप को अच्छी तरह समझने के लिए इसके विभिन्न स्रोतों को जानना भी आपके लिए बहुत उपयोगी होगा।

13.4.1 कुण्ठा के स्रोत

व्यक्ति के लक्ष्य प्राप्ति में अनेक प्रकार की बाधाएँ आती है, इनकी अधिकता व्यक्ति में कुण्ठा उत्पन्न करती है। सामान्यतः कुण्ठा निम्न स्रोतों से उत्पन्न होती है:-

i. **प्राकृतिक पर्यावरण -** कुण्ठा के लिए एक सीमा तक प्राकृतिक पर्यावरण भी जिम्मेदार होता है। इसके अन्तर्गत महामारी, बाढ़, सूखा, अग्निप्रकोप, मौसम का प्रतिकूल होना आदि आते हैं जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कुण्ठा उत्पन्न करते हैं। जैसे - अगर किसी व्यक्ति का मकान बाढ़ में बह जाए और उसकी आर्थिक स्थिति इस प्रकार की न हो कि वह तुरन्त नया मकान बना सके तो उसमें कुण्ठा उत्पन्न हो जाएगी। इसी प्रकार विपरीत प्राकृतिक दशाएं जैसे- विशाल रेगिस्तान, ऊँचे-ऊँचे पहाड़, घने जंगल भी व्यक्ति में कुण्ठा उत्पन्न कर सकते हैं।

ii. **जैविक सीमाएं -** व्यक्ति के प्रयास केवल प्राकृतिक पर्यावरण के कारण ही सीमित नहीं रहते, बल्कि लक्ष्य प्राप्ति में व्यक्ति को जैविक सीमाओं को भी समझना होता है। कठोर परिश्रम के लिए हमारी शारीरिक शक्ति की भी एक सीमा होती है। हमारे प्रयास हमारी बुद्धि की क्षमता पर भी निर्भर करते हैं, विभिन्न शारीरिक व मानसिक तनावों को निरन्तर सहन करने की भी

एक सीमा होती है और इस पर व्यक्ति में कोई शारीरिक दोष हो अथवा उसमें बौद्धिक क्षमता कम हो, तब तो निश्चय ही उसे और अधिक कुण्ठा उत्पन्न होगी। इस प्रकार व्यक्ति की जैविक परिसीमायें भी कभी-कभी उसके लिए कुण्ठा का कारण बन जाती है।

iii. **सामाजिक बाधाएँ -** मानव एक सामाजिक प्राणी है, जिसके कारण उसे अपने व्यवहार को समाज के अनुकूल बनाना पड़ता है। सामाजिक प्रथाओं, रीतियों एवं अनौपचारिक नियमों के कारण व्यक्ति अपनी कुछ आवश्यकताओं की इच्छानुसार पूर्ति नहीं कर पाता है। इससे उसमें कुण्ठा उत्पन्न हो सकती है।

iv. **व्यक्तिगत कारक -** कुण्ठा की अनुभूति में व्यक्तिगत कारकों का प्रभाव पड़ता है। कभी-कभी लोग अपनी योग्यता एवं सामर्थ्य से ऊँचा लक्ष्य बना लेते हैं। जिसके फलस्वरूप उन्हें विफलताएँ प्राप्त होती हैं तथा धीरे-धीरे वे निराशा का शिकार हो जाते हैं, जैसे- कोई संगीतकार बनना चाहता है, परन्तु उसमें संगीत की क्षमता नहीं है। कई बार व्यक्ति अपने लक्ष्य तक पहुँचने के लिए पूरा प्रयास नहीं करता, साथ ही कभी-कभी व्यक्ति के पास अपने लक्ष्य प्राप्ति हेतु साधनों की कमी भी होती है। इस कारण भी व्यक्ति में कुण्ठा उत्पन्न हो सकती है।

v. कुण्ठा के कारण व्यक्ति का व्यवहार असमायोजित हो सकता है। अतः व्यक्ति को प्राकृतिक, जैविक, सामाजिक एवं व्यक्तिगत बाधाओं को ध्यान में रखते हुए अपने लक्ष्य का निर्धारण करना चाहिए। सरल एवं अस्थायी बाधाओं को दूर करना अपेक्षाकृत सरल होता है, परन्तु जटिल तथा स्थायी बाधाएँ व्यवहार को अस्थिर बना देती हैं। जब व्यक्ति बार-बार प्रयास करने पर भी असफल रहता है, तब धीरे-धीरे उसमें हीनता के भाव उत्पन्न हो जाते हैं। कभी-कभी निराशा में व्यक्ति का व्यवहार आक्रामक भी हो जाता है। इन प्रतिक्रियाओं के फलस्वरूप व्यक्ति में अनेक प्रकार के मानसिक लक्षण भी उत्पन्न हो सकते हैं। इन परिस्थितियों में सहनशील व्यक्ति अपनी कुण्ठा को दूर करने का प्रयत्न करता है जबकि अधिक कुण्ठित व्यक्ति ऐसी प्रतिक्रियाएँ करना आरम्भ कर देते हैं, जो उन्हें पूरी तरह असमायोजित बना देती है।

13.4.2 कुण्ठा का समाधान

किसी लक्ष्य प्राप्ति में असफल रहने पर व्यक्ति में मानसिक तनाव उत्पन्न हो जाता है। व्यक्ति इस तनाव को दूर करने के लिए अपनी विफलता के प्रति अनेक प्रकार की प्रतिक्रियाएँ करता है व्यक्ति द्वारा अपनी कुण्ठा का समाधान करने के लिए मुख्यतः निम्न प्रतिक्रियाएँ की जाती हैं:-

कुण्ठा के प्रति प्रत्यक्ष प्रतिक्रियाएँ

जब किसी लक्ष्य पर पहुँचने में व्यक्ति असफलता का अनुभव करता है, तो साधारणतया उन बाधाओं को दूर करने के लिए वह मुख्यतः दो विधियों का उपयोग करता है -

i. **प्रयत्नों में वृद्धि तथा विधियों में परिवर्तन -** जब व्यक्ति को विफलता प्राप्त होती है तो वह उस विफलता पर विजय प्राप्त करने के लिए अपने प्रयत्नों मे वृद्धि करता है। जैसे, विद्यार्थी प्रथम श्रेणी से पास होने के लिए उपयुक्त विधि को नहीं जानता जिसके फलस्वरूप उसे विफलता प्राप्त होती है, लेकिन नैराश्य स्थिति उपस्थित होने पर वह अपनी पुरानी विधियों में परिवर्तन करता है तथा अधिक प्रयत्नों एवं नवीन विधियों की सहायता से प्रथम श्रेणी प्राप्त करने का प्रयास करता है।

ii. **लक्ष्य में परिवर्तन -** अगर व्यक्ति को अपने प्रयासों एवं अन्य विधियों के उपयोग से भी कुण्ठा प्राप्त होती है तो वह अपने लक्ष्य में परिवर्तन कर लेता है। लक्ष्य में परिवर्तन दो प्रकार का हो सकता है या तो लक्ष्य की तीव्रता कम कर लेना (जैसे-प्रथम श्रेणी या द्वितीय श्रेणी) या एक लक्ष्य को छोड़कर दूसरा लक्ष्य ग्रहण कर लेना (जैसे- विज्ञान विद्यार्थी का कला के विद्यार्थी के रूप में परिवर्तन)। उदाहरणस्वरूप सभी विद्यार्थी प्रथम श्रेणी में पास नहीं हो सकते। अतः वे अपने लक्ष्यों में परिवर्तन कर लेते हैं। लेकिन एक विद्यार्थी अगर विफलता के फलस्वरूप या अन्य किसी कारण से पढ़ाई से ही अरूचि करने लगे तो वह अपने पढ़ने के लक्ष्य को छोड़कर व्यापार आदि का कार्य प्रारम्भ कर देता है।

कुण्ठा के प्रति अप्रत्यक्ष प्रतिक्रियाएँ

उपर्युक्त प्रतिक्रियाएँ कुण्ठा की सीधी प्रतिक्रियाएँ हैं लेकिन इनका प्रयोग हर परिस्थिति में सम्भव नहीं होता। इन परिस्थितियों में व्यक्ति अप्रत्यक्ष प्रतिक्रियाएँ करता है, जो इस प्रकार हैं-

i. **हीनता ग्रन्थि -** हीनता की ग्रन्थि प्राय उन्हीं व्यक्तियों में विकसित होती है जो यह समझने लगते हैं कि उनमें व्यक्तिगत दोष विद्यमान है जिसके फलस्वरूप उन्हें लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो रही है। उनमें एक प्रकार का भय बना रहता है। ऐसा व्यक्ति सन्देही, चिंताशील, अन्तर्मुखी आदि गुणों से युक्त हो जाता है। हीन भावना एवं योग्यता में कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है। हीनता की भावना उच्च योग्यता वाले व्यक्तियों में भी देखी जाती है।

   हीन भावना का उपचार भी सम्भव है। मुख्यतः इसके उपचार की दो विधियां हैं -

   a. व्यक्ति की क्षमता के आधार पर लक्ष्य का निर्धारण हो।
   b. व्यक्तिगत अक्षमताओं को दूर करके लक्ष्य प्राप्ति हेतु अधिक प्रयास किए जाएं।

हीन भावना का महत्व भी है। कभी- कभी व्यक्ति हीन भावना के कारण अधिक प्रयत्न करता है तथा उसे सफलता भी प्राप्त होती है। जैसे बाल्यावस्था में रूजवेल्ट शारीरिक दृष्टिकोण से काफी कमजोर थे तथा इस शारीरिक हीनता के कारण वे अत्यन्त चिंतित रहते थे लेकिन बाद में अपने अथक प्रयत्नों के माध्यम से उन्होंने इस शारीरिक हीनता की पूर्ति कर ली। कभी-कभी हीन-भाव ग्रन्थि के कारण व्यक्ति अनेक मानसिक रोगों का भी शिकार हो जाता है।

ii. **आक्रामक व्यवहार -** बार-बार बाधाओं के कारण व्यक्ति आक्रामकता का प्रदर्शन करने लगता है। इसी आधार पर कुण्ठा आक्रामकता परिकल्पना प्रस्तावित की गई है। इसका तात्पर्य है कि कुण्ठा व्यक्ति को आक्रामकता की तरफ ले जाती है, लेकिन हमेशा ऐसा ही हो यह आवश्यक नहीं है। कुण्ठा के स्रोत के प्रति बच्चे प्रायः आक्रामकता दिखाते हैं, इसे प्रत्यक्ष आक्रामकता कहते हैं। कभी-कभी जब कुण्ठा का कारण ज्ञात नहीं होता या उसके प्रति आक्रामक व्यवहार करना संभव नहीं होता तो आक्रामकता का विस्थापन किया जाता है। जैसे कार्यालय के काम के बोझ से दबे व्यक्ति द्वारा घर आकर अपनी पत्नी व बच्चों को डाँटना। आक्रामक व्यवहार कर व्यक्ति कुछ समय के लिए राहत का अनुभव कर सकता है।

iii. **उदासीनता -** कुण्ठा की अवस्था में व्यक्ति उदासीनता प्रदर्शित कर सकता है। वह सम्बन्धित परिस्थिति से हट सकता है या वह असहाय होकर चुपचाप बैठ सकता है। एक ही तरह की कुण्ठा परिस्थिति में कुछ व्यक्ति आक्रामकता तो कुछ उदासीनता का प्रदर्शन कर सकते हैं। इससे यह भी संकेत मिलता है कि कुण्ठा के कारण होने वाले व्यवहार में व्यक्तिगत भिन्नताओं का भी प्रभाव पड़ता है।

iv. **मनोरचनाएँ -** कभी-कभी विफलताओं की प्रतिक्रिया मनोरचनाओं के रूप में होती है। विफलताओं से व्यक्ति स्थायी या अस्थायी रूप से पर्याप्तता की भावना का शिकार हो जाता है तथा मनोरचनाओं के माध्यम से उसे आंशिक रूप से सन्तोष मिलता है। कुण्ठित व्यक्ति प्रायः निम्न मनोरचनाओं का इस्तेमाल करता है-कल्पना-तरंग, क्षतिपूर्ति, तादात्मीकरण, युक्तिकरण, उदात्तीकरण इन मनोरचनाओं का विस्तृत अध्ययन आप समायोजन की युक्तियों के अन्तर्गत कर चुके हैं।

इस प्रकार अब तक आप कुण्ठा के अर्थ, कारकों एवं उसके समाधान के तरीकों से परिचित हो चुके हैं। आइए अब हम द्वन्द्व को समझने का प्रयत्न करते हैं।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

5. व्यक्ति की आवश्यकता तथा लक्ष्य के मार्ग में बाधा आ जाने से उत्पन्न असफलता की भावना को _____कहते हैं।
6. कुण्ठा के कारण व्यक्ति का व्यवहार _____हो सकता है। अतः व्यक्ति को प्राकृतिक, जैविक, सामाजिक एवं व्यक्तिगत बाधाओं को ध्यान में रखते हुए अपने लक्ष्य का निर्धारण करना चाहिए।
7. _____प्राय उन्हीं व्यक्तियों में विकसित होती है जो यह समझने लगते हैं कि उनमें व्यक्तिगत दोष विद्यमान है जिसके फलस्वरूप उन्हें लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो रही है।

13.5 द्वन्द का अर्थ

व्यक्ति की समायोजन की प्रक्रिया को प्रबल रूप से प्रभावित करने वाले कारकों में कुण्ठा के अतिरिक्त एक अन्य कारक द्वन्द है। कुण्ठा तथा द्वन्द में पारस्परिक रूप से गहन सम्बन्ध है, क्योंकि कुण्ठा से कभी-कभी व्यक्ति में द्वन्द की स्थिति उत्पन्न हो जाती है तथा कभी-कभी द्वन्द से कुण्ठा भी उत्पन्न हो जाती है। द्वन्द का शाब्दिक अर्थ होता है - एक साथ टकराना। द्वन्द की स्थिति उस समय उत्पन्न होती है जब पर्यावरण में आवश्यकता की पूर्ति के लिए एक से अधिक लक्ष्य उपलब्ध होते हैं, परन्तु चयन किसी एक का ही करना होता है। साथ ही द्वन्द की स्थिति उस समय भी उत्पन्न होती है जब एक ही लक्ष्य के प्रति व्यक्ति की अभिवृत्ति धनात्मक एवं नकारात्मक दोनों प्रकार की होती है।

द्वन्द की स्थिति व्यक्ति के लिए एक अति गम्भीर दुविधा की स्थिति होती है। इसमें व्यक्ति के लिए प्रायः कोई एक निर्णय लेना अति कठिन व कष्टकर होता है। व्यक्ति की उलझन यहाँ यह होती है कि उसके लिए यह फैसला करना कठिन हो जाता है कि वह अपनी दो इच्छाओं में से किसकी पूर्ति करे और किसको छोड़ दे। उदाहरण के लिए, युवक अपनी शिक्षा पूरी करने के लिए विवाह की इच्छा को स्थगित कर दे या विवाह के लिए अपनी शिक्षा अधूरी छोड़ दे ? यदि वह विवाह करता है तो अधूरी शिक्षा उसके जीवन में कुण्ठा उत्पन्न कर सकती है और यदि वह उच्च शिक्षा हेतु विदेश चला जाता है तो विवाह न हो पाने के कारण उसमें कुण्ठा उत्पन्न हो सकती है।

द्वन्द का स्वरूप कभी-कभी अत्यन्त गम्भीर एवं विषम हो जाता है। द्वन्द के स्वरूप को सही रूप से समझने के लिए उसके स्रोतों का अध्ययन आवश्यक होता है। आइए हम द्वन्द के स्रोतों को समझने का प्रयास करते हैं।

13.5.1 द्वन्द के स्रोत

द्वन्द के उत्पन्न होने के अनेक कारण हो सकते हैं। द्वन्द पर व्यक्तिगत कारकों, पारिवारिक बन्धनों, सामाजिक प्रतिबन्धों एवं सांस्कृतिक नियन्त्रणों आदि का भी प्रभाव पड़ता है। व्यक्ति में प्रायः द्वन्दों के मुख्य स्रोत निम्नलिखित होते हैं -

i. **आन्तरिक आवश्यकताओं तथा बाह्य प्रतिरोधों में टकराव से उत्पन्न द्वन्द -** व्यक्ति अपनी विभिन्न जैविक आवश्यकताओं की पूर्ति अपने बाह्य पर्यावरण के अन्तर्गत ही करता है, परन्तु बाह्य पर्यावरण के इस सम्बन्ध में अनेक प्रतिरोध भौतिक अवरोधों, सामाजिक परम्पराओं तथा सांस्कृतिक मूल्यों के रूप में होते हैं, और वे व्यक्ति के आवेगों को पूर्ण रूप में व्यक्त करने की अनुमति नहीं देते। उदाहरण के लिए, परिवार में जब एक बड़ा बालक किसी दूसरे छोटे बालक से खिलौना छीन लेता है, तब छोटे बालक को कभी-कभी एकदम क्रोध आ जाता है, और वह बड़े बालक से अपना खिलौना न मिलने पर उसको मारने लगता है, परन्तु तुरन्त ही माता-पिता व परिवार के अन्य सदस्य उसे ऐसा करने से मना करते हैं। इस प्रकार यहाँ बालक के लिए बाह्य प्रतिरोधों के कारण आन्तरिक आवेगों की पूर्ति न होने पर द्वन्द उत्पन्न होता है। बालक के लिए आरम्भिक जीवन में ऐसी अनेक परिस्थितियाँ आती हैं, परन्तु धीरे-धीरे समय बीतने के साथ उसका रूप समाजीकृत होता चला जाता है तथा फिर उसमें प्रायः ऐसा तीव्र द्वन्द उत्पन्न नहीं होता। ऐसे ही आधुनिक समाज में एक किशोर अपने काम-भाव सम्बन्धी द्वन्द का धीरे-धीरे समाधान करना सीख जाता है।

ii. **दो बाह्य आग्रहों के परस्पर विरोध से उत्पन्न द्वन्द -** समाज कभी-कभी व्यक्ति के सम्मुख परस्पर रूप से विरोधी भूमिकाएं प्रस्तुत करता है तथा उनके पालन के लिए भी आग्रह करता है। उदाहरण के लिए, समाज के नैतिक व धार्मिक उपदेश व्यक्ति को संसार के अन्य समस्त व्यक्तियों को एक ही ईश्वर की सन्तान होने के नाते उनके प्रति एक ओर समानता का व्यवहार करने की अपेक्षा रखते हैं तथा दूसरी ओर ठीक इसके विपरीत, उसे अपने राष्ट्र, धर्म, समाज व समूह को ही सर्वश्रेष्ठ मानने का भी आग्रह करते हैं। परस्पर रूप से ऐसी सामाजिक भूमिकाओं से व्यक्ति में द्वन्द उत्पन्न होना स्वाभाविक ही है। इस प्रकार समाज व्यक्ति में एक ओर सहयोग तथा दूसरी ओर विरोध के परस्पर विरोधी आग्रहों से द्वन्द की स्थितियाँ उत्पन्न करता है। आधुनिक तीव्र सामाजिक परिवर्तन के इस युग में ऐसे मूल्यों के द्वन्द्व अधिक दिखाई पड़ते हैं।

iii. **दो आन्तरिक आवश्यकताओं के परस्पर विरोध से उत्पन्न द्वन्द-** एक व्यक्ति कभी-कभी परस्पर रूप से विरोधी अपनी ही आन्तरिक आवश्यकताओं के द्वन्द के जाल में फंस जाता है। उदाहरणस्वरूप, जब एक विद्यार्थी परीक्षा में भी उच्च श्रेणी के अंक प्राप्त करना चाहता है व साथ ही साथ खेलकूद में भी अपनी प्रबल रूचि रखना चाहता है, तब ऐसी स्थिति में एक सामान्य विद्यार्थी में तीव्र द्वन्द उत्पन्न होता है। जब वह परीक्षा में उच्च अंक प्राप्त करने के लिए अधिक समय तक पढ़ना चाहता है, तब वह खेलकूद को अधिक समय नहीं दे सकता, और यदि वह अधिक समय अपने खेल में देता है, तब वह परीक्षा में उच्च अंक नहीं पा सकता।

iv. द्वन्द की प्रकृति को सही रूप से समझने के लिए उसके स्रोतों के साथ-साथ उसके प्रकारों को समझना भी आवश्यक होता है।

13.5.2 द्वन्द के प्रकार

द्वन्द का वर्गीकरण लक्ष्यों के स्वरूप के आधार पर किया जाता है। जीवन में उत्पन्न होने वाले द्वन्दों को चार वर्गों में बांटा जा सकता है -

i. **ग्राह्य-ग्राह्य द्वन्द्व -** यदि व्यक्ति के समक्ष दो धनात्मक लक्ष्य उपलब्ध हों परन्तु वह दोनों को प्राप्त करने की स्थिति में नहीं हो, तो उसे ग्राह्य-ग्राह्य द्वन्द की अनुभूति होती है। द्वन्द की इस अवस्था में व्यक्ति को एक लक्ष्य को चुनने पर दूसरे को त्यागना पड़ता है जबकि दोनों लक्ष्य उसकी पसन्द के होते हैं। वैसे इस तरह के द्वन्द का समाधान सरल होता है क्योंकि दोनों लक्ष्यों में आकर्षण होता है। जैसे, कोई छात्र अध्ययन करने के साथ-साथ अच्छा खिलाड़ी भी बनना चाहता है, परन्तु वह सोचता है कि खेलकूद से पढ़ाई में बाधा हो रही है, तो वह अध्ययन लक्ष्य को चुनकर सन्तोष कर सकता है।

ii. **परिहार-परिहार द्वन्द -** परिहार-परिहार द्वन्द की अनुभूति उस समय होती है जब व्यक्ति को दो निषेधात्मक लक्ष्यों में से किसी एक का चयन करना होता है, जबकि वह दोनों में से किसी को भी नहीं चाहता है। जैसे, एक बिगड़ा हुआ छात्र एक ओर तो पढ़ना नहीं चाहता और दूसरी ओर फेल होने की स्थिति में माता-पिता की डाँट से भी बचना चाहता है। ऐसे ही यदि व्यक्ति के सामने यह समस्या उत्पन्न हो जाए कि या तो वह ऐसी युवती से विवाह कर ले जिसे वह प्यार नहीं करता या फिर आजीवन अविवाहित ही रह जाए। ऐसी स्थिति को '' एक ओर खाई तो दूसरी ओर कुआं'' भी कहा जाता है। इस द्वन्द्व में व्यक्ति ऐसी स्थिति में होता है कि वह न तो इधर जा सकता है और न उधर। इस द्वन्द्व का समाधान अपेक्षाकृत कठिन होता है।

व्यक्ति दो परिस्थितियों के बीच डाँवाडोल होता रहता है। व्यक्ति की संवेगात्मकता इतनी तीव्र हो सकती है कि प्रतिरक्षा के लिए उसकी मानसिक ऊर्जा शारीरिक लक्षणों में परिवर्तित हो सकती है।

iii. **ग्राह्य-परिहार द्वन्द -** यदि व्यक्ति किसी लक्ष्य में आकर्षण एवं विकर्षण दोनों अनुभव करता है तो उसे ग्राह्य-परिहार द्वन्द्व की अनुभूति होती है। मान लीजिए, एक व्यक्ति बीमारी के इलाज के लिए डॉक्टर के पास जाना चाहता है परन्तु सुईं लगने का भय भी उसे परेशान कर रहा है। ऐसी स्थिति में उसे ग्राह्य-परिहार द्वन्द्व का अनुभव होगा।

iv. **दोहरा ग्राह्य-परिहार द्वन्द -** यह द्वन्द का अपेक्षाकृत अधिक जटिल रूप है। इसमें व्यक्ति के सामने दो लक्ष्य होते हैं और प्रत्येक लक्ष्य में धनात्मक व नकारात्मक दोनों शक्तियाँ होती हैं। व्यक्ति प्रत्येक लक्ष्य को प्राप्त भी करना चाहता है और उससे दूर भी रहना चाहता है। उदाहरण के लिए, किसी व्यक्ति को दो में से एक व्यवसाय को चुनना है। प्रथम का क्षेत्र समीप एवं कार्य करने की परिस्थितियाँ उत्तम हैं, परन्तु वेतन कम है जबकि दूसरे व्यवसाय का क्षेत्र दूर एवं कार्य करने स्थितियाँ प्रतिकूल हैं, परन्तु आय कम है। यह स्थिति उसे दोहरी समस्या में डाल देगी क्योंकि दोनों के साथ लाभ एवं हानि जुड़ी हुई हैं।

अब तक आप द्वन्द के अर्थ, स्रोतों तथा उनके प्रकारों के विषय में जान चुके हैं। आइए अब हम द्वन्द के समाधान की विधियों की चर्चा करते हैं।

13.5.3 द्वन्द का समाधान

द्वन्द मानसिक स्वास्थ्य के लिए काफी हानिकारक होता है। इसका समाधान यथाशीघ्र प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। इसमें निम्नांकित सुझाव उपयोगी हैं-

1. द्वन्द से उत्पन्न तनाव के प्रति धैर्य से काम लेना चाहिए तथा उसके समाधान की मानसिकता विकसित करनी चाहिए।
2. द्वन्द की दशा में समाधान के रचनात्मक उपायों पर ही ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।
3. उत्पन्न द्वन्द के बारे में कोई न कोई निर्णय समझ-बूझ कर यथा सम्भव शीघ्र ले लेना चाहिए।
4. द्वन्द के समाधान के लिए जो भी निर्णय लिया जाए, उसका दृढ़ता से पालन किया जाए, इसे लेकर पुनः द्वन्द में नहीं पड़ना चाहिए।
5. द्वन्द की दशा में अचेतन रूप से व्यक्ति की मनोरचनाएं भी सक्रिय होकर द्वन्द के समाधान में सहायता करती हैं। यहाँ यह समझना आवश्यक है कि मनोरचनाओं का उपयोग सीमा में

किया जाना चाहिए। विभिन्न मनोरचनाओं का पूर्ण विवरण समायोजन की युक्तियाँ शीर्षक के अन्तर्गत पहले किया जा चुका है।

13.6 सारांश

समायोजन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं तथा परिस्थितियों के साथ सामंजस्य स्थापित करने में सफल होता है। समायोजन के दो पक्ष होते हैं - सामाजिक पक्ष एवं व्यक्तिगत पक्ष। व्यक्ति अपने लक्ष्य के मार्ग में आने वाली परिस्थितियों से समायोजन स्थापित करने के लिए अनेक प्रकार की प्रतिक्रियाएं करता है जिन्हें समायोजन की युक्तियाँ कहते हैं। इसमें मुख्यतः दो प्रकार की युक्तियाँ होती हैं- प्रत्यक्ष बचाव एवं मनोरचनाएं। समायोजन की समस्या के दो प्रमुख कारक कुण्ठा और द्वन्द हैं। व्यक्ति की आवश्यकता तथा लक्ष्य के मार्ग में बाधा आने से उत्पन्न असफलता की भावना को कुण्ठा कहते हैं। व्यक्ति कुण्ठा का समाधान प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष प्रतिक्रियाओं के माध्यम से करता है। द्वन्द की स्थिति उस समय उत्पन्न होती है जब पर्यावरण में व्यक्ति की आवश्यकता की पूर्ति के लिए एक से अधिक लक्ष्य उपलब्ध होते हैं परन्तु चयन किसी एक का करना होता है।

13.7 शब्दावली

1. **समायोजन -** समायोजन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं तथा परिस्थितियों के साथ सामंजस्य स्थापित करने में सफल होता है।
2. **समायोजन की युक्तियाँ-** व्यक्ति अपने लक्ष्य के मार्ग में आने वाली परिस्थितियों से समायोजन स्थापित करने के लिए अनेक प्रकार की प्रतिक्रियाएं करता है जिन्हें समायोजन की युक्तियाँ कहते हैं।
3. **कुण्ठा -** व्यक्ति की आवश्यकता तथा लक्ष्य के मार्ग में बाधा आने से उत्पन्न असफलता की भावना को कुण्ठा कहते हैं।
4. **द्वन्द -** जब पर्यावरण में व्यक्ति की आवश्यकता की पूर्ति के लिए एक से अधिक लक्ष्य उपलब्ध होते हैं परन्तु चयन किसी एक का करना होता है, उसे द्वन्द कहते हैं।

13.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

1. सामाजिक पक्ष, व्यक्तिगत पक्ष
2. सामंजस्य

3. प्रक्षेपण
4. समायोजन
5. कुण्ठा
6. असमायोजित
7. हीनता की ग्रन्थि

13.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. कपिल0 एच0 के0 (1991), असामान्य मनोविज्ञान, हरप्रसाद भार्गव, आगरा।
2. मखीजा0 गो0 कृ0 (2003), असामान्य मनोविज्ञान, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा।
3. सिंह0 ला0 व तिवारी0 गो0 (2008), असामान्य मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

13.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. समायोजन का आशय स्पष्ट करते हुए समायोजन की युक्तियों का वर्णन कीजिए।
2. कुण्ठा को परिभाषित कीजिए एवं कुण्ठा के समाधान की विधियों का उल्लेख कीजिए।
3. द्वन्द के अर्थ, प्रकारों एवं समाधान विधियों का वर्णन कीजिए।

BLOCK- 6

विशेष बच्चो का मार्गदर्शन तथा उपकरण एवं तकनीक (Special Children Guidance and Tools and Techniques)

इकाई -14 विशेष बालक: अर्थ, परिभाषाएं, समस्याएं, प्रकृति, आवश्यकताएँ, विशेष आवश्यकता वाले बच्चो की सहायता में शिक्षक की भूमिका तथा प्रतिभाशाली और रचनात्मक शिक्षार्थियों का मार्गदर्शन (Special Children: Meaning, definitions, Problems, Nature, Needs, Role of teacher in helping Children with special needs and Guidance of the Gifted and Creative Learners)

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 विशेष बालक: अर्थ

14.4 विशेष बालक की परिभाषाएँ

14.5 विशेष बालकों की समस्याएं

14.6 विशेष बालकों की प्रकृति

14.7 विशेष बालकों की आवश्यकताएँ

अपनी उन्नति जानिए

14.8 विशेष आवश्यकता वाले बच्चो की सहायता में शिक्षक की भूमिका

14.9 प्रतिभाशाली और रचनात्मक शिक्षार्थियों का मार्गदर्शन

अपनी उन्नति जानिए

14.10 सारांश

14.11 शब्दावली

14.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

14.13 संदर्भ ग्रंथ सूची

14.14 निबंधात्मक प्रश्न

14.1 प्रस्तावना:

विशेष आवश्यकताओं वाले बालक 'विशिष्ट बालक' भी कहे जाते हैं। सामान्य बालकों (नॉर्मल चिल्ड्रन) से विशिष्ट बालक की प्रकृति में भिन्नता पाई जाती है। सामान्य बालक औसत शरीर वाले एवं स्वस्थ अंगों वाले होते हैं तथा सामान्य शारीरिक श्रम वाले कार्यों को करने में किसी प्रकार की बाधा का अनुभव नहीं करते । इनका बौद्धिक स्तर प्रायः सामान्य बुद्धिलब्धि अर्थात् 90 से 110 की सीमा के मध्य होता है। इनकी अधिगम (सीखने) की गति भी औसत होती है। ये संवेगात्मक रूप से संतुलित होते हैं जबकि विशिष्ट बालक औसत बालकों से भिन्न होते हैं। या तो वे 120 बुद्धिलब्धि या उससे अधिक वाले प्रतिभाशाली बालक होते हैं अथवा शारीरिक, मानसिक दृष्टि से बाधित बालक होते हैं ।

प्रस्तुत इकाई में आप विशेष बालक का अर्थ, परिभाषाएं, समस्याएं, प्रकृति, आवश्यकताएँ, विशेष आवश्यकता वाले बच्चो की सहायता में शिक्षक की भूमिका, प्रतिभाशाली और रचनात्मक शिक्षार्थियों का मार्गदर्शन का विस्तारपूर्वक अध्ययन करेंगें।

14.2 उद्देश्य:

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- विशेष बालक का अर्थ बता सकेंगे एवं परिभाषित कर सकेंगे।
- विशेष बालकों की प्रकृति का वर्णन कर सकेंगे।
- विशेष बालकों की समस्याओं की व्याख्या कर सकेंगे।
- विशेष बालकों की आवश्यकताओं की व्याख्या कर सकेंगे।
- विशेष बालकों की सहायता में शिक्षक की भूमिका का वर्णन कर सकेंगे।
- प्रतिभाशाली और रचनात्मक शिक्षार्थियों का मार्गदर्शन का महत्व समझ सकेंगे।

14.3 विशेष बालक :

प्रत्येक समाज में कुछ ऐसे बालक होते हैं, जो सामान्य बालकों की अपेक्षा श्रेष्ठ या हीन होते हैं। आनुवंशिकता तथा वातावरण में भिन्नता के कारण इन बालकों के शारीरिक, मानसिक और अन्य गुणों में भिन्नता पाई जाती है। समूह के अधिकांश बालकों के गुण समूह प्रतिमान के अनुरूप होते हैं, ऐसे बालकों को सामान्य बालक कहते हैं तथा जिन बालकों में समूह प्रतिमानों की अपेक्षा कम या अधिक गुण पाये जाते हैं उन्हें विशेष बालक कहते हैं। विशेष बालकों में अपनी विलक्षणताओं या विशेषताओं के कारण समायोजन करने में अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं। जिससे इनके पालन–पोषण और शिक्षा में विशेष ध्यान की आवश्यकता होती है।मनौवैज्ञानिकों के अनुसार विशिष्ट बालकों में सोचने, समझने, सीखने, समायोजन करने आदि की योग्यतायें सामान्य बालकों से अलग पाई जाती हैं। विशिष्ट बालकों में किसी कार्य को सामान्य बालकों की अपेक्षा ज्यादा तेजी से या बहुत देर से करते हैं। विशिष्ट बालकों के उनकी विशिष्टता के अनुरूप निम्नलिखित समूहों में वर्गीकृत किया जाता है। जैसे– बौद्धिक रूप से विशिष्ट बालक, शारीरिक दृष्टि से विशिष्ट बालक, सामाजिक दृष्टि से विशिष्ट बालक आदि। भौतिक, सामाजिक, बौद्धिक, शैक्षिक आदि परिस्थतियों में सामान्य बालकों से अलग होने के कारण विशिष्ट बालकों को विशिष्ट प्रकार की शैक्षिक, मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक व्यवस्थाओं की आवश्यकता होती है।

विशेष आवश्यकताओं वाले बालकों की प्रकृति विभिन्न मनोवैज्ञानिकों, शिक्षाविदों द्वारा उनकी परिभाषाओं से स्पष्ट होती है। क्रो एवं क्रो के अनुसार, "विशिष्ट प्रकार या विशेष पद किसी गुण या उन गुणों से युक्त व्यक्ति पर लागू होता है जिसके कारण वह व्यक्ति साथियों का ध्यान अपनी ओर विशिष्ट रूप से आकृष्ट करता है तथा इससे उसके व्यवहार की अनुक्रियाएं भी प्रभावित होती हैं।" एक विशिष्ट बालक वह है जो कि शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक एवं सामाजिक विशेषताओं में किसी सामान्य बालक से उस सीमा तक विचलित होता है जब वह अपनी क्षमताओं के अधिकतम विकास हेतु सहायता, निर्देशक, विद्यालय कार्यक्रमों में परिमार्जन तथा विशिष्ट शैक्षिक सेवाओं की आवश्यकता रखता है। विशिष्ट बालकों की श्रेणी में वे बच्चे आते हैं जिन्हें सीखने में कठिनाई का अनुभव होता है या जिनका मानसिक या शैक्षिक निष्पादन या सृजन अत्यन्त उच्च कोटि का होता है या जिनको व्यावहारिक, सांवेगिक एवं सामाजिक समस्याएं घेर लेती है या वे विभिन्न शारीरिक

अपंगताओं या निर्बलताओं से पीड़ित रहते हैं जिसके कारण ही उनके लिए अलग से विशिष्ट प्रकार की शिक्षा व्यवस्था करनी होती है।

अत: एक ऐसा बालक जो कि शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, शैक्षिक, सांवेगिक एवं व्यावहारिक विशेषताओं के कारण किसी सामान्य या औसत बालक से उस सीमा तक विशिष्ट रूप से विचलित तथा भिन्न होता है जहाँ कि अपनी योग्यताओं, क्षमताओं एवं शक्तियों को समुचित रूप से विकसित करने के लिए परम्परागत शिक्षण विधियों में परिमार्जन या विशिष्ट प्रकार के कार्यक्रमों की आवश्यकता होती है उनको विशेष या विशिष्ट बालक कहा जाता है। इस श्रेणी में शारीरिक रूप से अक्षम, प्रतिभाशाली, सृजनात्मक, मंद बुद्धि आदि प्रकार के बालक सम्मिलित है।

14.4 विशिष्ट बालक की परिभाषाएँ

विभिन्न विद्वानों ने विशिष्ट बालकों की परिभाषाएँ दी है जिनमें से कुछ परिभाषाएँ यहाँ दी जा रही हैं –

डन के अनुसार- "विशिष्ट बालक वह है, जो बौद्धिक, शारीरिक सामाजिक अथवा मनोवैज्ञानिक विशेषताओं में इतना भिन्न है कि बहुसंख्यक बालकों के विकास के लिए बनाई गई कार्य प्रणाली उनको सर्वांगीण विकास के अवसर उपलब्ध नहीं करा पाती है, और ऐसे बालकों के लिए उनकी योग्यताओं के अनुरूप उपलब्धि प्राप्त कर सकने के लिये वे विशेष शिक्षण अथवा कुछ स्थितियों में विशेष सहायक सेवायें अथवा दोनों की आवश्यकता होती है।"

हेक के अनुसार- "विशिष्ट बालक वह है, जो किसी एक अथवा कई गुणों की दृष्टि से सामान्य बालक से पर्याप्त मात्रा में भिन्न होता है।"

कुक शैंक के अनुसार- "विशिष्ट बालक वह है जो बौद्धिक, शारीरिक , सामाजिक अथवा संवेगात्मक दृष्टि से सामान्य समझी जाने वाली बुद्धि तथा विकास से इतना भिन्न है कि वह नियमित विद्यालय कार्यक्रम से पूर्ण लाभ नहीं उठा सकता है तथा विशिष्ट कक्षा अथवा पूरक शिक्षण व सेवा चाहता है।"

क्रिक के अनुसार – "विशिष्ट बालक वह है जो सामान्य अथवा औसत बालक से मानसिक, शारीरिक तथा सामाजिक विशेषताओं से इतना अधिक भिन्न है कि वह विद्यालय व्यवस्थाओं में संशोधन अथवा विशेष सेवायें चाहता है जिससे वह अपनी अधिकतम क्षमता का विकास कर सके।"

14.5 विशिष्ट बालकों की समस्याएं (Problems of Special Children):-

विशेष ज़रूरतें तब सामने आती हैं जब बच्चा ऐसी स्थितियों का सामना कर रहा होता है जिसमें विकास संबंधी देरी, मनोरोग संबंधी स्थितियां, चिकित्सीय स्थितियां और साथ ही जन्मजात स्थितियां शामिल होती हैं, जहां बच्चे को अपनी क्षमता को उजागर करने के लिए अतिरिक्त सहायता की आवश्यकता होती है। विशेष आवश्यकता वाले बच्चे का पालन-पोषण करना एक कठिन कार्य है। लेकिन, स्कूल और सामुदायिक सहयोग से शहरी क्षेत्रों में इसे बेहतर तरीके से प्रबंधित किया जा सकता है। जब आप ग्रामीण या दूरदराज के इलाकों में होते हैं तो यह कार्य वास्तव में कठिन हो जाता है और यह माता-पिता या बच्चों के लिए आसान नहीं होता है। ऐसी और भी कई समस्याएं हैं जो ग्रामीण क्षेत्रों में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के जीवन की गुणवत्ता और विकास में बाधा डालती हैं। यहां कुछ मुख्य चुनौतियों पर एक नजर डाली गई है जिनका ग्रामीण परिवेश में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को सामना करना पड़ता है। इन समस्याओं का वर्णन निम्नलिखित है:-

विशेष शिक्षा की आवश्यकता

विशेष बच्चों के लिए विशेष शिक्षा तथा विशेष विद्यालयों की आवश्यकता होती है जिसमें विशेष शिक्षा में प्रशिक्षित शिक्षकों की आवश्यकता होती है। किसी कक्षा में विभिन्न तरह के बच्चे होते हैं जिनकी अपनी-अपनी आवश्यकताएँ हो सकती हैं। जैसे- कुछ बच्चे अक्षरों को उल्टा लिखते हैं, कुछ की श्रवण शक्ति कम होती हैं, कुछ मंद बुद्धि वाले होते हैं। सभी बच्चे सामान्य गति से नहीं सीख पाते हैं। कुछ बच्चों का उच्चारण स्पष्ट नहीं होता है जिसके कारण इन बच्चों का विकास एवं दैनिक कार्यशीलता प्रभावित होती है।

इन्हीं भिन्नताओं के कारण इन बच्चों के पालन-पोषण में कुछ भिन्न या विशिष्ट तरीके अपनाने की आवश्यकता होती है। उनकी शिक्षा के लिए विशेष योजना बनानी पड़ती है, यह सुनिश्चित करना पड़ता है कि उनके अनुकूलतम विकास को बढ़ावा मिले। अभिभावकों और शिक्षकों को इन बच्चों को बोलना सिखाने, चलने-फिरने, मित्र बनाने और वे कौशल और संकल्पनाएँ, जो सामान्य बच्चे

विकास के दौरान सहज रूप से प्राप्त कर लेते हैं, उन्हें अर्जित करने और सिखाने के लिए विशेष प्रयास करने होते हैं। इन बच्चों की कुछ ऐसी आवश्यकताएँ हैं जो अधिकांश बच्चों की जरूरतों से भिन्न होती हैं, अर्थात् उनकी कुछ विशेष जरूरतें होती हैं।

व्यक्तिगत ध्यान की कमी - यह विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के सामने आने वाली सबसे आम चुनौतियों में से एक है। जाहिर है, बड़े सेटअप वाले स्कूलों में विशेष शिक्षा सहायता सहित अधिक संसाधन होते हैं जो शिक्षकों और विशेष शिक्षकों को विशेष बच्चों के साथ काम करने में मदद करते हैं। बुनियादी ढांचे और संसाधनों की कमी वाले ग्रामीण परिवेश में काम करते समय, प्रत्येक विशेष बच्चे के साथ व्यक्तिगत आधार पर काम करना संभव नहीं है।

प्रशिक्षित शिक्षकों तथा स्टाफ की कमी - चूंकि ग्रामीण स्कूलों की व्यवस्था दूरदराज के इलाकों में है, इसलिए पेशेवर स्टाफ लाना आसान नहीं है। ऐसी जगहों पर रहना शायद ही कोई पसंदीदा विकल्प हो। शहरों में दिन या सप्ताह के अंत में पेशेवरों का अपना सामाजिक जीवन होता है, जहां वे दोस्तों के साथ घूमते हैं, साथ में फिल्में देखते हैं, तरोताजा महसूस करते हैं और अगले दिन के लिए तैयार होते हैं। लेकिन, ग्रामीण इलाकों में ऐसा नहीं है, जिससे शिक्षक और कर्मचारी अलग-थलग या अकेला महसूस करते हैं। इसलिए, कर्मचारियों की कमी है और मौजूदा कर्मचारियों को कई स्थानों पर काम करना पड़ता है, जिससे यह उनके लिए भी थकाऊ हो जाता है।

शिक्षकों का प्रशिक्षण- एक समय में कई अक्षमताओं से निपटने के लिए एक विशेष शिक्षा की आवश्यकता होती है। दूरस्थ स्थानों पर, इससे निपटना कठिन हो जाता है और इसलिए, इस कार्य को ठीक से प्रबंधित करने के लिए शिक्षकों को प्रशिक्षित करने के लिए व्यक्तिगत प्रशिक्षण कार्यक्रम लागू करने की आवश्यकता है।

माता-पिता का समर्थन- कुछ माता-पिता, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, विशेष आवश्यकताओं के बारे में अनभिज्ञ होते हैं और कभी-कभी उन्हें आवश्यक सहायता प्रदान करने में भी रुचि नहीं रखते हैं। दूसरी ओर, अत्यधिक देखभाल करने वाले माता-पिता भी शिक्षकों और शिक्षकों के लिए इन बच्चों के आसपास काम करना मुश्किल बना सकते हैं। लेकिन, पर्याप्त माता-पिता का समर्थन विशेष जरूरतों वाले बच्चे के जीवन को बेहतर बनाने में मदद कर सकता है और बच्चों को पूरी तरह से खिलने में मदद कर सकता है।

आकर्षक वेतन का अभाव - जबकि शिक्षकों को कई अच्छे स्कूलों में अच्छा वेतन दिए जाते हैं, विशेष शिक्षकों को तुलनात्मक रूप से समान वेतन नहीं दिया जाता है, जबकि उनका काम बहुत कठिन है क्योंकि वे पहले से ही उन बच्चों के साथ काम कर रहे हैं जिन्हें सीखने में अतिरिक्त सहायता

की आवश्यकता है। यह भी एक ऐसा कारक है जिसके परिणामस्वरूप विशेष शिक्षक नौकरियों की कमी हो रही है।

वैयक्तिक विभिन्नता- विशिष्ट बालक प्रायः अंतर्मुखी होते हैं। इस प्रकार के बालक प्रायः शारिरिक रूप से अस्वस्थ या दिव्यांग होते हैं। विशेष मानसिक बीमारियों से जल्दी ग्रसित हो जाते हैं तथा ये समाज एवं विद्यालय के साथ सही से समायोजन नहीं कर पाते हैं। इनका संवेगों पर प्रायः नियंत्रण नहीं होता है, जिसके कारण उनमें प्रेम, घृणा, आनंद, क्रोध का सही ढंग से प्रदर्शन नहीं कर पाते हैं। इसलिए विशेष बालकों की वैयक्तिक विभिन्नता के आधार पर शिक्षण की व्यवस्था सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

14.6 विशिष्ट बालकों की प्रकृति

विशेष आवश्यकताओं वाले बालक 'विशिष्ट या विशेष बालक' भी कहा जाता हैं। सामान्य बालकों से विशेष बालकों की प्रकृति में भिन्नता पाई जाती है। सामान्य बालक औसत शरीर वाले एवं स्वस्थ अंगों वाले होते हैं तथा सामान्य शारीरिक श्रम वाले कार्यों को करने में किसी प्रकार की बाधा का अनुभव नहीं करते। इनका बौद्धिक स्तर प्रायः सामान्य बुद्धिलब्धि भी कम होती है। इनकी अधिगम (सीखने) की गति भी औसत होती है। ये संवेगात्मक रूप से संतुलित होते हैं जबकि विशिष्ट बालक औसत बालकों से भिन्न होते हैं। या तो वे अधिक वाले प्रतिभाशाली बालक होते हैं अथवा शारीरिक, मानसिक दृष्टि से बाधित बालक होते हैं।

अत: एक ऐसा बालक जो कि शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, शैक्षिक, सांवेगिक एवं व्यावहारिक विशेषताओं के कारण किसी सामान्य या औसत बालक से उस सीमा तक विशिष्ट रूप से विचलित तथा भिन्न होता है जहाँ कि अपनी योग्यताओं, क्षमताओं एवं शक्तियों को समुचित रूप से विकसित करने के लिए परम्परागत शिक्षण विधियों में परिमार्जन या विशिष्ट प्रकार के कार्यक्रमों की आवश्यकता होती है, विशिष्ट बालक कहा जाता है। इस श्रेणी में शारीरिक रूप से अक्षम, प्रतिभाशाली, सृजनात्मक, मंद बुद्धि आदि प्रकार के बालक सम्मिलित है। इन विभिन्न प्रकार के विशिष्ट बालकों की प्रकृति भी भिन्न होती है।

विशिष्ट बालकों के विभिन्न प्रकारों में उनकी प्रकृति तथा विशेषताओं का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

(1) प्रतिभाशाली बालक– जिन बालकों की बुद्धिलब्धि 120 से अधिक पाई जाती है वे

प्रतिभाशाली बालक के अन्तर्गत आते हैं। प्रतिभाशाली बालक दो प्रकार के होते हैं। एक तो वे बालक जिनकी बुद्धिलब्धि 130 से अधिक होती है और दूसरा वे बालक जो कला, संगीत, गणित अभिरूप आदि में प्रतिभाशाली सृजनशील होते हैं । टर्मन तथा ओडन की यह मान्यता है कि प्रतिभाशाली बालक शारीरिक गठन, सामाजिक समायोजन, व्यक्तित्व के लक्षणों, विद्यालय, उपलब्धि, खेल और रुचियों की बहुलता में सामान्य बालकों से श्रेष्ठ होते हैं।"

(2) मानसिक मंदबुद्धि बालक– सामान्यतः मानसिक मंदता के संबंध में यह धारणा है कि मानसिक रूप से मंदबुद्धि बालकों की मानसिक योग्यताएं कम होती हैं। ऐसे बालकों की बुद्धिलब्धि भी साधारण बालकों की बुद्धिलब्धि से कम होती है। स्कीनर के अनुसार मानसिक मंदता वाले बालकों के लिए अनेक पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग किया जाता है जैसे– अल्प बुद्धि, विकल बुद्धि, मूढ बालक, बुद्धि शिथिलता वाले बालक। सन 1913 तक मंदबुद्धि और पिछडे हुए बालकों में कोई भी अंतर नहीं किया जाता था। इसके बाद जैसे– जैसे मनोविज्ञान का विकास हुआ है वैसे– वैसे इन दोनों में विभिन्नता की जाने लगी। मानसिक मंदता औसत से निम्न कार्यक्षमता न उल्लेख करती है और इस कारण ऐसे बालकों में निम्नलिखित में से एक से अधिक अनुकूल व्यवहार की कमी रहती है–

(1) परिपक्वता,

(2) अधिगम,

(3) सामाजिक समायोजन।

क्रो एवं क्रो मानते हैं कि जिन बालकों की बुद्धिलब्धि 70 से कम होती है, वे मंदबुद्धि बालक हैं । प्रत्येक कक्षा के छात्रों को एक वर्ष में शिक्षा का एक निश्चित पाठ्यक्रम पूरा करना पड़ता है पर जो बालक इस पाठ्यक्रम को पूरा नहीं कर पाते मंदबुद्धि बालक कहलाते हैं। मंदबुद्धि बालक कक्षा में पृथक रहना चाहते हैं और इनकी प्रकृति असामाजिक व असमायोजित रहती है। इनमें हताशा व निराशा भी रहती है। इनकी मानसिक आयु कम होती है अर्थात ये अपनी कक्षा का कार्य ठीक प्रकार से करने में असमर्थ कहते हैं। इनकी रुचियाँ भी भिन्न होती हैं। इनमें ज्ञानेन्द्रिय संबंधी दोष पाए जाते हैं।

(3) अधिगम बाधित बालक– सीखने संबंधी कमी या असमर्थता वाले बालक विशेष आवश्यकता वाले इस वर्ग में आते हैं। ये बालक मानसिक रूप से मंद नहीं होते परन्तु सामान्य बालकों की तुलना में शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए होते हैं। कक्षा में सामान्य बालकों को जो कुछ पढ़ाया जाता है उसे ग्रहण

करने में ये बालक असफल रहते हैं। इस कारण से वे दुःखी व तनावग्रस्त रहते हैं। उनके मन में ऐसी धारणा बन जाती है कि जीवन में सफल नहीं हो सकते। प्रायः अधिगम बाधित बालक पढ़ने, समझने, गणित करने, तर्क–वितर्क करने में बहुत कम उपलब्धि का प्रदर्शन करते हैं। अधिगम असमर्थता एक ऐसा मूल शब्द है जो ऐसे समूह की ओर संकेत करता है जो श्रवण, वाचन, अध्ययन, लेखन, तर्क और गणितीय जैसी योग्यताओं में सार्थक रूप से कठिनाई का अनुभव करते हैं। ये कठिनाइयाँ किसी भी व्यक्ति की आंतरिक होती हैं जो केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र की विकृत क्रिया के परिणामस्वरूप घटित होती हैं।

(4) गति संबंधी बाधा से ग्रसित बालक– चलने–फिरने, उठने, बैठने में न्यूनता या कमी रखने वाले बालक इस श्रेणी के अंतर्गत आने वाले विशेष आवश्यकता वाले बालकों में आते हैं। इसमें पूर्णत: असमर्थ तथा कम मात्रा में असमर्थता से युक्त दो प्रकार के बालक आजन्म से, दुर्घटना से या बीमारी (लकवा) पोलियों से ग्रसित होकर ये बालक चलने फिरने में पूर्ण असमर्थ या बिना सहारे के चलने–फिरने में असमर्थ रहते हैं। वैशाखी, ट्रायसिकल, व्हील चेयर के उपयोग से अनेक अपंग बालक आजा सकने में समर्थ होते हैं। वह बालक जिसका शारीरिक दोष उसे साधारण क्रियाओं में भाग लेने से रोकता है या सीमित रखता है दिव्यांगता से युक्त होता है उसे विशेष बालक कहा जाता है।

(6) श्रवण क्षति युक्त बालक– बधिर या कम (ऊंचा सुनने वाले) सुनने वाले बालक इस वर्ग में आते हैं। कुछ बालक जन्म से बधिर होते हैं तथा कुछ बीमारी, दुर्घटना आदि के। सुनने में अक्षमता के कारण ऐसे बालकों की बोलने की शक्ति का भी विकास तथा भाषा का विकास नहीं हो पाता है। कक्षा में ऐसे बालकों की शैक्षिक उपलब्धि कम होती है । इस प्रकार के बालक पाठ्यसहगामी क्रियाओं में भाग नहीं ले पाते क्योंकि उनका श्रवण दोष बाधा उत्पन्न करता है। अल्प श्रवण बाधित या ऊंचा सुनने वाले बालकों को प्रायः 3 श्रेणियों में बाँटा जाता है–

(1) साधारण श्रवण बाधित जिनकी श्रवण क्षमता का स्तर 65 डेसीबल होता है ।

(2) मध्यम श्रवण बाधित बालक जो प्रायः 65 डेसीबल स्तर पर भी नहीं सुन पाते तथा,

(3) गंभीर श्रवण बाधित बालक जिनमें 70– 90 डेसीबल तक की श्रवणबाधिता होती है।

(7) लाभहीन वंचित वर्ग के बालक– सामाजिक एवं आर्थिक रूप से लाभहीन वंचित बालकों में ये बालक आते हैं। इनमें निरक्षर परिवार से आने वाले बालक, अनुसूचित जनजाति (आदिवासी)

बालक, अनुसूचित जाति के बालक, अल्पसंख्यक बालक-बालिकाएं आदि होते है। इसके साथ-साथ घुमंतु परिवारों के बालक जैसे ईट भट्टा श्रमिक, लोहा पिट्टा, बँटाईदार, झुग्गी झोपड़ी में रहने वाले अस्थाई निवास करने वाले परिवार के बालक आदि भी इसी श्रेणी में आते है। निर्धनता, निरक्षरता, मुख्यधारा से दूर पहाडों जंगलों में निवास आदि ऐसे बालक लाभहीन या वंचित कहलाते हैं । वंचित होना निम्नस्तरीय जीवन दशा या अलगाव की ओर संकेत करता है जो कि कुछ व्यक्तियों को उनके समाज की सांस्कृतिक उपलब्धियों में भाग लेने से रोक देता है।

14.7 विशिष्ट बालकों की आवश्यकताएँ

विशिष्ट बालक की शिक्षण में उनकी आवश्यकताएं भी विशिष्ट होती हैं। इन्हीं आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर उनकी व्यक्तिगत विभिन्नता को देखते हुए शिक्षण की व्यवस्था सुनिश्चित किया जाना आवश्यक होता है। जिससे वह अपनी रुचि, रुझान वह योग्यता के अनुसार सीखने में सक्षम हो सके। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा में शिक्षण-प्रशिक्षण में बच्चों की आवश्यकताओं को समझना, उनकी अपंगताओं से संबंधित प्रचलित मिथ्या धारणाओं और सामाजिक कलंकों को दूर करने और उनकी उनके प्रति सकारात्मक सोच विकसित करने में सहायक होता है।

विशिष्ट बालक की विभिन्न आवश्यकताएं होती हैं। इन आवश्यकताओं को शिक्षक जब तक शिक्षण में सम्मिलित नहीं करेगा तब तक गुणवत्तापूर्ण शिक्षण संपन्न करना संभव नहीं होता है। विशिष्ट बालक की आवश्यकताओं का वर्णन निम्न बिंदुओं के आधार पर किया जा सकता है:-

1- संवेदनशीलता का विकास करना- यदि किसी अधिक वजन वाले व्यक्ति को दूसरे द्वारा सदैव मोटा कहकर बुलाया जाए तो यह कथन असंवेदनशीलता की श्रेणी में आता है क्योंकि उसे उसे व्यक्ति की भावनाओं को ठेस पहुंचती है। यह उसे अनुचित तरीके से बुलाना है। विशेष शिक्षकों से दिव्यांग बच्चों के प्रति संवेदनशीलता विकसित करने की उम्मीद की जाती है। वह ऐसे शब्दों और भाषा का प्रयोग करके यह काम कर सकते हैं। जैसे सबसे पहले बच्चों के प्रति सम्मान प्रदर्शित करें और उनके साथ इस धारणा के साथ काम करें कि वह बच्चे भी अन्य सभी बच्चों की भांति सीख सकते हैं और विकास कर सकते हैं उनमें तथा उनके अभिभावकों में उम्मीद जगा सके। दिव्यांग बच्चों के प्रति सम्मान अथवा महज दया और सहानुभूति का भाव उसके प्रति संवेदनशीलता और सम्मान की कमी को दर्शाते हैं।

2- दिव्यांगता के बारे में जानकारी- विशेष शिक्षक विशेष शिक्षा आवश्यकता वाले बच्चों के साथ काम पर ध्यान देते हैं। अतः उन्हें विभिन्न प्रकार की दिव्यांगताओं की प्रकृति इन अक्षमताओं वाले बच्चों की विकासात्मक विशेषताओं और उससे संबंधित ऐसी कठिनाइयां अथवा विसंगतियों के बारे में पूरी जानकारी होनी चाहिए जिस पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

3- अंतरवैयक्तिक कौशल- जो व्यक्ति बातचीत करने में अच्छे होते हैं वह विशेष शिक्षक के रूप में प्रभावी हो सकते हैं तथापि प्रशिक्षण से संप्रेषण, बातचीत के कौशल विकसित कर सकते हैं क्योंकि इनकी बच्चों के साथ व्यक्तिगत रूप से अथवा समूह में काम करने के लिए आवश्यकता होती है। अक्सर बच्चों के माता-पिता और परिवार के अन्य सदस्यों को मार्गदर्शन और परामर्श सेवा की आवश्यकता होती है जिसके लिए अंतर वैयक्तिक कौशल काफी उपयोगी होते हैं।

4- शिक्षण कौशल- विशेष शिक्षक के लिए विद्यार्थियों को शिक्षण की कला और विज्ञान को जानने की आवश्यकता होती है। जिसे शिक्षा शास्त्र कहते हैं। इसका अर्थ है कि किसी विशेष विषय जैसे विज्ञान, समाज विज्ञान अथवा गणित पढ़ने में सक्षम होना,शिक्षक को संकल्पनाओं और पाठों को हिस्सों में बाँट कर सरल करना आना चाहिए। जिससे विद्यार्थी सिद्धांतों और उनके अर्थों को पूरी तरह समझ सकें।

5- शिक्षण विधियाँ- विशिष्ट कक्षाएँ मुख्यतः उन बालकों के लिए लगायी जाती हैं, जो कि शारीरिक रूप से बाधित होते हैं। इन्हीं की शिक्षा हेतु ही विशिष्ट विधियों की आवश्यकता होती है। विशिष्ट बालकों को शिक्षा देने हेतु शिक्षाविद् ऐसी विधियाँ अपनाते हैं, जो कि इन बालकों के लिए उपयुक्त होती हैं। परन्तु कई बाद शिक्षाविदों को कई समस्याओं का सामना भी करना पड़ता है। क्योंकि कई बार ऐसा हो जाता है कि छात्रों को शिक्षकों की सिखाने की विधि समझ नहीं आती है। तब ऐसी अवस्था में विशिष्ट कक्षाओं की आवश्यकता इन बालकों को समझाने के लिए अवश्य पड़ती है। यह विशिष्ट कक्षाएँ इन्हें अनुदेशन में सहायता प्रदान करती हैं।

6- वैयक्तिक विभिन्नता के आधार पर शिक्षण- विशिष्ट कक्षाओं में बुद्धिमान छात्रों को भी आगे बढ़ने के अवसर मिलते हैं क्योंकि ऐसे छात्र सामान्य कक्षा में तेजी से आगे बढ़ते हैं। जिसकी वजह से अन्य छात्रों में नकारात्मक प्रवृत्ति आ सकती है। अतः इन बुद्धिमान छात्रों को शिक्षण हेतु अलग कक्षा में भेजा जाना ही उचित रहता है, क्योंकि यह बालक जल्दी अपना कक्षा कार्य पूरा कर लेते हैं। तत्पश्चात् यह कक्षा में अनुशासनहीनता या उद्दण्डता करने लगते हैं, क्योंकि सामान्य बालकों का पाठ्यक्रम इतना सरल होता है कि प्रतिभाशाली बालक इन कक्षाओं में रुचि नहीं लेते हैं। अतः प्रतिभाशाली बालकों हेतु अलग से विशिष्ट कक्षाओं की स्थापना करनी आवश्यक हो जाती है।

7- शैक्षिक वातावरण- विशिष्ट शिक्षा के लिए एक ऐसे स्थान का चुनाव किया जाता है, जहाँ पर उनके शिक्षण के लिए अनुकूल वातावरण हो। विभिन्न शाखाओं के विशेषज्ञों के द्वारा बालकों को पूर्ण रूप से सामाजिक वातावरण में विभिन्न श्रेणियों में मूल्यांकन निर्धारित किया जाता है। भौतिक परीक्षण तथा मूल्य निर्धारण भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में विशेषज्ञों; जैसे- मानसिक, मनोवैज्ञानिक श्रवण, मस्तिष्क व शिक्षाविदों आदि द्वारा प्रतिभाशाली बालकों के चयनित स्थानापन्न हेतु अति आवश्यक होता है।

8- उपचारात्मक शिक्षण- विशिष्ट बालकों को शिक्षा के अतिरिक्त अन्य सेवाओं की भी आवश्यकता होती है; जैसे- अपंग बालकों को नियमित शारीरिक परीक्षण की आवश्यकता होती है। समय-समय पर अन्धे बालकों व शारीरिक रूप से अपंग बालकों को भी देखरेख की आवश्यकता होती है। अतः इनके लिए विशिष्ट कक्षाओं में चिकित्सक को भी स्थान दिया जाता है, ताकि वह समस्या के समय छात्रों को सहायता प्रदान कर सकें। कुछ विशिष्ट बालकों को व्यावसायिक, शारीरिक, मानसिक व मनोवैज्ञानिक आदि सेवाएँ अति आवश्यक हैं।

निष्कर्ष- विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में शिक्षण प्रविधियाँ गुणवत्तापरक शिक्षण में आवश्यक कड़ी के रूप में प्रयुक्त होती है। अध्यापक अपनी शिक्षण विधि के आधार पर शिक्षण का एक व्यापक स्वरूप निश्चित कर लेता है किन्तु शिक्षण उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उसे अनेक शिक्षण प्रविधियों को अविलम्ब ग्रहण करना पड़ता है। वास्तव में शिक्षण प्रविधियाँ ऐसे साधन हैं जिनका प्रयोग शिक्षण करते समय छात्रों को पाठ में रुचि लेने, पाठ–सामग्री को समझने तथा उसे छात्रों को हृदयंगम कराने के लिए किया जाता है। शिक्षण प्रविधियों का प्रयोग इसलिए किया जाता है कि शिक्षण को रोचक एवं प्रभावशाली तथा सफल बनाया जा सके।

अपनी उन्नति जानिए

प्र. 1 बालकों की बुद्धिलब्धि होती है।

प्र. 2 विशिष्ट बालक प्रायः होते हैं।

प्र. 3 गंभीर श्रवण बाधित बालकों में कितने डेसीबल तक की श्रवणबाधिता होती है।

प्र. 4 वह बालक जिसका शारीरिक दोष उसे साधारण क्रियाओं में भाग लेने से रोकता है या सीमित रखता है उसे कहते है।

14.8 विशेष आवश्यकता वाले बच्चो की सहायता में शिक्षक की भूमिका

अधिगम बाधित बालक–, सीखने संबंधी कमी या असमर्थता वाले बालक विशेष आवश्यकता वाले बच्चे इस वर्ग में आते हैं। ये बालक मानसिक रूप से मंद नहीं होते परन्तु सामान्य बालकों की तुलना में शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए होते हैं। शिक्षक बालकों की रूचि, अभिरुचि, उनकी विशिष्ट क्षमता के आधार पर उसके शैक्षिक क्षेत्र के चयन और व्यावसायिक क्षेत्र की जानकारी देने में सहायता प्रदान करने की क्षमता रखने वाले होने चाहिए।

अध्यापक बालक के जीवन में बहुत अधिक महत्व रखता है। अध्यापन पेशा या व्यवसाय नहीं बल्कि समाज के प्रति सेवा के लिये समर्पण है। एक शिक्षक ही देश को स्वावलंबी बनाकर बुलंदी पर पहुँचाता है। अध्यापक ही अपने बालकों में चरित्र-निर्माण, व्यवहार आदि में परिवर्तन करके व्यक्तित्व का निर्माण करता है। बालक को सही मार्गदर्शन देनाअध्यापक द्वारा ही सम्भव है। शिक्षा की व्यवस्था की सफलता अध्यापक पर निर्भर करती है। एक अच्छा शिक्षक ही अच्छे समाज का निर्माण कर सकता है। डॉ. एस. राधाकृष्णन् के अनुसार– "अध्यापक का समाज में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। वह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को बौद्धिक संस्कृतियों और तकनीकी कौशलों को पहुँचाने में मुख्य भूमिका अदा करता है और सभ्यता के दीपक को जलाये रखता है।"

बाधित बालकों की उन्नति एवं विकास में विशिष्ट अध्यापक का महत्वपूर्ण योगदान होता है जिसे हम निम्न शब्दों में चिह्नित कर सकते हैं-

(i) विशिष्ट शैली से समावेशन सुनिश्चित करना।

(ii) लम्बे अन्तराल तक समावेशन की सफलता का प्रबंध करना।

(iii) बाधित बालकों की विशिष्ट आवश्यकताओं की पहचान करना।

(iv) पहचान के बाद उन क्षेत्रों में सुनियोजित ढंग से कार्य कर सफल समावेशन सुनिश्चित करना।

(v) उन बालकों की आवश्यकता पूर्ति हेतु हर प्रकार का व्यावसायिक एवं व्यावहारिक सहयोग करना।

(vi) बालक के विकास का निरंतर निरीक्षण करना।

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों में शिक्षक की भूमिका का वर्णन निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर कर सकते है:-

1- व्यक्तिगत आवश्यकताओं को समझना-विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए एक पोषण और सशक्त शैक्षिक वातावरण बनाने के लिए उनकी व्यक्तिगत आवश्यकताओं की गहरी समझ और उनकी विविध क्षमताओं की स्वीकृति की आवश्यकता होती है। दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार अधिनियम (आरपीडब्ल्यूडी, 2016) में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की आवश्यकताओं के अनुरूप पाठ्यक्रम संशोधन शामिल हैं। इसमें शारीरिक अक्षमता के 21 प्रकारों का वर्णन किया गया है। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के शिक्षकों को प्रत्येक बच्चे की विशिष्ट आवश्यकताओं में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्राप्त करने के लिए माता-पिता और विशेषज्ञों के साथ सहयोग करते हुए विभिन्न शिक्षण शैलियों को समायोजित करने के लिए अपनी शिक्षण तकनीकों और सामग्रियों को अनुकूलित करना चाहिए।

2- एक समावेशी वातावरण का निर्माण- सहकर्मी सहभागिता और सामाजिक समावेशन को प्रोत्साहित करने से एक सहायक और समावेशी माहौल को बढ़ावा मिलता है। सार्वभौमिक डिज़ाइन सिद्धांतों को लागू करने से यह भी सुनिश्चित होता है कि कक्षा सभी छात्रों की आवश्यकताओं को समायोजित करती है। स्कूलों में वास्तुशिल्प बाधाओं को दूर करना, कक्षाओं, प्रयोगशालाओं, पुस्तकालयों और मनोरंजक क्षेत्रों तक आसान पहुंच प्रदान करना महत्वपूर्ण है। ताकतों और रुचियों पर जोर देना-विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शक्तियों और प्रतिभाओं की पहचान करने के लिए व्यापक मूल्यांकन करने से शिक्षक अधिक लक्षित दृष्टिकोण अपनाने में सक्षम हो सकते हैं।

3- आत्मविश्वास की प्रेरणा का निर्माण-विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को सशक्त बनाना उनके आत्मविश्वास और प्रेरणा के निर्माण से शुरू होता है। शिक्षक यथार्थवादी लक्ष्य निर्धारित करके और छात्रों को उनकी प्रगति पर नज़र रखने में मदद करने के लिए नियमित फीडबैक देकर इसे प्राप्त कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, छात्रों को स्वयं की वकालत करने के लिए प्रोत्साहित करना और उनकी स्वतंत्रता को बढ़ावा देना उन्हें अपनी सीखने की यात्रा का स्वामित्व लेने में सक्षम बनाएगा।

4- सहयोग और संचार-माता-पिता के साथ संचार की खुली लाइनें बनाए रखना अत्यावश्यक है, क्योंकि उनके पास अपने बच्चे की क्षमताओं और जरूरतों के बारे में मूल्यवान अंतर्दृष्टि होती है। सहायक कर्मचारियों और विशेषज्ञों के साथ सहयोग करने से साझेदारी को भी बढ़ावा मिलता है जिससे व्यक्तिगत योजनाएँ और रणनीतियाँ बनती हैं। विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को पढ़ाने में आत्मविश्वास और क्षमता बढ़ाने के लिए, शिक्षक विशेष आवश्यकता वाली शिक्षा में नवीनतम शोध और सर्वोत्तम प्रथाओं का पालन कर सकते हैं और उनसे अपडेट रह सकते हैं।

5- सहायक प्रौद्योगिकी का उपयोग करना- सहायक प्रौद्योगिकी को अपनाने से एक सशक्त और समावेशी शैक्षिक वातावरण तैयार किया जा सकता है, जिससे विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को आगे बढ़ने और अपनी पूरी क्षमता तक पहुंचने में सक्षम बनाया जा सकता है। यह उनकी प्रतिभा को निखारने में गेम-चेंजर साबित हो सकता है।

निष्कर्ष- विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के शिक्षण में शिक्षक बच्चों की व्यक्तिगत शक्तियों को पहचानकर और प्राथमिकता देकर, शिक्षक सार्थक शिक्षण अनुभव बनाने के लिए उनकी शिक्षण शैली को अनुकूलित कर सकते हैं। इसके अलावा, पाठ योजनाओं में छात्रों की रुचियों को शामिल करना और उन्हें उन विषयों से जुड़ने की अनुमति देना जिनके बारे में वे भावुक हैं, उनकी पूरी क्षमता को उजागर करने में कारगर साबित हो सकते हैं।

14.9 प्रतिभाशाली और रचनात्मक शिक्षार्थियों का मार्गदर्शन

प्रतिभाशाली और रचनात्मक विद्यार्थियों के मार्गदर्शन में शिक्षकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। सर्वप्रथम शिक्षक को यह जानना आवश्यक होता है किबच्चों में किस प्रकार की योग्यता है। उनके रचनात्मक दृष्टिकोण को समझते हुए उनके लिए शिक्षण की व्यवस्था करना शिक्षक के लिए निश्चित ही एक चुनौतीपूर्ण कार्य होता है। प्रतिभाशाली और रचनात्मक बालक अन्य बालकों से जल्दी विषय वस्तु को समझने में सक्षम होते हैं तथा उनमें सृजनात्मकता तथा रचनात्मकता का गुण भी विद्यमान होता है। शिक्षक को उनकी योग्यता को ध्यान में रखकर उनका मार्गदर्शन करते हुए उनकी व्यक्तिगत विभिन्नता के आधार पर शिक्षण की प्रक्रिया को सुनिश्चित करना आवश्यक होता है। इस प्रकार के बच्चे कठिन प्रश्नों को भी कम समय में हल करने में सक्षम होते हैं तथा इस प्रकार के बच्चों से कक्षा के अन्य बच्चे भी प्रेरित होकर सीखने में सक्षम हो सकते हैं।

प्रतिभाशाली और रचनात्मक बालकों के मार्गदर्शन में शिक्षक की भूमिका को निम्नलिखितबिंदुओं के आधार पर समझा जा सकता है:-

1- प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा - प्रतिभाशाली बालकों के लिए अपने को व्यवस्थापित करना कठिन होता है क्योंकि पाठशाला की परिस्थितियाँ एक विशेष प्रकार की होती है। हमें प्रतिभाशाली बालक को पढ़ने की तीव्र गति के लिए व्यवस्था करना चाहिए। प्रतिभाशाली बालकों के लिए विशेष कक्षाओं की भी व्यवस्था की जानी चाहिए। सभी सामान्य और प्रतिभाशाली बालकों को सीखने के लिए समान अवसर प्रदान किए जाने चाहिए। सभी को अपनी-अपनी प्रतिभा के विकास की पूरी स्वतंत्रता मिलनी चाहिए।

2- अन्य गतिविधियों में प्रतिभाग- प्रतिभाशाली बालकों को कक्षा के बाहर की उन क्रियाओं में भी भाग लेना चाहिए जो उनकी शिक्षा से संबंधित नहीं होतीं हैं। यह आशा की जा सकती है कि प्रतिभाशाली बालक उन क्रियाओं का नेतृत्व करे, किंतु अध्यापक को उन्हें नेतृत्व पद अपनी स्वयं की इच्छा के आधार पर नहीं देना चाहिए, नहीं तो दूसरे क्षेत्र इनसे ईर्ष्या करने लगेंगे। जो बालक विशेष रूप से प्रतिभाशाली होते हैं उनको अति विशेष ध्यान की आवश्यकता होती है।

3- आवश्यक मार्गदर्शन- अध्यापक उनका व्यक्तिगत रूप से ध्यान रख सकता है। इस प्रकार उनकी विशेष प्रतिभा को निश्चित व उचित दिशा मिल जाती है। प्रतिभावान के लिए किसी भी झूठी प्रेरणा की आवश्यकता नहीं होती। यदि विषय-सामग्री को बौद्धिक रूप से उनके समक्ष उपस्थित किया जाता है तब उनमें बौद्धिक उत्सुकता सदैव बनी रहती हैं। प्रतिभाशाली बालकों की शैक्षिक उन्नति के लिए उन्हें शीघ्रता से या समय से पहले एक कक्षा से दूसरी कक्षा में प्रोन्नति नहीं देनी चाहिए इससे इन बालकों और नई कक्षा के बालकों की शारीरिक, सामाजिक और मानसिक परिपक्वता में अंतर बढ़ जाता है। ऐसा करने पर प्रतिभाशाली बालकों का सामाजिक समायोजन बिगड़ जाता है।

4- प्रतिभा केन्द्रित शिक्षा- प्रतिभाशाली बालक की शिक्षा उसके अध्ययन और उसकी प्रतिभा पर आधारित होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में उसकी विशेष शिक्षा प्रतिभाशाली केंद्रित होनी चाहिए। अन्यथा उनकी प्रतिभा व्यर्थ चली जाएगी। आज विश्व के अनेक देश तथ्य से परिचित हो चुके हैं और परिणामस्वरूप इन देशों में प्रतिभाशाली बच्चों को उचित शिक्षा देने और आगे बढ़ने के विशेष अवसर प्रदान किए जा रहे हैं।

5- प्रतिभाशाली बालकों के शिक्षकों के गुण :- प्रतिभाशाली बालकों को पढ़ाने के लिए शिक्षकों की नियुक्ति बड़ी सावधानी से करनी चाहिए। चुने हुए शिक्षकों को विशेष शिक्षा की विधियों एवं

तकनीकों में प्रशिक्षित होना चाहिए अथवा चुनाव के पश्चात् उन्हें प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। सर्वोत्तम शिक्षक के द्वारा ही प्रतिभाशाली बालकों की प्रतिभा को निखारा जा सकता हैं।

सृजनशील बालक

ऐसे बालक जो कोई मौलिक विचार या व्याख्या प्रस्तुत करें सृजनशील बालक कहलाते हैं। साधारण शब्दों में कह सकते हैं कि जो बालक नवीन वस्तुओं की रचना, नवीन विचार या समस्या समाधान के नवीन तरीके ढूँढ़ते हैं जिनसे समस्या का समाधान हो सके उन्हें सृजनशील बालक कहा जाता है।

सृजनात्मक बालक की विशेषताएँ

- सृजनशील बालक के विचार में वास्तविकता व व्यवहारशीलता नजर आती है।
- ये बालक कल्पना को मूर्त रूप देने में प्रयासरत रहते हैं। यही वजह है कि वो इसमें सफल भी होते हैं।
- उच्च महत्त्वाकांक्षी तथा लक्ष्य केंद्रित होते हैं।
- जिज्ञासु प्रवृत्ति के होते हैं तथा कार्य करते वक्त जोखिम लेने से भी नहीं डरते हैं।
- मौलिकता तथा नवीनता का गुण होता है व उच्च बौद्धिक क्षमता वाले होते हैं।
- अपनी क्षमता को पहचानकर कार्य करना चाहते हैं; लेकिन कई बार परिस्थितियाँ जब साथ नहीं देतीं तो ये कुंठित भी हो जाते हैं। उदाहरण के लिए जब कोई बालक गणित के एक प्रश्न को कई तरीके से हल करता है लेकिन परिस्थितियों ने उनका साथ नहीं दिया जिससे वह मानसिक समस्याओं से घिर गए।

प्रतिभाशाली एवं सृजनशील बालकों का मार्गदर्शन

- शिक्षक को तत्पर होकर सृजनशील बालकों की पहचान करनी चाहिए ताकि उनकी योग्यता व क्षमता का सही से विकास हो सके जिससे न सिर्फ उन छात्रों का बल्कि समाज का भी फायदा हो सके।
- शिक्षक को खुद ऐसे बालकों के लिए प्रेरणा स्रोत का कार्य करना चाहिए।

- शिक्षक को भी सृजनशील कार्य करके बालकों के सामने प्रस्तुत करना चाहिए तथा ऐसे अवसर उपलब्ध कराने चाहिए जिससे उनके अंदर छिपी सृजनात्मकता बाहर आ सकें।
- शिक्षक छात्रों के समक्ष ऐसी समस्या या परिस्थितियाँ उत्पन्न करते रहे जो छात्रों के लिए नवीन हो। इनके समाधान के क्रम में ही छात्रों में कई मौलिक विचार या व्याख्याएँ सामने आ सकती हैं।
- छात्र के सृजनशीलता को बढ़ावा देना चाहिए जबकि कई बार ऐसा देखा गया है कि शिक्षक छात्रों को सिर्फ विषयवस्तु पर केंद्रित रखना चाहते हैं। अन्य क्रियाकलापों को महत्वहीन समझते हैं। छात्र यदि कविता, कहानी, चित्रकला, हस्तकला आदि में रुचि लेता है तो उसे बढ़ावा देना चाहिए।

विशेष बालकों एवं उनके व्यक्तिव से संबंधित विभिन्न समस्याओं का अध्ययन करना विशिष्ट शिक्षा के क्षेत्र के अंतर्गत आता है। इसके विषय वस्तु के अंतर्गत विशिष्ट बालकों के पहचान उनकी शिक्षा, निर्देशन, निदान उनके व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है। इस प्रकार विशिष्ट शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न समस्याओं पर विचार किया जाता है।

अपनी उन्नति जानिए

1. आरपीडब्ल्यूडी, एक्ट 2016 में शारीरिक अक्षमता के कितने प्रकारों का वर्णन किया गया है?
2. विशेष बालकों एवं उनके व्यक्तिव से संबंधित विभिन्न समस्याओं का अध्ययन किस शिक्षा के क्षेत्र के अंतर्गत आता है?
3. ब्रेल लिपि का प्रयोग किस प्रकार के बालक करते हैं।
4. सामान्य बच्चो एवं दिव्यांग बच्चो को एक साथ शिक्षा प्रदान करने वाली शिक्षा कहलाती है।

14.10 सारांश

विशिष्ट शिक्षा विशेष तौर पर डिजाइन किया गया शैक्षिक अनुदेशन है जिसमें विशिष्ट कक्षाएं अथवा विशेष बालकों के शैक्षिक सामर्थ्य विकसित करने वाली सेवाएँ, मसलन विद्यालय कमेंटी द्वारा बच्चों के शैक्षिक स्थापन, लोक स्वास्थ्य, मानसिक स्वास्थ्य, मानसिक मंद एवं युवा विभाग एवं शैक्षिक बोर्ड द्वारा बनाया गया अधिनियम आदि शामिल है। इसके अर्न्तगत विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को विशिष्ट विद्यालयों में, विशिष्ट शिक्षक के माध्यम से, विशिष्ट पाठ्यचर्चा के अनुरूप शिक्षा

दी जाती है। इसके अन्तर्गत विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को अध्यापन करने वाले शिक्षकों को विशिष्ट शिक्षा के अर्थ, इसकी आवश्यकता, इनके सिद्धान्तों का अध्ययन कराया जाता है। इसके अलावा इसके अंतर्गत विशिष्ट शिक्षा के कार्यक्षेत्र, लाभों का भी विस्तारपूर्वक अध्ययन कियाजाता है।

14.11 शब्दावली:

विशिष्ट बालक- प्रत्येक समाज में कुछ ऐसे बालक होते हैं, जो सामान्य बालकों की अपेक्षा श्रेष्ठ या हीन होते हैं। आनुवंशिकता तथा वातावरण में भिन्नता के कारण इन बालकों के शारीरिक, मानसिक और अन्य गुणों में भिन्नता पाई जाती है।

विशिष्ट शिक्षा:- विशेष आवश्यकता वाले एवं विभिन्न प्रकार के शारीरिक रूप से अक्षम बच्चो को दी जाने वाली शिक्षा विशिष्ट शिक्षा कहलाती है।

शिक्षण कौशल- विशेष शिक्षक के लिए विद्यार्थियों को शिक्षण की कला और विज्ञान को जानने की आवश्यकता होती है। जिसे शिक्षाशास्त्र कहते हैं। इसका अर्थ है कि किसी विशेष विषय जैसे विज्ञान, समाज विज्ञान अथवा गणित पढ़ने में सक्षम होना, शिक्षक को संकल्पनाओं और पाठों को हिस्सों में बाँट कर सरल करना आना चाहिए, जिससे विद्यार्थी सिद्धांतों और उनके अर्थों को पूरी तरह समझ सकें।

अधिगम बाधित बालक– सीखने संबंधी कमी या असमर्थता वाले बालक विशेष आवश्यकता वाले इस वर्ग में आते हैं। ये बालक मानसिक रूप से मंद नहीं होते परन्तु सामान्य बालकों की तुलना में शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए होते हैं।

विशेष विद्यालय:- जहॉ केवल विशेष आवश्यकता वाले बच्चे अध्ययन करते हैं उसे विशेष विद्यालय कहा जाता है ।

14.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

भाग -1

उ. 1. 70 से कम

उ. 2. अंतर्मुखी

उ. 3. 70– 90 डेसीबल

उ. 4. दिव्यांग बालक

भाग -2

उ. 1. 21

उ. 2. विशिष्ट शिक्षा

उ. 3. दृष्टि बाधित

उ. 4. समावेशी शिक्षा

14.13 संदर्भ ग्रन्थ:

पांडा, के0 सी0 (1997), " एजुकेशन ऑफ एक्सेपसनल चिल्डेन" नई दिल्ली: विकास पब्लिशिंग एण्ड डिस्ट्रब्यूटर्श।

मुखोपाध्याय, एस0 एण्ड मनी, एम0एन0जी0 (2002) एडुकेशन ऑफ चिन्ड्रेन विद् स्पेशल नीड्स, नई दिल्ली: आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

डा0 कुमार संजीव (2008), विशिष्ट शिक्षा, अशोक राजपथ, पटना।

रैकवार,रामगोपाल. 2000. प्राथमिक शिक्षा में गुणवत्ता स्तर की समस्या, प्राइमरी शिक्षक, अप्रैल,12-16|

शर्मा युक्ति, समावेशी शिक्षा,पीअर्सन पब्लिकेशन|

https:/www.mha.gov.in, दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम 2016|

https:/www.education.gov.in, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020|

एजुकेशन फॉर आल: टुवर्ड्स क्वालिटीविथ इक्विटी 2016|

देवी, कुसुम. समावेशन शिक्षा में अध्यापकों के उत्तरदायित्व एवं भूमिका: एक समीक्षा|

निमांटे, दिता. समावेशी शिक्षा के लिए उनकी योग्यताओं पर शिक्षकों का परिप्रेक्ष्य|

सिंह, शिबा.2020. अ स्टडी ऑफ़ एटिटयूड ऑफ़ टीचर्स टूवर्ड्स इनक्लूसिव एजुकेशन

14.14 निबंधात्मक प्रश्न:-

1. विशेष बालक से आप क्या समझते हैं? इनके मुख्य समस्याओं की व्याख्या कीजिये।
2. विशेष बालकों की आवश्यकताओं से आप क्या समझते हैं? व्याख्या कीजिये।
3. विशेष बालकों के लिए विशिष्ट शिक्षा की आवश्यकता पर संक्षेप में लेख लिखें।
4. प्रतिभाशाली एवं सृजनशील बालकों का मार्गदर्शन कैसे किया जा सकता है? स्पष्ट कीजिये।

इकाई -15 समूह परामर्श एवं व्यक्तिगत परामर्श, समायोजन हेतु परामर्श, अच्छे परामर्श के लक्षण (Group Counseling and Individual Counseling, Counseling for Adjustment,Charecterstics of Good Counselling)

15.1 प्रस्तावना

15.2 उद्देश्य

15.3 परामर्श का अर्थ एवं परिभाषाएँ

15.3.1 परामर्श की विशेषताएं

15.4 परामर्श के प्रकार

15.5 समूह परामर्श

15.5.1 समूह परामर्श के उद्देश्य

15.5.2 समूह परामर्श की प्रक्रिया

15.5.3 समूह परामर्श प्रक्रिया के नियम

15.5.4 समूह परामर्श के लाभ और सीमाएं

15.6 व्यक्तिगत परामर्श

15.6.1 व्यक्तिगत परामर्श के प्रकार

15.6.2 व्यक्तिगत परामर्श

15.6.3 व्यक्तिगत परामर्श के लाभ एवं सीमाएं

15.7 समायोजन हेतु परामर्श

15.7.1 समायोजन की आवश्यकता

15.7.2 समायोजन के लिए परामर्श की भूमिका

15.8 अच्छे परामर्श के लक्षण

15.8.1 परामर्शदाता के गुण

15.8.2 परामर्श प्रार्थी के गुण

15.9 सारांश

15.10 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्नों के उत्तर

15.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

15.12 निबन्धात्मक प्रश्न

15.1 प्रस्तावना

कोई भी व्यक्ति जन्म के पश्चात जैसे-जैसे विकास की अन्य अवस्थाओं में बढ़ता है तथा समाज के संपर्क में आता है तो वह स्वयं को अनेक समस्याओं से घिरा हुआ पाता है इन समस्याओं का स्वरुप एवं उनकी गंभीरता में भिन्नता हो सकती है। व्यक्ति को अपने घर में, कार्य स्थल में, विद्यालय अथवा अपने दिनचर्या से सम्बंधित कार्यों में उत्पन्न समस्याओं के समाधान हेतु किसी न किसी प्रकार की सहायता की आवश्यकता होती है । इन समस्याओं के समाधान हेतु निर्देशन प्रक्रिया से सम्बंधित विभिन्न सेवाओं का संगठन किया जाता है । जिसमें परामर्श सेवा का महत्वपूर्ण स्थान है । प्राचीन समय में घर में माता-पिता, शिक्षकों या समाज के अन्य व्यक्तियों द्वारा परामर्श दिया जाता था। परन्तु वर्तमान समय में समस्याओं की जटिलता बढ़ जाने के कारण परामर्श प्रक्रिया हेतु कुशल,योग्य एवं प्रशिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ती है सामाजिक,शैक्षिक,आर्थिक समस्याओं की जटिलताओं की वृद्धि ने विश्व के बुद्धिजीवी समुदाय को यह समझा दिया है कि राष्ट्र के अस्तित्व को यदि सुरक्षित रखना है, सभी क्षेत्रों में सतत एवं समन्वित प्रगति करनी है तो उसके विकास पथ पर पर आने वाली समस्त समस्याओं का प्रभावकारी समाधान होना आवश्यक है। जिसके लिए निर्देशन एवं परामर्श प्रक्रियाओं को महत्व दिया जाना आवश्यक है । परामर्श प्रक्रिया किसी भी क्षेत्र में दी जा सकती है परामर्श स्वयं को बेहतर बनाने, निर्भरता पर अंकुश लगाने, या उत्पादक और स्वस्थ जीवन जीने के लिए आवश्यक है।

15.2 उद्देश्य

प्रस्तुत ईकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- परामर्श का अर्थ एवं परिभाषाएं बता पाएंगे।
- परामर्श के प्रकारों को जान पाएंगे।
- समूह परामर्श तथा व्यक्तिगत परामर्श की व्याख्या कर सकेंगे ।

- समायोजन हेतु परामर्श की आवश्यकता को समझ सकेंगे ।
- अच्छे परामर्श के लिए परामर्शदाता तथा परामर्शप्रार्थी के गुणों की व्याख्या कर सकेंगे।

15.3 परामर्श का अर्थ एवं विशेषताएं

परामर्श की आवश्यकता मनुष्य को सदैव से पड़ती रही है, किन्तु परिवार एवं समाज के स्वरूप में परिवर्तन के साथ-साथ परामर्श के रुप में भी परिवर्तन हुआ है। पहले संयुक्त परिवार में व्यक्ति अपने परिवार के बुजुर्गों से परामर्श प्राप्त कर संतुष्ट हो जाता था। वर्तमान समय में आर्थिक, प्रतिस्पर्धात्मक एवं गतिशील जटिल युग में व्यक्ति पारिवारिक सदस्य से परामर्श प्राप्त कर संतुष्ट नहीं होता, उसे प्रशिक्षित परामर्शदाता की आवश्यकता होती है। परामर्श अक्सर एक प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा आयोजित किया जाता है जो दूसरों को बहुत विशिष्ट समस्याओं, मुद्दों या निर्भरताओं को ठीक करने में मदद करता है जो उनके जीवन पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकते हैं। किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत समस्याओं एवं कठिनाइयों को दूर करने के लिये दी जाने वाली सहायता, सलाह और मार्गदर्शन, परामर्श कहलाता है। परामर्श देने वाले व्यक्ति को परामर्शदाता कहते हैं। निर्देशन के अन्तर्गत परामर्श एक आयोजित विशिष्ट सेवा है। परामर्श के लिए कोई भी समस्या छोटी नहीं होती। चाहे आप परिवार की समस्याओं, समायोजन के मुद्दों, मानसिक बीमारी, यौन चिंताओं और यहां तक कि व्यसनों से निपट रहे हों - परामर्श एक अच्छा समाधान है और बेहतरी के लिए एक बढ़िया रास्ता है। परामर्श मंद गति से चलने वाली प्रक्रिया है कोई त्वरित समाधान नहीं है, और समस्याओं को तुरंत हल करने के लिए काम नहीं करता है। यह ऐसा माहौल भी नहीं है जहाँ परामर्श दाता आपको क्या करना है? या आपके व्यवहार या समस्याओं का मूल्यांकन करेगा। यह एक वार्तालाप है, जो आशा करता है कि कुछ संभावित समाधानों और तरीकों को उजागर करेगा जिससे आप बेहतरी के लिए अपने मुद्दों पर विचार कर सकते हैं। परामर्श प्रक्रिया को निर्देशन का मुख्य केन्द्र माना जाता है ।

परामर्श एक प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत व्यक्ति एक प्रोफेशनल रूप से व्यक्ति के साथ विशिष्ट उद्देश्य को स्थापित करने हेतु कार्य करता है तथा ऐसे व्यवहारों को सीखता है जिनका अर्जन इन विशिष्ट उद्देश्यों की पूर्ति हेतु आवश्यक है।

परामर्श प्रक्रिया में जो व्यक्ति परामर्श देता है उसे परामर्शदाता तथा जो व्यक्ति परामर्श प्राप्त करता है उसे परामर्शप्रार्थी कहा जाता है ।

परामर्श की परिभाषाएँ

परामर्श को विभिन्न विद्वानों ने परिभाषित किया है जिनमें से कुछ का उल्लेख निम्नलिखित है। ''परामर्श एक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से एक छात्र व्यवहारों के सीखने अथवा परिवर्तन करने और विशिष्ट लक्ष्यों को स्थापित करने में व्यावसायिक रुप से प्रशिक्षित व्यक्ति के साथ कार्य करता है जिससे वह इन लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में अधिकार रख सके।''

ए0 जे0 जोन्स''परामर्श प्रक्रिया समस्या समाधान का सम्मिलित प्रयास है।''

रुथ स्ट्रांग "परामर्श शब्द दो व्यक्तियों के सम्पर्क की उन सभी स्थितियों का समावेश करता है जिनमें एक व्यक्ति को उसके स्वयं के एवं पर्यावरण के बीच अपेक्षाकृत प्रभावी समायोजन प्राप्त करने सहायता की जाती है"।

रॉबिन्सन "परामर्श को उस अन्तर-वैयक्तिक सम्बन्ध के रूप में देखा जा सकता है जिसमे वैयक्तिक तथा सामूहिक परामर्श के साथ-साथ वह कार्य भी सम्मिलित है जो अध्यापकों एवं अभिभावकों से संम्बंधित है और जो विशेष रूप से मानव सम्बन्धों के भावात्मक पक्षों को स्पष्ट करता है"।

बर्नाड तथा फुलमर "परामर्श एक निश्चित रूप से निर्मित स्वीकृत सम्बन्ध है जो उपबोध्य को अपने को उस सीमा तक समझने में सहायता करता है जिसमें वह अपने ज्ञान के प्रकाश में विद्यात्मक कार्य में अग्रसर हो सकें"।

कार्ल रोजर्स "परामर्श वह अंतक्रिया है जो दो व्यक्तियों के बीच घटित होती है जिन्हें परामर्शदाता और सेवार्थी कहा जाता है। यह एक व्यावसायिक स्थापन में घटित होती है । और जो सेवार्थी के व्यवहार में परिवर्तनों को आगे बढ़ाने के लिए प्रारम्भ की जाती है, और बनाई जाती है।"

पेपिनस्की, एच.बी. एवं पेपिनस्की, पी. "परामर्श को भिन्न-भिन्न निर्देशन सेवाओं में से एक समझा जाता है। यह मुख्य रूप से एक व्यक्ति से आमने-सामने के संबंधों में प्रयुक्त होता है। परामर्शदाता सेवार्थी की भावनाओं, स्थितियों व परिस्थितियों और किसी भी क्रिया को समझने तथा विश्लेषण करने में सहायता करने का प्रयास करते हैं।"

शेफर राबर्ट एच "परामर्श तर्क वितर्क के द्वारा एक व्यक्ति की क्षमताओं और इच्छाओं को तर्कसंगत बनाने में सहायता करता है। परामर्श का मुख्य उद्देश्य सामाजिक संस्थानों और सामाजिक अनुकूलन के लिए सचेत अहं को प्रोत्साहित करना है।"

गार्डन हैमिल्टन "परामर्श परामर्शदाता और परामर्शप्रार्थी के बीच एक अंतःक्रिया प्रक्रिया है जिसमें परामर्श लेने वाला सहायता चाहता है, और परामर्शदाता ऐसी सहायता प्रदान करने के लिए शिक्षित और प्रशिक्षित होता है।"

पेरे, एफ. जे "यह पारस्परिक रूप से सीखने की प्रक्रिया है और इसके अन्तर्गत दो व्यक्ति सम्मिलित होते हैं – एक वह जो सहायता प्राप्त करता है और दूसरा वह व्यक्ति जो इस पहले व्यक्ति की इस तरह से मदद करता है, कि उसका अधिकतम विकास हो सके।"

विली तथा एण्डूं उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि विभिन्न परिभाषाओं में परामर्श के विभिन्न पक्षों पर जोर दिया गया है अतः संक्षेप में हम कह सकते हैं कि परामर्श एक प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा किसी व्यक्ति को बातचीत के माध्यम से दी जाने वाली व्यक्तिगत सहायता है जिसके द्वारा व्यक्ति स्वयं को तथा अपने वातावरण जिससे वह प्रशासित है, को समझ सके एवं अपनी समस्या का समाधान पा सके तथा अपने वातावरण के साथ समायोजित हो सके।

15.3.1 परामर्श की विशेषताएं

- परामर्श की प्रक्रिया दो व्यक्तियों के पारस्परिक सम्बन्ध पर आधारित होती है।
- दोनों के मध्य विचार-विमर्श के अनेक साधन हो सकते हैं।
- प्रत्येक परामर्शदाता को अपनी प्रक्रिया का पूर्व ज्ञान होना चाहिए।
- परामर्श के फलस्वरूप ,परामर्श प्रार्थी की भावनाओं में परिवर्तन होता है।
- परामर्श प्रक्रिया में परामर्शदाता के द्वारा निर्णय नहीं लिया जाता है, अपितु परामर्श प्रार्थी स्वयं निर्णय लेता है।
- परामर्शदाता सम्पूर्ण परिस्थितियों के आधार पर समायोजन हेतु प्रार्थी को जानकारी देता है और उसकी सहायता भी करता है

- परामर्श का उद्देश्य दूसरे व्यक्ति को और व्यवस्थित करने की कला सिखाना है,ताकि उसका जीवन सुखद हो सके।
- परामर्श के माध्यम से अब सेवार्थी की सभी क्षमताओं का पूर्ण रूप से खुलासा करना संभव है।
- परामर्श में औपचारिक और अनौपचारिक दोनों तरह के संबंध हो सकते हैं।
- परामर्शदाता की सहायता से सेवार्थी को अपनी क्षमता विकसित करने की सुविधा मिलती है।
- परामर्श का मुख्य उद्देश्य सेवार्थी के नकारात्मक विचारों को सकारात्मक विचारों में बदलना है।
- परामर्श पद्धति के माध्यम से परामर्शदाता,परामर्श प्रार्थी की रुचि को जानता है, समस्या को समझता है, समस्या की प्रकृति को जानता है तथा स्थिति को समझता है तथा समस्या के समाधान के उपाय सुझाता है।
- परामर्शदाता सलाह को परामर्श प्रार्थी को थोपता नहीं है, बल्कि यह परामर्शदाता की इच्छा पर निर्भर करता है कि वह परामर्श को पूर्ण, आधा-अधूरा या बिल्कुल भी स्वीकार नहीं करता है।

15.4 परामर्श के प्रकार

परामर्श जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में होता है, समस्या की प्रकृति के आधार पर तथा ईलाज की जटिलता तथा व्यवसाय से सम्बंधित समस्याओं के निदान और समाधान के लिये विशिष्ट ज्ञान और कौशल की आवश्यकता के अनुरूप विविध प्रकार के परामर्श के रूपों का विकास हुआ। इस समय समस्या और परामर्शप्रार्थी की दृष्टि से परामर्श को निम्न प्रकारों में बाँटा जा सकता है-

- नैदानिक परामर्श
- मनोवैज्ञानिक परामर्श
- मनोचिकित्सकीय परामर्श
- छात्र परामर्श

- नियोजन परामर्श
- वैवाहिक परामर्श
- व्यावसायिक एवं जीविका परामर्श

स्वरूप के आधार पर परामर्श के प्रकार

विभिन्न प्रकार के परामर्श केवल उन समस्याओं के क्षेत्रों को इंगित करते हैं जिनके लिए परामर्श की आवश्यकता होती है। ये उपबोध्य (परामर्शप्रार्थी) द्वारा अनुभव की गई समस्याओं की प्रकृति पर आधारित हैं। रोजर्स और वैलेन के अनुसार, परामर्शदाता को हर स्थिति में उपबोध्य व्यक्ति की धारणा में रुचि लेनी चाहिए, न कि केवल प्रारंभिक समस्या में।

1. निदेशात्मक परामर्श या निर्देशीय परामर्श (Directive Counseling)
2. अनिर्देशीय परामर्श या अनिदेशात्मक परामर्श (Non Directive Counseling)
3. समन्वित परामर्श या समाहारक परामर्श (Eclectic Counseling)

निर्देशीय परामर्श या निदेशात्मक परामर्श

निदेशात्मक परामर्श की विधि परम्परागत एवं अत्यंत प्रचलित है। ई.जी विलियमसन इस विधि के प्रमुख प्रवर्तक हैं निर्देशीय परामर्श में परामर्शदाता का महत्व ज्यादा है। वह परामर्श प्रार्थी की समस्याओं के समाधान के लिए उपाय और निर्देश देता है। इस प्रकार के परामर्श में परामर्शदाता समस्या पर अधिक महत्व देता है। इस प्रक्रिया में परामर्शदाता परामर्श प्रक्रिया का केन्द्र होता है। साक्षात्कार या प्रश्नावली प्रणाली का उपयोग निर्देशीय परामर्श में किया जाता है।

अनिर्देशीय परामर्श या अनिदेशात्मक परामर्श- निर्देशीय परामर्श के विपरीत, अनिर्देशीय परामर्श मूल रूप से प्रार्थी-केन्द्रित है। इस प्रकार के परामर्श में, परामर्श प्रार्थी को बिना किसी प्रत्यक्ष निर्देश के स्वयं की संतुष्टि व आत्मज्ञान और आत्मनिर्भरता की ओर उन्मुख होती है। इस सिद्धांत का प्रतिपादन करने का श्रेय कार्ल रोजर्स को जाता है ।

समन्वित परामर्श या समाहारक परामर्श- जो परामर्शदाता निर्देशीय या अनिर्देशीय विचारधाराओं से सहमत नहीं हैं, उन्होंने परामर्श का एक और प्रारूप विकसित किया है जिसे समन्वित या समाहारक

परामर्श कहा जाता है । समाहारक परामर्शों ने निर्देशक और गैर-निर्देशक दोनों प्रारूपों के अच्छी विशेषताओं को लिया गया है। एक तरह से, यह दोनों के बीच परामर्श का एक रूप है जिसे मध्यमार्गी कहा जा सकता है। इस विधि में परामर्शदाता व परामर्शप्रार्थी दोनों सामान रूप से सक्रीय होते हैं । इस परामर्श के प्रवर्तक एफ .सी. थार्ने हैं ।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. निदेशात्मक परामर्श की विधि के प्रमुख प्रवर्तक कौन हैं?
2. निर्देशीय परामर्श में किसका महत्व ज्यादा है।
3. परामर्श की प्रक्रिया दो व्यक्तियों के --------पर आधारित होती है।
4. किसके अनुसार ''परामर्श प्रक्रिया समस्या समाधान का सम्मिलित प्रयास है।''
5. अनिर्देशीय परामर्श मूल रूप से ----------है।

15.5 समूह परामर्श

व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी है,अतः वह अपने जीवन काल में किसी न किसी प्रकार के समूह के संपर्क में रहता है। समूह परामर्श में एक छोटे समूह के सदस्य सम्मिलित होते हैं जो अपने विशिष्ट लक्ष्यों को लेकर एकत्रित होते हैं,आपस में अपनी समस्याओं को बाँटते हैं,एक दूसरे को सहारा देते हैं और अपने व्यवहार के परिवर्तन हेतु व अंतवैयक्तिक समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी कौशलों के विकास करने में सहायता प्राप्त करते हैं ।

मनोवैज्ञानिक कैम्प ने अपनी पुस्तक "सामूहिक परामर्श के आधार"में लिखा है कि "व्यक्ति को जीवन के सभी क्षेत्रों में अर्थपूर्ण संबंधों की आवश्यकता होती है। इन्हीं संबंधों के आधार पर बहुतों को जीवन में उद्देश्य व महत्व से सम्बंधित ज्ञान प्राप्त होता है। अतः सामूहिक परामर्श में रूचि व संबंधों का प्रयोग अधिक होने लगा है" । समूह परामर्श में समूह को सार्थक अनुभव प्रदान किए जाते हैं जिससे बालक सामूहिक व्यवहार में दक्ष हो सके। समूह परामर्श एक प्रक्रिया है जिसमें एक परामर्श अब एक ही समय में कई प्रार्थियो के साथ कार्यरत रहता है।

हिल एवं लकी ने लिखा है- ''समूह-परामर्श के माध्यम से अत्यन्त वैयक्तिक ढंग का अधिगम अनुभव प्राप्त होते हैं।'' कोहन के अनुसार- ''समूह परामर्श छोटे समूह के अन्तर्गत अन्त:किया पर आधारित अपेक्षाकृत अधिक गहन एवं वैयक्तिक तरीके से सम्पन्न होता है। जबकि समूह-निर्देशन की कियाओं में अधिकांश बालक मात्र दर्शक होते हैं। लेकिन इससे सीखने में तत्पर होते हैं। इनमें परस्पर सम्बन्ध परिवार के समान रहता है, जिसमें समस्त सूचनायें प्रकट नहीं होती हैं और व्यक्ति अपनी गम्भीर शंकाओं को भी अभिव्यक्ति करने हेतु स्वतंत्र होता है। इस मामले में व्यक्ति अपनी गहनतम शंकाओं को भी अभिव्यक्त करने का अवसर देते हैं। इस मामले में वैयक्तिक अन्तर्भाविता अत्यन्त महत्वपूर्ण बन जाती है।''

राबर्ट नैप के अनुसार-"समूह परामर्श में समूह को सार्थक अनुभव प्रदान किए जाते हैं, जिससे बालक सामूहिक व्यवहार में दक्ष हो सके।''

स्टोन के अनुसार "समूह परामर्श एक प्रक्रिया है, जिसमें एक परामर्शदाता एक ही समय में कई परामर्श प्रार्थियों के साथ कार्यरत रहता है।''

15.5.1 समूह परामर्श के उद्देश्य

मनोवैज्ञानिक सुरक्षा- किशोरों में समूह सहभागिता की भावना को विकसित करना। परामर्श प्रार्थी की आवश्यकताओं की पूर्ति विभिन्न क्रियाओं द्वारा सम्पन्न होती है, जैसे- स्वीकृतता, अंतर्क्रिया, सम्बंधन आदि। इन सभी सामूहिक क्रियाओं के द्वारा परामर्शप्रार्थी में दूसरों के साथ कार्य करने की प्रवृत्ति विकसित होती है।

आत्मविश्वास का विकास- समूह में स्वतंत्र रूप में कार्य करने से प्रार्थी में आत्मविश्वास का विकास होता है। वैलर्स(Walers) के अनुसार "समूह के सदस्य आपस में इस बात पर विचार विमर्श करते हैं, कि उनकी परेशानियाँ क्या हैं? व इनसे कैसे मुक्त हो सकते हैं? प्रभावी समूह परामर्श, प्रार्थी व्यक्ति को उसकी समस्याएं समझने में तथा उनके समाधान करने के कौशल विकसित करने में सहायक होता है।

अभिव्यक्ति प्रशिक्षण- समूह में कार्य करने से परामर्श प्रार्थी को समूह के सदस्यों तथा परामर्शदाता से सम्प्रेषण का कौशल विकसित होता है।

परामर्शदाताओं एवं अध्यापकों को, विद्यार्थी के व्यक्तित्व से सम्बंधित विभिन्न पक्षों को स्पष्ट करने की दृष्टि से- छात्र की व्यक्तित्व से सम्बंधित अनेक विशेषताएं,अपने सम समूहों में अन्तः क्रिया के अंतर्गत सामने आती हैं। अध्यापक एवं परामर्शदाता, समूह परामर्श की प्रक्रिया के अंतर्गत छात्र के व्यक्तित्व के गुणों को सहजता से अवलोकन कर सकते हैं।

नॉरिस एवं जेरन के अनुसार समूह के निम्न उद्देश्य हैं-

1. सामान्य प्रकृति की समस्याओं को ज्ञात करना।
2. समूह स्थिति के सहयोगी व सहायक मूल्यों को ज्ञात करना।
3. परामर्श व अन्य निर्देशन सेवाओं की उपलब्धता तथा आवश्यकता हेतु जागरूकता पैदा करना।
4. विद्यार्थियों को जीवन के विविध सामान्य व विशिष्ट क्रिया पक्षों से अवगत कराना।
5. विद्यार्थियों को विभिन्न शैक्षिक एवं व्यवसाय तथा सामाजिक क्रिया हेतु उनका वास्तविक मूल्यांकन करने हेतु सहायता देना।
6. व्यक्तिगत परामर्श के इच्छुक विद्यार्थियों का पता लगाना।
7. सभी विद्यार्थियों को ज्ञान की नई दिशा दिखाना अर्थात जो बातें विस्मृत कर चुके हैं। उन्हें थोड़ा समय लगा कर सामूहिक ढंग से विद्यार्थियों को पुनः ताजा करना।
8. किन्हीं विशेष प्रकार की सूचनाओं को समूह में अधिक प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करना।
9. रचनात्मक अभिवृत्तियों व रुचियों का विकास करना।
10. समूह के सभी व्यक्तियों के अनुभवों को समूह के प्रत्येक सदस्य के लाभार्थ संकलित करना।

15.5.2 समूह परामर्श की प्रक्रिया

(1) समूह-परामर्श की प्रक्रिया - समूह-परामर्श के लिए परामर्शप्रार्थी के लक्ष्य की जानकारी आवश्यक है और लक्ष्य तक पहुँचाने के लिए समूह के अन्य सदस्यों के सहयोग की अपेक्षा होती है। इसके लिए निम्न प्रक्रिया का अनुसरण किया जाता है। कोहन के अनुसार- ''समूह परामर्श छोटे समूह

के अन्तर्गत अन्त:किया पर आधारित अपेक्षाकृत अधिक गहन एवं वैयक्तिक तरीके से सम्पन्न होता है। जबकि समूह-निर्देशन की कियाओं में अधिकांश बालक मात्र दर्शक होते हैं। लेकिन इससे सीखने में तत्पर होते हैं। इनमें परस्पर सम्बन्ध परिवार के समान रहता है, जिसमें समस्त सूचनाएं प्रकट नहीं होती हैं और व्यक्ति अपनी गम्भीर शंकाओं को भी अभिव्यक्त करने हेतु स्वतंत्र होता है। इस मामले में व्यक्ति अपनी गहनतम शंकाओं को भी अभिव्यक्त करने का अवसर देते हैं। इस मामले में वैयक्तिक अन्तर्भाविता अत्यन्त महत्वपूर्ण बन जाती है।''

1. **प्रत्येक सदस्य के लक्ष्य का ज्ञान प्राप्त करना-** समूह-परामर्शक तभी सफल हो पाता है जब उसे सेवार्थी के उद्देश्यों की पूरी जानकारी हो।
2. **संगठन का निर्णय-**अपनी परामर्श-योजना में यदि परामर्शक सगंठन द्वारा लिये गये निर्णयों को ध्यान में रखकर परामर्श देता है तो सामूहिक परामर्श अधिक प्रभावकारी होता है।
3. **समूह का गठन-**व्यक्ति के लक्ष्य और व्यक्ति के स्वभाव को ध्यान में रखकर ही समूह के प्रत्येक सदस्य को अधिक लाभ पहुँचाया जा सकता है।
4. **परामर्श का आरम्भ-**समूह -परामर्श को आरम्भ करते समय परामर्शदाता को अपनी तथा अन्य सदस्यों की भूमिका स्पष्ट करनी चाहिए। यदि समूह के सभी सदस्य परामर्श में सहयोग दें तो परामर्शक का कार्य अधिक सुगम हो सकता है।
5. **सम्बन्धों का निर्माण-** सामूहिक परामर्श की प्रक्रिया में जैसे-जैसे परामर्श का कार्य आगे बढ़ता है, सम्भावना रहती है, कि परामर्शप्रार्थी अपने लक्ष्य से भटक जाए। अत: परामर्शदाता का यह दायित्व बनता है कि वह अपनी निष्पक्षता का परिचय देते हुए अपने प्रति प्रत्याशी में विश्वास जगाए और उसे उसके लक्ष्यों का निरन्तर स्मरण दिलाता रहे।
6. **मूल्यांकन-**परामर्श के प्रभाव का मूल्याकंन अन्तिम सोपान है। परामर्शदाता को अपने प्रभाव का मूल्यांकन करते रहना चाहिए ताकि वह जान सके कि उसके परामर्श का क्या प्रतिफल रहा है।

15.5.3 समूह परामर्श प्रक्रिया के नियम

1. समूह परामर्श में दूसरों की बातों को धैर्यपूर्वक सुनना।
2. विषय पर ध्यान केन्द्रित कर वार्ता करनी है ।
3. समूह के सभी सदस्यों पर विश्वास रखना।

4. समूह में सहायता करने हेतु ऐसा एहसास करना कि स्वयं की समस्या भी दूसरों की तरह है ।
5. समूह परामर्श की प्रक्रिया में अपने विचारों को खुलकर प्रकट करना ।
6. अपनी समस्या को यथार्थ रूप में देखने का प्रयास करना ।
7. समूह परामर्श सहयोगात्मक प्रक्रिया है ,इसलिए हमें एक -दूसरे की समस्याओं का मिलजुलकर समाधान खोजने का प्रयास करना ।

उपर्युक्त के आधार पर कहा जा सकता है कि समूह परामर्श की प्रक्रिया में परामर्शदाता की सूझ ,समूह व्यवस्था से सम्बंधित योग्यता एवं कुशलता तथा समूह को उचित नेतृत्व करने की क्षमता अत्यंत उपयोगी एवं महत्वपूर्ण होती है ।

15.5.4 समूह परामर्श के लाभ और सीमाएं

- यह अपेक्षाकृत कम खर्चीला है क्योंकी समूह परामर्श में एक साथ कई व्यक्तियों को परामर्शदाता द्वारा लाभान्वित किया जा सकता है । इससे समय की भी बचत होती है
- इसमें अच्छे मानवीय सम्बन्ध स्थापित करने और समूह में निर्णय लेन की भावना का विकास होता है
- समूह में कार्य करने से व्यक्ति को वास्तविक जीवन में कार्य करने का अनुभव प्राप्त होता है ।
- समूह में कार्य करने से व्यक्ति में आत्मविश्वास बढ़ता है ।
- सामूहिक रूप से कार्य करने से सहयोगात्मक प्रवृत्ति विकसित होती है ।

सीमाएं

- समूह परामर्श में अत्यंत व्यक्तिगत एवं निजी समस्याओं को उजागर नहीं किया जा सकता है ।
- समूह परामर्श के दौरान स्थिति को नियंत्रित करना परामर्शदाता के लिए अत्यंत कठिन कार्य है ।

- समूह परामर्श प्रत्येक व्यक्ति के लिए उपयुक्त नहीं है। कुछ व्यक्ति समूह में झिझक एवं भय महसूस करते हैं कुछ व्यक्तियों में सहनशीलता का स्तर अत्यंत निम्न होता है। वो समूह के अनुसार अपने व्यवहार को परिवर्तित नहीं कर पाते हैं।
- समूह का कोई भी सदस्य बिना पूर्व सूचना के या कोई भी वैध कारण दिए समूह को छोड़ नहीं सकता है।

15.6 व्यक्तिगत परामर्श

व्यक्तिगत परामर्श, परामर्श की एक प्रविधि है जिसमें व्यक्ति विशेष को उसकी समस्याओं या भावनाओं को बहुत निकटता से सुना व समझा जाता है। व्यक्तिगत परामर्श का मानव जीवन में अधिक महत्व है। शिक्षा के उपरान्त व्यक्तिगत परामर्श ही ऐसी प्रक्रिया है जो व्यक्ति के विकास एवं प्रगति हेतु सर्वाधिक सहायक होती है। यह व्यक्तियों को जिम्मेदारियों को लेने के लिए और अपने निर्णय लेने की अनुमति देकर एक अधिक परिपक्वता के लिए विकसित करने के लिए मदद करता है। परामर्श व्यक्ति के मार्गदर्शन की एक विधि है। परामर्श किसी भी प्रकार की आवश्यकता पर व्यक्तिगत रूप में ही दिया जाता है। व्यक्तिगत परामर्श में व्यक्ति की समंजन क्षमता बढ़ाने उसकी निजी समस्याओं का हल ढूढ़ने तथा आत्मबोध की क्षमता उत्पन्न हेतु दी जाने वाली सहायता होती है।

यह कहना सर्वथा गलत न होगा कि वैयक्तिक परामर्श में व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, सांवेगिक, शैक्षिक, व्यावसायिक जीवन से सम्बन्धित समस्याओं को समझना व उनका हल प्राप्त करने की दक्षता विकसित की जाती है। वैयक्तिक परामर्श की आवश्यकता मुख्य रूप से किशोरावस्था से ही मूल रूप में प्रारम्भ होती है।

15.6.1 ब्यक्तिगत परामर्श के उद्देश्य-

व्यक्तिगत परामर्श के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

1. व्यक्ति को अपने आसपास के वातावरण की सम्भावनाओं को सही तरीके से समझने के योग्य बनाना।
2. व्यक्ति को अपने परिवार, समुदाय, विद्यालय एवं व्यवसाय सम्बन्धी सामन्जस्य की व्यक्तिगत समस्याओं को हल करने में सहयोग देना।

3. व्यक्ति में सामंजस्य स्थापित करने की क्षमता विकसित करना।
4. व्यक्ति को अपनी क्षमताओं एवं अभियोग्यता को समझने में सहयोग देना।
5. व्यक्ति द्वारा लिए जाने वाले व्यक्तिगत निर्णयों को लेने हेतु उचित इच्छाशक्ति विकसित करने में सहयोग देना।
6. व्यक्ति को अपने जीवन को सही दिशा देने हेतु क्षमता विकसित करने में सहयोग देना।
7. अपने जीवन की विविध परिस्थितियों को समझने व उसी के अनुकूल अपेक्षित सूझबूझ विकसित करने में सहयोग करना।
8. व्यक्तिगत परामर्श का मुख्य उद्देश्य व्यक्तिगत सामंजस्य एवं व्यक्तिगत कुशलता विकसित करना है।

15.6.2 व्यक्तिगत परामर्श के प्रकार

व्यक्ति की निजी व संवेगात्मक समस्याओं के समाधान हेतु जो व्यक्तिगत परामर्श दिया जाता है उसके निम्नलिखित प्रकार हैं।

संकटकालीन परामर्श (crisis counseling)- व्यक्ति के जीवन में अनेक समस्याएं आती हैं। रोजगार, व्यवसाय व पारिवारिक संघर्ष तथा परीक्षा में असफलता आदि जब ये समस्याएं गंभीर रूप ले लेती हैं, तो वह व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करती हैं इस स्थति में परामर्शदाता परामर्श प्रदान कर उसे परिस्थितियों से सामंजस्य स्थापित करने में मदद करता है।

सुसाध्यकारी परामर्श (facilitative Counseling)- कभी-कभी व्यक्ति से जीवन में कोई न कोई भूल हो जाती है यह भूल कभी- कभी अवांछित व्यवहारों से सम्बंधित हो सकती है ।इससे व्यक्ति मन ही मन घुटता रहता है। इस प्रकार का व्यवहार ठीक करने हेतु परामर्शदाता उपचारी तथा समायोजनात्मक परामर्श प्रदान करता है। जिसकी सहायता से आत्मबोध द्वारा व्यक्ति स्वयं कार्य योजना बनाता है और उस पर कार्य करते हैं।

विकासात्मक परामर्श- विकासात्मक परामर्श व्यक्ति को उसके विकास की विभिन्न अवस्थाओं में उसकी अभिवृत्तियों ,जीवन मूल्यों ,नैतिक व्यवहारों,आदि का विकास करना

है इसके अंतर्गत परामर्शदाता व्यक्ति के भविष्य के व्यवहार के लिए उद्देश्यों का विन्यास करने में तथा उसकी योग्यताओं व क्षमताओं के उपयोग करने की विधियों का विकास करने और उन्हें स्पष्ट करने में सहायता देता है।

15.6.3 व्यक्तिगत परामर्श के लाभ एवं सीमाएं

- इसमें परामर्शदाता को केवल एक व्यक्ति को सहायता देनी होती है। जिससे परामर्शप्रार्थी अधिक अवधान प्राप्त करता है।
- परामर्शदाता, परामर्शप्रार्थी के विचारों ,व्यवहार को अधिक अच्छी तरह से समझ पाता है।
- इसमें निजी व अधिक संवेदनशील समस्याओं का समाधान हो पाता है।
- इसमें परामर्शदाता को सूचना प्राप्त करने में आसानी होती है

सीमाएं

- इसमें संसाधन, समय एवं शक्ति का अधिक व्यय होता है।
- इसमें परामर्शप्रार्थी के बहुत सारे सामाजिक एवं मानवीय गुणों का विकास नहीं हो पाता है।
- इसमें व्यक्ति बहुत सारे अधिगम अनुभवों को प्राप्त करने से वंचित रह जाता है।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

6. प्रत्येक परामर्शदाता को अपनी प्रक्रिया का ---------- होना चाहिए।
7. ----------परामर्श में संसाधन, समय एवं शक्ति का अधिक व्यय होता है।
8. सामूहिक रूप से कार्य करने से ---------- विकसित होती है।

15.7 समायोजन हेतु परामर्श

परामर्श एक धीमी एवं निरन्तर प्रक्रिया है बालक को उचित समायोजन प्राप्त करने में पर्याप्त समय लगता है। वह किसी भी समस्या का तुरन्त समाधान नहीं कर सकता। बालक

एक दिन में समायोजन प्राप्त नहीं कर सकता है। इसलिए परामर्श एक निरन्तर प्रक्रिया है क्योंकि बालक को जीवन में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

"एल. एस शेफर के अनुसार समायोजन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा कोई जीवधारी अपनी आवश्यकताओं तथा इन आवश्यकताओं की संतुष्टि से सम्बंधित परिस्थितियों में संतुलन बनाए रखता है"।

वोनहेलर के अनुसार-" हम समायोजन शब्द का अपने आपको मनोवैज्ञानिक रूप से जीवित रखने के लिए वैसे ही प्रयोग में ला सकते हैं, जैसे कि जीवशास्त्री अनुकूलन शब्द का प्रयोग किसी जीव को शारीरिक या भौतिक दृष्टि से जीवित रखने के लिए करते हैं"।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि

- समायोजन आवश्यकता एवं संतुष्टि के मध्य संतुलन बनाए रखने की कला है।
- समायोजन परिस्थिति के अनुसार अपने व्यवहार को निर्देशित करने की प्रक्रिया है।
- व्यक्ति में जितनी अधिक समायोजन क्षमता होगी वह मनोवैज्ञानिक रूप से उतना ही अधिक स्वस्थ एवं सबल होगा।

आधुनिक समय में विद्यार्थी समायोजन हेतु परामर्श लेता है।निर्देशन और परामर्श द्वारा विद्यार्थी को एक सुनिश्चित मार्ग मिल जाता है और मानसिक संघर्ष भी दूर हो जाता है।

15.7.1 समायोजन की आवश्यकता

व्यक्ति को जीवन के अलग -अलग क्षेत्रों में समायोजन की आवश्यकता होती है। व्यक्ति द्वारा बार-बार प्रयास किए जाने पर भी जब वह पूर्व निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर पाता है तब वह लक्ष्य को परिवर्तित कर तथा दूसरे लक्ष्य का निर्धारण कर जीवन क्षेत्र में आगे बढ़ने का प्रयास प्रारम्भ कर देता है। इसप्रकार परिस्थिति के अनुसार अपने व्यवहार को निर्देशित करने की कला को समायोजन कहते हैं।

1. **शैक्षिक विकास हेतु-**व्यक्ति को शैक्षिक विकास हेतु शिक्षकों से सहपाठियों एवं पाठ्यक्रम आदि के साथ समायोजन बनाने की आवश्यकता होती है ।
2. **आकर्षक व्यक्तित्व के विकास हेतु -**एक सुसमायोजित व्यक्ति ही आकर्षक एवं प्रभावशाली व्यक्तित्व का स्वामी होता है
3. **व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु** – मनुष्य के व्यक्तिगत आवश्यक्ताओं में शारीरिक आवश्यकताएं (भूख, प्यास, नींद, विश्राम आदि), भौतिक आवश्यकताएं (सुख, सुविधा पहुंचाने वाले वस्तु), सामाजिक व मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएं (स्नेह व प्यार पाने और देने, आदर व सम्मान प्राप्त करने आदि संबंधी) आती हैं। इन सभी प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्त्ति के मध्य संतुलन बनाकर रखे। इसके लिए उसे समायोजित होना आवश्यक है।
4. **व्यावसायिक जीवन के विकास हेतु-**व्यावसायिक विकास के लिए व्यक्ति को अपने कार्यस्थल पर अपने सहयोगियों ,कार्यपरिस्थितियों ,वेतन ,समय आदि के साथ समायोजन होना आवश्यक है कार्य से संतुष्टि व सहयोगियों के साथ मधुर समबन्ध होना जरूरी है ।
5. **सामाजिक जीवन को समृद्ध बनाने हेतु**- व्यक्ति को अपने परिवार तथा समाज के साथ सुखी एवं मधुर सम्बन्ध बनाने के लिए समायोजन का होना आवश्यक है सुखी एवं सफल जीवन जीने के लिए समायोजन का होना आवश्यक है

15.7.2 समायोजन के लिए परामर्श की भूमिका

कोई भी व्यक्ति समायोजित रहता है जब तक की उसकी मूलभूत आवश्यकताओं की उसकी अपनी दृष्टि से पूर्ति होती रहे अथवा उसे उनके पूरे होने की आशा बनी रहे। जैसे ही उसे यह आभास होने लगता है कि उसकी इन आवश्यकताओं की पूर्ति में बाधा आ रही है वह निराश होकर कुसमायोजन का शिकार बन जाता है। एक कुसमायोजित व्यक्ति विभिन्न प्रकार की व्यवहार तथा समायोजन संबंधी समस्याओं से ग्रस्त होकर अपने तथा दूसरों के विकास या प्रगति में बाधा बनने लगता है।

लेकिन कभी-कभी व्यक्ति इसे समझ नहीं पाते हैं और घबरा जाते हैं। अतः आवश्यकता होती है कि व्यक्ति में परिस्थितियों का सामना करने के लिए आवश्यक

सहायक समझ विकसित की जानी चाहिए ताकि वे समस्याओं का सामना कर उनका उचित समाधान ढूंढते हुए वे ठीक प्रकार से समायोजित रह सकें। अतः व्यक्ति में समायोजन की क्षमता के विकास हेतु आवश्यक सहायता प्रदान करने के लिए शैक्षिक, व्यक्तिगत तथा व्यावसायिक परामर्श की व्यवस्था की जानी चाहिए।

1. छात्रों को उनकी योग्यताओं, अभिक्षमताओं, अभिरूचियों, कमियों के बारे में अधिक जानकारी प्रदान करके उन्हें स्वयं को समझने में सहायता प्रदान करता है।
2. छात्रों को उनकी आवश्यकताओं व योग्यताओं के अनुसार सर्वाधिक उपयुक्त पाठ्यक्रमों का चयन करने में सहायता प्रदान करता है।
3. छात्रों में वांछनीय अभिवृत्तियों व व्यवहार-विन्यासों को विकसित करने में सहायता प्रदान करता है।
4. अन्य लोगों से बेहतर संबंध बनाने में व उस परिवेश जिसमें वे रहते हैं, को समझने में सहायता करता है।
5. प्रतिभाशाली, मंदबुद्धि तथा विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों की पहचान करने व उनमें उचित समायोजन की क्षमता का विकास करने में सहायता करता है।
6. परामर्शदाता व्यक्ति को उनके योग्यता, रूचि, क्षमता के अनुसार उपयुक्त रोजगार के चयन में सहायता करता है।
7. व्यावसायिक साथियों, अधिकारियों के साथ सुदृढ़ व मधुर संबंधों के निर्माण में व्यक्ति की सहायता करता है।
8. व्यक्ति को उसकी शक्तियों व कमजोरियों का ज्ञान प्रदान करने में सहायता प्रदान करता है।
9. व्यक्ति को दिन-ब-दिन बदलती परिस्थितियों व नवीन परिवर्तनों से परिचित करवाने व उसके अनुसार स्वयं को बदलने में सहायता प्रदान करता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि परामर्श व्यक्ति में उत्तम समायोजन की क्षमता को विकसित करने हेतु सहायता प्रदान करने की प्रक्रिया है। परामर्शदाता व्यक्ति को व्यक्तिगत कमियों का उपचार करने, जीवन की यर्थाथता को पहचानने व उनके अनुकुल व्यवहार को निर्देशित करने हेतु सहायता प्रदान करता है।

15.8 अच्छे परामर्श के लक्षण

विशिष्ट एवं सुनिश्चित परिस्थितियों में ही परामर्श प्रदान किया जाता है तथा इसके लिए परामर्श देने वाले व्यक्ति में विभिन्न प्रकार की योग्यताओं एवं कौशलों का होना आवश्यक होता है। पूर्णतया प्रशिक्षित, व्यवसाय के प्रति निष्ठावान व्यक्ति ही इस प्रक्रिया को सम्पन्न कर सकता है परामर्शदाता ,परामर्श प्रार्थी में अपना विश्वास उत्पन्न करके उसे सहज और नि:संकोच रूप में अपनी बात कह देने के लिए प्रेरित कर देना ही स्वयं में एक ऐसी योग्यता है जिसका विकास सहज ही सम्भव नहीं है। अतः परामर्श दाता में ऐसी योग्यता होनी चाहिए की परामर्श प्रार्थी अपनी बातों को बिना झिझक के कह सके कोई भी बात न छुपाए। परामर्श की प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने में दो व्यक्तियों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। परामर्शदाता एवं परामर्शप्रार्थी इसलिए अच्छे परामर्श हेतु परामर्श दाता एवं परामर्श प्रार्थी में निम्नलिखित गुणों का होना आवश्यक है।

15.8.1 परामर्शदाता के गुण

- परामर्शदाता में अच्छे पारस्परिक सम्बन्धों को विकसित करने का गुण होना आवश्यक है। दूसरों की आवश्यकताओं का ध्यान रखना, अपनी विचारधारा की अपेक्षा दूसरों के दृष्टिकोण के प्रति सहिष्णुता रखना, व्यक्तियों को समझना एवं स्वीकार करना, सामाजिक संवेदनशीलता, ईमानदारी, निष्ठा, व्यक्तियों से मिलने-जुलने की योग्यता व्यक्तियों में रूचि रखना, पारस्परिक सम्बन्धों में सौहार्द्र इत्यादि।
- दूसरे व्यक्तियों को प्रभावित करने तथा नेतृत्व करने की योग्यता। अन्य व्यक्तियों की सहायता करना तथा सहयोग देना।
- स्वस्थ्य जीवन-दर्शन, नागरिकता का भाव, समावेश तथा मान्य मूल्य व्यवस्था, उत्तम आचरण, रूचियाँ एवं सौन्दर्य बोध, तथा मानव प्रकृति में आस्था होनी चाहिए।
- एक अच्छे परामर्शदाता को धैर्यवान होना चाहिए। परामर्श प्रार्थी से पूरी सूचना प्राप्त करने से लेकर स्वयं द्वारा प्रदान की गई सूचनाओं को परामर्श प्रार्थी द्वारा स्पष्ट रूप से समझ लेने तक परामर्शदाता को अत्यंत धैर्यता का परिचय देना चाहिए।
- एक अच्छे परामर्शदाता में व्यक्तियों की सहायता करने में रूचि व तत्परता होनी चाहिए।

- अच्छे परामर्शदाता को सुसमायोजित व्यक्ति होना चाहिए। उसका संवेगात्मक व्यवहार संतुलित होना चाहिए। अलग-अलग परिस्थितियों के अनुसार उसे अपने स्वभाव तथा कार्यशैली में परिवर्तन लाने की पर्याप्त क्षमता होनी चाहिए।
- एक अच्छे परामर्शदाता को परामर्शप्रार्थी के कथनों, भावनाओं व व्यवहार को बिना अच्छा या बुरा मूल्यांकित किए स्वीकार करना चाहिए।
- परामर्शदाता में नैतिकता का भी समावेश होना आवश्यक है, जिससे कि वह परामर्शप्रार्थी द्वारा दी गई सूचनाओं को बिना उसकी सहमति के किसी को न बताए।
- परामर्शदाता को विशिष्ट तकनीकों को प्रयुक्त करने में कुशल होना चाहिए जैसे-साक्षात्कार की तकनीक, नियोजन या स्थानापन की तकनीक। इन तकनीकों के अलावा परामर्शदाता को व्यावसायिक सूचनाएं संग्रहीत करने तथा उनके विवरण व मापन परीक्षण की जानकारी होनी भी आवश्यक है।

15.8.2 परामर्शप्रार्थी के गुण

- परामर्श प्रार्थी की प्रवृत्ति सहयोगात्मक होनी चाहिए।
- परामर्श हेतु उसमें रूचि एवं तत्परता होनी चाहिए।
- परामर्श प्रार्थी ,परामर्शदाता के विचारों को ध्यान पूर्वक सुने, जिससे की वह अपनी बातों को अभिव्यक्त कर सके।
- परामर्शदाता के द्वारा दिए गए सुझावों के प्रति स्वीकारोक्ति रखे।
- परामर्श प्रार्थी का व्यवहार अनुशासित हो।

स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

9. समायोजन परिस्थिति के अनुसार अपने ---------को निर्देशित करने की प्रक्रिया है।
10. अच्छे परामर्शदाता को ----------व्यक्ति होना चाहिए।
11. व्यक्ति में समायोजन की क्षमता के विकास हेतु अच्छे ---------की व्यवस्था होनी चाहिए।

15.9 सारांश

प्रस्तुत इकाई में आपने परामर्श का अर्थ ,उसके प्रकार एवं सामूहिक परामर्श तथा व्यक्तिगत परामर्श को जाना। वर्तमान समय में परामर्श की आवश्यकता लगभग सभी क्षेत्रों में आवश्यक हो गई है चाहे वो पारिवारिक हो, शैक्षिक हो अथवा व्यावसायिक हो अतः इसके लिए कुशल एवं विशेषज्ञ परामर्शदाताओं के द्वारा परामर्श दिया जाता है। जिससे की परामर्शदाता अपनी समस्याओं का समाधान पाकर स्वयं निर्णय ले सके। प्रस्तुत इकाई में आपने व्यक्तिगत परामर्श एवं समूह परामर्श को जाना व्यक्तिगत परामर्श में व्यक्ति को उसकी व्यक्तिगत समस्याओं के लिए व्यक्तिगत रूप से परामर्श दिया जाता है। जबकि सामूहिक परामर्श में व्यक्ति समूह में परामर्शदाता के साथ रहकर अपनी समस्याओं का समाधान प्राप्त करते हैं।

व्यक्ति के सर्वांगीण विकास हेतु समायोजन एक अनिवार्य प्रक्रिया है। परामर्श व्यक्ति को जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में बेहतर ढंग से समायोजन करने में सहायता प्रदान करती है व्यक्ति के सर्वांगीण विकास हेतु समायोजन एक अनिवार्य प्रक्रिया है। परामर्श व्यक्ति को जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में बेहतर ढंग से समायोजन करने में सहायता प्रदान करती है। अच्छे परामर्श हेतु परामर्श दाता तथा परामर्श प्रार्थी में कुछ विशिष्ट गुणों का होना अनिवार्य होता है । इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप प्रभावशाली परामर्श हेतु परामर्श दाता एवं परामर्श प्रार्थी की भूमिका को व्यक्त कर सकेंगे ।

15.10 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. ई.जी विलियमसन 2. परामर्शदाता 3. पारस्परिक सम्बन्ध 4. रूथ स्ट्रांग 5. प्रार्थी-केन्द्रित 6. पूर्व ज्ञान 7. व्यक्तिगत परामर्श 8. सहयोगात्मक प्रवृत्ति 9. व्यवहार 10. सुसमायोजित 11. परामर्श

15.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. https://www.scotbuzz.org/2019/07/paramarsh-sevaen.html
2. https://www.scotbuzz.org/2019/07/samoohik-paramarsh.html
3. https://social-work.in/samayojan-ka-arth/

4. Tiwari Ramakant. (2009) Guidance and Counselling Kunal books Dariyaganj New Delhi
5. सक्सेना.राधारानी.(2009) शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर
6. शर्मा . आर.ए .(2011) शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन तथा परामर्श आर.लाल.बुक डिपो मेरठ

15.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. परामर्श का अर्थ एवं परिभाषाएँ लिखिए विद्यार्थी के लिए परामर्श की उपयोगिता का वर्णन कीजिए।
2. समूह परामर्श से आप क्या समझते हैं ? इसके उद्देश्य एवं महत्व का वर्णन कीजिए।
3. समायोजन का अर्थ स्पष्ट करते हुए समायोजन हेतु परामर्श की भूमिका की व्याख्या कीजिए।
4. व्यक्तिगत परामर्श क्या होता है ?इसकी लाभ एवं सीमाएं लिखिए।
5. अच्छे परामर्श के लिए परामर्शदाता में किन गुणों का होना आवश्यक है ?व्याख्या कीजिए।
6. स्वरुप के आधार पर परामर्श के प्रकारों का वर्णन कीजिए।

इकाई -16

निर्देशन के उपकरण और तकनीक, निर्देशन और परामर्श में परीक्षण के उपयोग (Tools and techniques of Guidance, use of test in guidance and Counselling)

16.1 प्रस्तावना

16.2 उद्देश्य

16.3 निर्देशन एवं परामर्श

16.4 निर्देशन के उपकरण

16.5 निर्देशन की प्रविधियां (अप्रमापीकृत)

1. 16.5.1 प्रश्नावली
2. 16.5.2 अनुसूची
3. 16.5.3 अवलोकन
4. 16.5.4 साक्षात्कार
5. 16.5.5 आत्मकथा
6. 16.5.6 रेटिंग स्केल
7. 16.5.7 समाजमिति
8. 16.5.8 केस स्टडी
9. 16.5.9 संचयी रिकार्ड

16.6 निर्देशन की प्रविधियां (प्रमापीकृत)

1. 16.6.1 उपलब्धि परिक्षण
2. 16.6.2अभिरुचि परिक्षण
3. 16.6.3 व्यक्तित्व परिक्षण

16.7 निर्देशन और परामर्श में 'परीक्षण' के उपयोग

16.8 सारांश

16.9 शब्दावली

16.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

16.11 अभ्यास प्रश्न

16.1 प्रस्तावना (Introduction)

मनुष्य जन्म से ही बहुत से गुणों से परिपूर्ण होता है, उसे आनुवंशिक गुण स्वत: ही अपने माता-पिता से प्राप्त हो जाते हैं और वह अपनी सभी ज्ञानेन्द्रियों से ज्ञान प्राप्त करने में सक्षम होता है, उसमे शारीरिक वृद्दि तो स्वत: ही हो जाती है। परन्तु मनुष्य के सतत विकास के लिए उसे अच्छी शिक्षा एवं मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है। प्रत्येक विद्यार्थी में कोई न कोई प्रतिभा अवश्य होती है परन्तु उसकी इस प्रतिभा का सही समय पर पता लगाने के लिए उसे प्रशिक्षित शिक्षक एवं शिक्षित माता एवं पिता के मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है। बालक के मानवीव विकास के लिए उसको समय-समय पर उचित मार्गदर्शन एवं निर्देशन की आवशयकता होती है। जो उसे उसके माता-पिता अथवा शिक्षक द्वारा प्रदान की जा सकती है। और इस निर्देशन के द्वारा ही मानव जीवन की गुणवत्ता का विकास किया जा सकता है। निर्देशन मानव एवं मानव सभ्यता को विकसित करने के लिए शिक्षाविदों द्वारा किये गये नियोजित साधनों में से एक है। एक शिक्षक अपने विद्यार्थियों को शिक्षित तो करता ही है साथ ही वह उन्हें कौशल विकास, मानवीय संवेदना, सांस्कृतिक एवं सामाजिक मूल्य एवं उचित दृष्टिकोण भी प्रदान करता है। उचित निर्देशन के माध्यम से किशोरों को उचित व्यवसाय चुनने में सहायता मिलती है जो कि विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक निर्देशनों के द्वारा विद्यार्थियों को दिया जाता है। निर्देशन एक प्रकार की सहायता है जो बालकों को उनकी बौद्दिक क्षमताओं, रुचियों, योग्यताओं तथा व्यक्तित्व आदि के विकास हेतु दी जाती हैं।

परामर्श भी निर्देशन सेवाओं के अंतर्गत ही आता है प्राचीन समय में परामर्श का कार्य अपेक्षाकृत सहज था तथा विद्यालय के शिक्षकों एवं समाज के अन्य व्यक्तियों के द्वारा परामर्श प्रदान किया जाता था। वर्तमान में समाज का स्वरूप अत्यंत जटिल हो चुका है और आज समस्याओं का क्षेत्र भी विस्तृत हो गया है जिनका अध्ययन करना एवं समाधान करना भी एक जटिल कार्य हो चुका है। इसी कारण आज इन समस्याओं के समाधान हेतु योग्य एवं कौशल प्राप्त व्यक्तियों की आवश्यकता हो रही है। परामर्श का आशय पूछ-ताछ, पारस्परिक तर्क-वितर्क, अथवा विचारों का आदान प्रदान होता है। परामर्श प्रक्रिया के दौरान सेवार्थी को व्यक्तिगत दृष्टि से सहायता प्रदान की जाती है।

16.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप:

1. निर्देशन को परिभाषित कर पाएंगे।
2. परामर्श के प्रत्यय को समझ पायेंगे।
3. निर्देशन हेतु आवश्यक उपकरणों को समझ पायेंगे।
4. निर्देशन में प्रयुक्त प्रमुख तकनीकों को समझ सकेंगे।
5. निर्देशन में प्रयुक्त अप्रमापिकृत एवं प्रमापिकृत उपकरणों को समझ पायेंगे।
6. निर्देशन एवं परामर्श हेतु प्रयुक्त उपकरणों का उपयोग समझ सकेंगे।

16.3 निर्देशन एवं परामर्श

निर्देशन: निर्देशन एक प्रकार की सहायता है जो कि प्रशिक्षित एवं अधिक अनुभवी व्यक्ति द्वारा कम अनुभवी व्यक्ति को दी जाती है। ऐसा माना जाता है कि मनुष्य की उत्पत्ति के साथ ही निर्देशन भी आरम्भ हो गया था, प्रारम्भ में निर्देशन असंगठित तथा अनौपचारिक रूप से जीवन के सभी स्तरों पर होता रहा है। समय के साथ-साथ संगठित निर्देशन सेवाओं के कारण निर्देशन ने शिक्षा, कला, विज्ञान उद्द्योग सहित अनेकों क्षेत्रों में अपना विस्तार किया है। विभिन्न शिक्षा शास्त्रियों ने निर्देशन को अपने अपने शब्दों में परिभाषित किया है।

जोन्स ने निर्देशन को परिभाषित करते हुए लिखा "निर्देशन इंगित करना, सूचित करना तथा पथ प्रदर्शन करना है"।

शर्ले हैमरिन के अनुसार –" व्यक्ति के स्वयं को पहचानने में इस प्रकार सहयाता प्रदान करना, जिससे वह अपने जीवन में आगे बढ़ सके इस प्रक्रिया को निर्देशन कहा जाता है"।

रूथ स्ट्रांग के अनुसार– निर्देशन का उद्देश्य बालक में विद्यमान संभावनाओं के रूप में अधिकतम विकास को बढ़ावा देना है"।

गुड के अनुसार- " निर्देशन व्यक्ति के दृष्टिकोण तथा उसके बाद के व्यवहार को प्रभावित करने के उद्देश्य से स्थापित गतिशील आपसी संबंधों का एक प्रक्रम है"।

क्रो एवं क्रो अनुसार- " निर्देशन लक्ष्य करना नहीं है। यह अपने विचार दुसरों पर लादना नहीं है। यह उन निर्णयों का जिन्हें एक व्यक्ति को अपने लिए स्वयं लेना चाहिए, निश्चित करना है जो

एक कुशल परामर्शदाता द्वारा किसी भी आयु के व्यक्ति को अपना जीवन निर्देशित करने, अपना दृष्टिकोण विकसित करने, स्वयं निर्णय लेनेतथा उत्तरदायित्व सँभालने के लिए दी जाती है"।

उपरोक्त परिभाषाओं से यह समझा जा सकता है कि मनुष्य जब जन्म लेता है और विकास के पथ पर आगे बढ़ता है तो उसे निर्देशन की आवश्यकता होती है। निर्देशन का लक्ष्य लोगों के जीवन को उद्देश्यपूर्ण बनाना है।

निर्देशन की प्रकृति

निर्देशन की प्रकृति को निम्नलिखित बिन्दुओं के द्वारा समझा जा सकता है-

- ✓ **निर्देशन मानव जीवन से सम्बंधित है** – निर्देशन की सभी प्रकार की सेवाएँ मानव जीवन एवं मानव जीवन के विकास के लिए होती हैं। मानव विकास ही निर्देशन का मुख्य उद्देश्य होता है ।
- ✓ **निर्देशन एक सतत प्रक्रिया है-** निर्देशन का कार्य आदि काल से चला आ रहा है और आगे भी चलता ही रहेगा क्योंकि निर्देशन मानव विकास का कार्य करता है। और जब तक मानव जीवन में विकास की क्षणिक मात्र भी जगह बचेगी तब तक निर्देशन का कार्य चलता रहेगा।
- ✓ **निर्देशन द्वारा वातावरण के साथ समायोजन करने की क्षमता विकसित होती है** – कुशल निर्देशन के द्वारा ही मनुष्य अपने आस-पास के सामजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक वातावरण के साथ समायोजन करने में सक्षम ह पाता है।
- ✓ **निर्देशन की प्रकृति शैक्षिक होती है** –निर्देशन मुख्य रूप में विद्यार्थियों को शिक्षा ग्रहण करने में आने वाली समस्याओं के निराकरण में सहायक होता है। कुशल निर्देशन के द्वारा ही विद्यार्थियों को उनके भावी जीवन के लिए तैयार किया जा सकता है। इसी कारण निर्देशन की प्रकृति को शैक्षिक माना जाता है।
- ✓ **निर्देशन सेवार्थी केन्द्रित प्रक्रिया होती है-** निर्देशन एक प्रकार की सेवा है जो किसी भी विषय विशेषज्ञ के द्वारा उससे सम्बंधित क्षेत्र में विद्यार्थियों को उनकी समस्याओं के निराकरण के लिए दिया जाता है। निर्देशन एक सेवा के रूप में दिया जाता है।
- ✓ **निर्देशन प्रक्रिया के द्वारा व्यक्ति में आत्म निर्देशन का विकास होता है** – कुशल व्यक्ति के द्वारा निर्देशन प्राप्त कर व्यक्ति आत्म निर्भर बनता है और आगे के कार्यों में स्व निर्देशन के द्वारा अपनी समस्याओं का समाधान करता रहता है।

- ✓ **निर्देशन अपने दृष्टिकोण को थोपता नहीं है-** निर्देशन प्राप्त करने वाले व्यक्ति की ईच्छा पर निर्भर करता है की वह निर्देशन देने वाले व्यक्ति के द्वारा दिए गये निर्देशों को स्वीकार करे अथवा न करे उस पर कोई भी बाध्यता नहीं होती है इस प्रकार निर्देशन अपने दृष्टिकोण को निर्देशन प्राप्तकर्ता पर थोपता नहीं है।

  निर्देशन की प्रक्रिया व्यक्ति के भावी जीवन की तैयारी में मदद करती है- निर्देशन प्राप्त करने के बाद व्यक्ति स्वम को भविष्य में स्व निर्देशित करते रहता है और अपनी समस्याओं का समाधान करते हुए आगे बढ़ता रहता है।

निर्देशन के प्रकार

निर्देशन बिभिन्न क्षेत्रो में दिया जाता है। विलियम मार्टिन ने निर्देशन के निम्नलिखित प्रकार बाए हैं-

1- शैक्षिक निर्देशन।
2- व्यावसायिक निर्देशन।
3- सामाजिक एवं नागरिक कार्यों में निर्देशन।
4- स्वास्थ्य और शारीरिक समस्याओं से सम्बंधित निर्देशन।
5- अवकाश के समय का सर्वोत्तम उपयोग का निर्देशन।
6- चरित्र निर्माण कार्यों का निर्देशन।

निर्देशन की विशेषताएं

- निर्देशन एक समस्या केन्द्रित और प्रार्थी केन्द्रित प्रक्रिया है।
- निर्देशन की विधि व्यक्ति और समूह दोनों से सम्बंधित है।
- निर्देशन व्यक्ति के समग्र पहलुओं के विकास से सम्बंधित है।
- निर्देशन विभिन्न क्षेत्रों में समायोजन की क्षमता विकसित करने में सहायक होता है।
- निर्देशन का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति को आत्मनिर्देशन के योग्य बनाना है।
- निर्देशन की प्रकृति बहुपक्षीय है।
- निर्देशन के द्वारा व्यक्ति की तत्काल समस्या के समाधान में मदद करना है।
- निर्देशन में व्यक्तिपरक और वसुनिष्ठ दोनों प्रकार के परीक्षणों का उपयोग किया जा सकता है।

- निर्देशन के आधार पर व्यक्ति और समाज दोनों की प्रगति और विकास के लिए प्रयास किये जाते हैं।

परामर्श (Counselling)

परामर्श एक ऐसी प्रिक्रिया है जिसके आधार पर सेवार्थी को को वैक्तिक दृष्टि से ही सहायता प्रदान की जाती है। किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत समस्याओं एवं कठिनाइयों को दूर करने के लिए दी जाने वाली सहायता, सलाह और मार्गदर्शन परामर्श (counselling) कहलाती है। परामर्श देने वाले व्यक्ति को परामर्शदाता एवं परामर्श प्राप्त करने वाले को परामर्श प्रार्थी कहा जाता है।

राबिन्स के अनुसार – "परामर्श के अंतर्गत उन समस्त परिस्थितियों को सम्मिलित किया जाता है जो वातावरण से समायोजन हेतु अपेक्षित होती है"।

कार्ल रोजर्स के अनुसार "परामर्श एक निर्धारित रूप से स्वीकृत ऐसा समंध है जो परामर्श प्रार्थी को, स्वयं को समझने में पर्याप्त सहायता देता है जिसे वह अपने नवीन ज्ञान के उपयोग से नए निर्णय ले सकें"।

परामर्श की विशेषताएं

1. परामर्श एक प्रक्रिया है।
2. परामर्श मूलत: समस्या परक होता है।
3. यह दो व्यक्तियों के मध्य आपसी वार्तालाप का एक स्वरूप है।
4. परामर्श का मूल परस्पर विस्वास है।
5. मैत्रीपूर्ण अथवा सौहार्दपूर्ण वातावरण में परामर्श अधिक सफल होता है।
6. परामर्शदाता को अपनी प्रक्रिया का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए ।
7. परामर्श सम्पूर्ण निर्देशन प्रक्रिया का एक भाग है।
8. यह व्यक्तियों के व्यवहार सम्बन्धी विशेष विशेष रूप से संवेगात्मक समस्याओं में सहायता करता है।
9. परामर्श का स्वरूप प्रजातान्त्रिक होता है, परामर्श का आधार प्राय: व्यावसायिक होता है।
10. परामर्श एक व्यावसायिक सेवा है।

11. परामर्श एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति की समस्याओं के समाधान हेतु सहायता इस प्रकार करता है जिससे की परामर्श प्रार्थी स्वयं निर्णय लेकर सीखता है।
12. परामर्श की प्रक्रिया में प्रार्थी का उत्तरदायित्व स्वयं को समझना तथा उस मार्ग को सुनिश्चित करना जिस और उसे अग्रसर होना है।

परामर्श के प्रकार

- मनोवैज्ञानिक परामर्श (Psychological Counselling)
- मनोचिकित्सात्मक परामर्श (Psychotherapeutic Counselling)
- नैदानिक परामर्श (Clinical Counselling)
- वैवाहिक परामर्श (Marriage Counselling)
- व्यावसायिक परामर्श (Vocational Counselling)
- विद्यार्थी परामर्श (Student Counselling)
- स्थानापन परामर्श (Placement Counselling)

16.4 निर्देशन के उपकरण: (Tools of Guidance)

निर्देशन व्यक्तिगत एवं सामूहिक दोनों प्रकार से ही दिया जाता है निर्देशन प्रदान करने वाले व्यक्ति को सम्बंधित विषय अथवा क्षेत्र में विशेषज्ञता होनी चाहिए। निर्देशन प्रदान करने एवं निर्देशन से प्राप्त सूचनाओं को जिन प्रपत्रों के माध्यम से विश्लेषण के लिए एकत्रित किया जाता है उन्हें निर्देशन के उपकरण कहा जाता है। निर्देशन के उपकरण सामन्यतया दो प्रकार के होते हैं -

1-अप्रमापिकृत उपकरण (Non Standardised tool)

2- प्रमापिकृत उपकरण (Standardised tool)

16.5 निर्देशन की प्रविधियां (अप्रमापीकृत) Non Standardised techniques of Guidance

16.5.1 प्रश्नावली (Questionnaire)

प्रश्नावली आंकड़े प्राप्त करने की एक प्रमुख तकनीक है। प्रश्नावली से आंकड़े प्राप्त करने के लिए निर्देशन प्रदान करने वाला व्यक्ति विषय से सम्बंधित क्षेत्र के प्रश्नों के निर्देशन प्राप्तकर्ता द्वारा दिए गये उत्तरों से आंकड़े प्राप्त करता है। प्रश्नावली किसी विशेष क्षेत्र से सम्बन्ध रखने वाले प्रश्नों की एक सूचि होती है जिसके उत्तर किसी व्यक्ति अथवा किसी समूह के द्वारा विशेष रूप से सूचना या तथ्यों को प्राप्त करने के लिए किया जाता है। प्रश्नावली के द्वारा व्यक्ति अथवा समूह से उनके अनुमानित ज्ञान का पता लगया जाता है।प्रश्नावली उत्तरदाता स्वयं भरता है, इस लिए प्रश्नावली में प्रश्नों के उत्तर देने वाले को साक्षर होना अनिवार्य होता है। अनपढ़ व्यक्तियों से प्रश्नावली के द्वारा आंकड़े प्राप्त नहीं किये जा सकते हैं। प्रश्नावली सामान्यतया दो प्रकार की होती हैं –

1-अमुक्तांत (Close Ended)

इस प्रकार की प्रश्नावली के माध्यम से प्रश्नों के उत्तर हाँ अथवा ना में दिया जाता है। इस प्रकार के प्रश्नों से सीमित उत्तर ही प्राप्त किये जा सकते है। अमुक्तांत प्रश्नों वाली प्रश्नावली में आसानी से अंकन एवं व्याख्या की जा सकती है और इसे अधिक वस्तुनिष्ठ माना जाता है।

उदाहरण के लिए – क्या आप उत्तराखंड में निवास करते हैं ? उत्तर हाँ/ना ☐

2-मुक्तांत (Open Ended)

मुक्तांत प्रकार के प्रश्नों में उत्तरदाता से सोचने एवं लिखने की अपेक्षा की जाती है। मुक्तांत प्रश्न समय लेने वाले होते हैं इनमे उत्तरों की व्याख्या के लिए विशेष कौशल की आवश्यकता होती है ।इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर उत्तरदाता पर निर्भर करते हैं। उदहारण के लिए – आप उत्तराखंड में निवास क्यों करते हैं ?

प्रश्नावली निर्माण करते समय निर्मित किये जाने वाले प्रश्नों की भाषा सरल एवं स्पष्ट होनी चाहिए, प्रश्न द्विअर्थी नहीं होने चाहिए एवं प्रश्नों की संख्या सीमित होनी चाहिए। प्रश्नों की संख्या अधिक होने से उत्तरदाता के ध्यान में भटकाव होने की सम्भावना रहती है।

उत्तम प्रश्नावली की विशेषताएँ

ये बहुत व्यापक होती है ताकि संबंधित सूचनाएँ प्राप्त की जा सकें।

- प्रश्नावली में वस्तुनिष्ठ प्रश्न शामिल होने चाहिए।

- प्रश्नावली में प्रश्नों का क्रम उचित हो। यह क्रम सामान्य से विशिष्ट तथा सरल से जटिल की ओर होना चाहिए।
- प्रश्नों की व्यवस्था वर्गों के रूप में हो ताकि सही और आसान अनुक्रियाओं को प्राप्त किया जा सकें।
- प्रश्नावली में निर्देश स्पष्ट और पूर्ण दी जानी चाहिए।
- प्रश्नावली के अंकों का सारिणीकरण सरल होना चाहिए।
- यह स्पष्ट रूप से छपी हुई होनी चाहिए।
- प्रश्नावली में प्रश्नों की संख्या अत्यधिक नहीं होनी चहिये।

16.5.2 अनुसूची (Schedule):

अनुसूची भी प्रश्नावली के सामान ही होती है जिसमे सम्बंधित विषय अथवा क्षेत्र से सम्बन्ध रखने वाले प्रश्नों की एक सूचि होती है जिसके द्वारा निर्देशन प्राप्त करने वाले व्यक्ति से सूचना प्राप्त करके आंकड़े एकत्रित किये जाते हैं। अनुसूची के द्वारा निर्देशन दाता निर्देशन प्राप्त करने वाले से प्रश्न करता है और प्राप्त उत्तरों को स्वयं प्रश्नावाली में भरते जाता है। जबकि प्रश्नावली में उत्तरदाता ही प्रश्नावली के प्रश्नों के उत्तर स्वयं लिखता है। अनुसूची का प्रयोग सामान्य तौर पर अनपढ़ व्यक्तियों से सूचनाएं एकत्रित करने में किया जाता है। जनसँख्या की गणना (जनगणना/ Census) करने आये कर्मचारी सामान्यतया अनुसूची का प्रयोग जनसँख्या से सम्बंधित आंकड़ो को एकत्रित करने के लिए करते हैं।

16.5.3 अवलोकन (Observation)

अवलोकन किसी व्यक्ति के विषय में जानकारी प्राप्त करने का महत्वपूर्ण साधन है। अवलोकन के द्वारा निर्देशन प्रक्रिया में व्यक्ति के विषय में अध्ययन किया जाता है। अवलोकन से विभिन्न प्रकार के व्यवहारों एवं क्रियाओं का विवरण प्राप्त किया जाता है- इस विधि से व्यक्ति की प्रतिदिन की क्रियाओं एवं व्यवहारों का निश्चित समय पर एवं समय-समय पर विवरण इकट्ठा किया जाता है। अवलोकन विधि बहुत ही पुरानी विधि है।

अवलोकन के द्वारा प्रशिक्षित अवलोकनकर्ता, व्यक्ति अथवा समूह के व्यवहार का अध्ययन करता है। अवलोकन द्वारा प्राप्त आंकड़ों की विश्वसनीयता एवं वैधता अवलोकन कर्ता के अवलोकन कौशल पर निर्भर करता है। अवलोकन कर्ता को पूर्वाग्रह एवं पूर्व धारणाओं से मुक्त होना चाहिए। अवलोकन निम्नलिखित प्रकार का होता है

अवलोकन के प्रकार

1. जर्सिल्ड और मीग्स का वर्गीकरण
   i. स्वतंत्र अवलोकन
   ii. नियंत्रित अवलोकन
   iii. अर्ध-नियंत्रित अवलोकन
2. बोनी और हैम्पिलमैन का वर्गीकरण
   i. आकस्मिक अवलोकन
   ii. नियंत्रित अवलोकन
3. संख्या के अनुसार वर्गीकरण
   i. व्यक्तिगत अवलोकन
   ii. सामूहिक अवलोकन
4. स्थिति के अनुसार वर्गीकरण
   i. प्रत्यक्ष अवलोकन
   ii. अप्रत्यक्ष अवलोकन
5. प्रमापीकृत तथा स्वाभाविक अवलोकन
6. बाहरी तथा आन्तरिक अवलोकन
7. निर्देशित या उपपत्ति अवलोकन
8. प्रमापीकृत और स्वाभाविक अवलोकन

अवलोकन के सिद्धान्त

1. एक समय में एक ही बालक का अवलोकन
2. बालकों का अवलोकन नियमित क्रियाओं में
3. लम्बे समय तक अवलोकन
4. पूर्ण परिस्थिति का अवलोकन

16.5.4 साक्षात्कार (Interview)

साक्षात्कार एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रविधि है। साक्षात्कार एक व्यक्तिनिष्ठ अथवा आत्मनिष्ठ प्रविधि है। यह एक उद्देश्य पूर्ण वार्तालाप है जिसके द्वारा विभिन्न प्रकार के उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है। साक्षात्कार के द्वारा व्यक्ति की वाक् पटुता, साक्षात्कार विषय से सम्बंधित ज्ञान, पहनावा, नियंत्रित व्यवहार एवं साक्षात्कार के दौरान पूछे गये प्रश्नों के उत्तर देने में साक्षात्कार दाता का आत्मविश्वास आदि की सूचनाएं एकत्रित की जाती हैं।छात्रों को निर्देशन प्रदान करने की दृष्टि से भी साक्षात्कार एक महत्त्व पूर्ण प्रविधि है। साक्षात्कार प्रविधि की निम्नलिखित विशेषताएं हैं –

- साक्षात्कार उद्देश्य केन्द्रित होता है।
- यह एक लचीली विधि है।
- साक्षात्कार पारस्परिक विचारों के आदान-प्रदान का सर्वश्रेष्ठ साधन है।
- साक्षात्कार की प्रक्रिया के अंतर्गत दो या दो से अधिक व्यक्तियों का वार्तालाप होता है।
- साक्षात्कार के आधार पर व्यक्ति के सम्बन्ध में तथ्यपूर्ण सामग्री का संकलन किया जाता है।
- इस विधि का समाज के किसी भी वर्ग पर प्रयोग किया जा सकता है।
- यह विधि मुख्यतया प्रारंभिक संबंधों पर आधारित होती है यह एक लचीली विधि है।
- लिखित रूप में कुछ भी नहीं देने के कारण लोग इसमें सहयोग करने को आसानी से तैयार हो जाते हैं यह एक लचीली विधि है।

साक्षात्कार प्राविधि निम्नलिखित प्रकार की होती है –

सूचनात्मक साक्षात्कार (Informative Interview)
परामर्श साक्षात्कार (Counselling Interview)
उपचारात्मक साक्षात्कार (Remedial Interview)
निदानात्मक साक्षात्कार (Diagnostic Interview)
अनुसन्धान साक्षात्कार (Research Interview)
तथ्य संकलन साक्षात्कार (Data Collection Interview)
नियुक्ति साक्षात्कार साक्षात्कार (Selection Interview)

16.5.5 आत्मकथा (Autobiography)

आत्मकथा के द्वारा व्यक्ति स्वयं को जानने का प्रयास करता है और वह स्वयं के बारे में वांछित जानकारी निर्देशन प्रक्रिया के दौरान देता है। व्यक्ति के अध्ययन के लिए एक निर्देशन तकनीक के रूप में उस व्यक्ति की रुचियों योग्यताओं, वैयक्तिक इतिहास, आशाओं, अपेक्षाओं पसंद एवं न पसंद आदि के बारे में सूचना प्रदान कराती है। आत्मकथा तकनीक के अंतर्गत निर्देशन हेतु व्यक्ति को संरचित आत्मकथा दी जाती है और उन्हें उसके बारे में लिखने को कहा जाता है। इस प्रकार प्राप्त आत्मकथात्मक सामग्रियां अन्य साधनों द्वारा स्थापित की जाती हैं। व्यक्ति के आंतरिक भावों, अनुभूतियों एवं मूल्यों को किसी अन्य तकनीक द्वारा मापना संभव नहीं हो पाता इसी कारण उपरोक्त विदुओं के मापन के लिए आत्मकथा एक तकनीक के रूप में महत्वपुर्ण है।

आत्मकथा में व्यक्ति अपने जीवन के लक्ष्यों, उपलब्धियों, रूचियों, इच्छाओं, घटनाओं प्रतिक्रियाओं आदि का वर्णन वास्तविकता के पुट के साथ करता है, इस विधि में व्यक्ति को इस बात की स्वतंत्रता होती है कि वह अपने अनुभवों तथा जीवन की घटनाओं को जिस प्रकार चाहे लिख सकता है। इस प्रकार यह एक आत्मनिष्ठ विधि है।

आत्मकथा के प्रकार

i. निर्देशित आत्मकथा
ii. अनिर्देशित आत्मकथा
iii. मिश्रित आत्मकथा

आत्मकथा के निम्नलिखित दो प्रकार भी बताये गये हैं-

i. व्यक्तिगत इतिहास
ii. निर्देशित आत्मकथा

16.5.6 रेटिंग स्केल/अनुस्थिति मापनी (Rating Scale)

इस तकनीक में किसी व्यक्ति में उपस्थित या अनुपस्थित या किसी व्यवहार या गुण का मूल्यांकन मात्रा और गुणवत्ता के आधार पर किया जाता है। रेटिंग स्केल द्विध्रुवीय होता है जिसमे गुणात्मक रूप में ज्ञात किया जाता है परन्तु छात्रों को अंक या रेटिंग देने के लिए उनकी क्षमताओं के मापन हेतु रेटिंग स्केल का उपयोग किया जाता है।

रेटिंग स्केल के द्वारा तीन, पांच तथा सात विन्दुओं में वर्गीकरण किया जाता है।

✓ तीन बिन्दुओं की मापनी (Three point scale)

1	2	3
सहमत/Agreed	तटस्थ/Neutral	असहमत /Disagree

पांच बिन्दुओं की मापनी (Five point scale)

✓ 1	2	3	4	5
पूर्णतया सहमत	सहमत	अनिश्चित	असहमत	पूर्णतया असहमत
अंक (5/4)	(4/3)	(3/2)	(2/1)	(1/0)

इसी प्रकार सात बिन्दुओं के रेटिंग स्केल द्वारा भी मापन किया जाता है। लिकर्ट स्केल भी पांच बिन्दुओं (Five point) पर आधारित होता है।

16.5.7 समाजमिति (Sociometry)

समाजमिति समूह के अंदर किसी व्यक्ति के सामाजिक सम्बन्ध की प्रकृति को जानने की एक तकनीक है। इस तकनीक का उद्देश्य एक समूह के अंदर व्यक्ति के सामजिक सम्बन्ध की प्रकृति का अध्ययन करना होता है। यह व्यक्तित्व की समस्याओं विशेषत: पृथक्कता एवं अस्वीकृति को पहचानने का अवसर देती है। समूह अथवा कक्षा में जो शिक्षार्थी कक्षा के अन्य शिक्षार्थियों से कोई सम्बन्ध नहीं रखते वे पृथक (Isolate) होते हैं। अस्वीकृत शिक्षार्थी अन्य शिक्षार्थियों द्वारा नापसंद किये जाते हैं इस प्रकार इस तकनीक के माध्यम से शिक्षार्थियों के सामाजिक व्यवहार का अध्ययन किया जा सकता है। समाजमितीय आकड़ों को समाज आरेख के रूप में प्रस्तुत किया जाता है जो एक समूह में आकर्षण और प्रतिकर्षण को दिखाता है और समूह के सम्बन्ध में विद्यार्थियों की समस्याओं का पता लगाने में शिक्षक की सहायता करता है।

समाजमिति प्राविधि के अंतर्गत सामूहिक निर्देशन तथा व्यक्ति के समायोजन के लिए पारस्परिक संबंधों के स्वरूप का विश्लेषण किया जाता है। कक्षा के स्वरूप छात्रों के पारस्परिक संबंधों से बनता है। जिसमे एक दूसरे के प्रति आकर्षण या अलगाव की प्रवृति होती है। प्रत्येक छात्र अन्य छात्रों के प्रति धनात्मक अथवा ऋणात्मक सम्बन्ध की प्रवृति रखता है। कुछ छात्रों व्यक्तियों में आकर्षण दोनों और से होता है और कुछ में एक और से होता है। कुछ छात्र अन्य छात्रों के प्रति तटस्थ

रहते हैं। एक छात्र किसी विशिष्ठ छात्र के प्रति प्रबल आकर्षक रखता है अथवा विरोधी भावना होती है। कुछ छात्र अधिकाँश छात्रों द्वारा निरस्त किये जाते हैं – इस प्रकार समंधों के आधार पर छात्रों को चार मुख्य वर्गों में विभाजित किया जाता है-

1-नायक अथवा नायिका की भूमिका (Star)

2-अलगाववादी या पृथकतावादी प्रवृति (Isolate)

3-पारस्परिक चुनाव या वरीयता स्तर (Mutual Choice)

4- संबंधों की कड़ियाँ का स्वरूप

इस प्रकार समूह के छत्रों के आपसी सम्बन्धों का आकलन समाजमिति चित्र (Sociogram) की सहायता से किया जाता है।

शिक्षक समाजमिति विश्लेषण द्वारा कक्षा के विद्यार्थियों के वास्तविक स्वरूप को जानकर छात्रों के आपसी समबंधों का विश्लेषण कर कक्षा में नायक तथा आइसोलेट छात्रों की पहचान करके उन्हें विशिष्ठ निर्देशन एवं परामर्श के द्वारा उनकी समस्याओं का निदान करता है। और इस बात प्रयास करता है कि जो छात्र कक्षा में अकेलेपन का अनुभव कर रहा है उसे अन्य छात्रों के साथ समायोजन करने में सहायता प्रदान की जा सके।

16.5.8 व्यक्ति वृत विधि/ केस स्टडी (Case study)

यह विधि व्यक्ति के पूर्ण जीवन के तथ्यों को संकलित करती है। व्यक्ति के व्यक्तित्व के सभी तथ्यों को इकठ्ठा करके उनका विश्लेषण किया जाता है यह व्यक्ति के जीवन का पूर्ण इतिहास होता है। केस स्टडी के द्वारा अधिकाँश समायोजन क्षमताओं का अध्ययन किया जाता है। केस स्टडी के द्वारा प्रयोज्य के जीवन के समस्त पक्षों को एक विशेषज्ञ द्वारा एकत्रित किया जाता है। केस स्टडी विधि में व्यक्ति के व्यक्तित्व से सम्बंधित सूचनाओं को दर्ज करने के लिए स्पष्टता और इमानदारी का प्रयोग किया चाहिए। केस अध्ययन आंकड़े संग्रह करने के सभी उपकरणों एवं तकनीकों का उपयोग कर एकत्रित की गई सूचना का एक समग्र संग्रह है। केस अध्ययन व्यक्ति की सम्पूर्णता में अध्ययन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण तकनीक और सर्वोतम विधि मानी जाती है। जिसका उद्देश्य है कि आत्मविश्वास के साथ सकारात्मक तरीके से सूचना के सभी स्रोत काम में लाये जांय। केस अध्ययन के अंतर्गत परामर्श दाता न केवल समस्या के निदान में और उपयुक्त उपचार का सुझाव देने में रूचि रखता है

बल्कि वः एक बेहतर समायोजन लाने के बारे में भी रूचि रखता है। एक केस अध्ययन में एकत्रित किये जाने वाले तथ्य किसी व्यक्ति के बारे में निम्नलिखित बिदुओं पर सूचनाएं प्रस्तुत करता है।

- ✓ व्यक्ति का व्यैक्तिक इतिहास
- ✓ परिवार का इतिहास एवं परिवार की वर्तमान स्थिति
- ✓ व्यक्ति के भौतिक, सामाजिक, आर्थिक और सामजिक वातावरण

उपरोक्त बिन्दुओं को ध्यान में रखकर केस अध्ययन की रूप रेखा तैयार करनी चाहिए और प्राप्त आकड़ों के विश्लेष्ण के द्वारा ही प्रयोज्य को निर्देशन देना चाहिए।

16.5.9 संचयी अभिलेख (Anecdotal Record)

संचयी अभिलेख का तात्पर्य उस अभिलेख अथवा रिकार्ड से होता है जिसमे प्रयोज्य के आज तक के जीवन के सभी प्रकार की सूचनाएं एकत्रित होती हैं। यह शिक्षार्थी के व्यक्तिगत आंकलन से सम्बद्ध सूचनाओं का एक अभिलेख है जो कि अलग अलग समय पर विभिन्न प्रकार के स्रोतों जैसे कि, परीक्षणों, साक्षात्कारों, अवलोकनों, केस अध्ययन आदि द्वारा प्राप्त सूचनाओं को एकत्रित कर बनाया जाता है। संचयी अभिलेख का उपयोग तब किया जाता है जब शिक्षार्थियों को शैक्षणिक अथवा व्यावसायिक समस्या के समाधान के लिए परामर्श की आवश्यकता होती है। एक संचयी अभिलेख साधारणतया निम्नलिखित बिन्दुओं पर सूचनाओं की आपूर्ति करता है।

विद्यार्थियों को परामर्श और निर्देशन प्रदान करने के लिये उनसे सम्बन्धित विभिन्न प्रकार की सूचनाओं को इकट्ठा किया जाता है। उसे इकट्ठा करके जिस रूप में रखा जाता है उसे हम संचित अभिलेख कहते हैं।

ऐलन के अनुसार -''संचित अभिलेख- सूचनाओं का वह अभिलेख है जिनका संबंध बालक के मूल्यांकन से होता है और जिसे एक कार्ड पर लिखकर एक ही स्थान पर रखा जाता है।''-

संचित अभिलेख पत्र की विशेषताएँ

इसमें निम्नलिखित विशेषताएँ हैं-

(1) सरलता (2) रख-रखाव (3) वस्तुनिष्ठता

(4) शब्दों और संकेतों का अर्थ पूर्ण प्रयोग (5) पूर्ण सूचनाएँ

(6) सत्य सूचनाएँ (7) गोपनीयता (8) सामूहिक मूल्यांकन पर आधारित

(9) समय-समय पर मूल्यांकन (10) निरंतरता (11) लचीलापन

संचित अभिलेख के उद्देश्य

1. दोहरे प्रयासों को रोकना
2. लाभकारी सूचनाएँ प्रदान करने के लिये
3. समस्या क्षेत्रों को चिन्हित करने के लिए
4. वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन के लिये
5. बालक के लिये संचित अभिलेख

16.6 निर्देशन की प्रविधियां (प्रमापीकृत)

Standardised Techniques of Guidance

मानकीकृत/प्रमापीकृत प्राविधि या परिक्षण वो होता है जिसमें अपना एक निश्चित मानक होता है और उसके अंकन का तरीका पूर्व निर्धारित होता है। प्रमापीकृत परीक्षणों को प्रयोग करने से पूर्व विभिन्न स्तरों पर जांचा परखा जाता है, एवं विभिन्न विधियों से विस्वसनीयता एवं वैद्यता की जांच की जाती है। परीक्षण के परिणामों का विश्लेषण करने के बाद उन्हें विषय विशेषज्ञों के पास भेजा जाता है सार्थक परिणाम आने के बाद ही परीक्षणों को प्रमापिकृत माना जाता है। एक प्रमापिकृत परीक्षण में बहुविकल्पीय, लघु उत्तरीय एवं दीर्घ उत्तरीय प्रश्नों का समावेश हो सकता है। इस प्रकार के परीक्षणों को व्यक्तिगत एवं सामूहिक दोनों ही रूप में प्रयोग में लाया जा सकता है।

16.6.1 उपलब्धि परिक्षण (Achievement Test)

उपलब्धि परिक्षण विद्यार्थियों की विभिन्न प्रकार की उपलब्धियों को जानने का एक तकनीक है। उपलब्धि परिक्षण विद्यार्थियों द्वारा अर्जित ज्ञान एवं कौशलों में निपुणता का मापन करने का एक माध्यम है। उपलब्धि परीक्षणों से जहाँ एक ओर विद्यार्थियों के द्वारा अर्जित ज्ञान का मापन करता है दूसरी ओर अध्यापकों के शिक्षण कौशल का मूल्यांकन भी किया जा सकता है। उपलब्धि परिक्षण कक्षा शिक्षण में गतिमान शिक्षण विधियों का की प्रासंगिकता का ज्ञान भी कराते हैं। साथ ही प्राप्त आकड़ों के विश्लेषण से पाठ्यचर्या में बदलाव किया जा सकता है।

उपलब्धि परीक्षणों का उपयोग सामान्यतया विद्यार्थियों की अधिगम की मात्रा नापने, अधिगम की दर को मापने एवं उपलब्धियों की तुलना करने आदि में किया जाता है।

16.6.2 अभिरुचि परिक्षण (Aptitude Test)

विद्यार्थी विद्यालय में शिक्षण प्रक्रिया के दौरान अपनी-अपनी रूचि के अनुसार अलग अलग विषयों के प्रति अपना लगाव दर्शाते हैं। उदाहरण के लिए कुछ विद्यार्थी गणित में, कुछ भाषा में, कुछ कंप्यूटर विज्ञानं में तो कुछ की रूचि चित्रकला में होती है। अभिरुचि निश्चित अनुभवों के प्रति व्यवहार का अनुकूलन है। अभिरुचि हमारी पसंद एवं नापसंद अथवा आकर्षण एवं प्रतिकर्षण के प्रति एक अभिव्यक्ति है। कोई भी व्यक्ति यदि उससे चुनने का अवसर दिया जाय तो वह सर्वप्रथम अपने पसंद की वस्तु अथवा पसंद का कार्य ही चुनता है। इस प्रकार व्यक्ति का किसी विषय अथवा वस्तु के प्रति प्रथम चुनाव को उसकी अभिरुचि कहा जा सकता है इस प्रकार की गतिविधिओं के पूर्ण होने पर व्यक्ति को संतुष्टि मिलती है। उदहारण के लिए यदि किसी व्यक्ति के शिक्षण कार्यों के प्रति रूचि होगी तो उसे शिक्षण कार्यों को करने में संतुष्टि एवं ख़ुशी होगी। इसी लिए शिक्षकों के चयन से पूर्व उनकी चयन परीक्षा में एक प्रश्नपत्र शिक्षण अभिरुचि का भी होता है। इसी प्रकार अन्य क्षेत्रों के प्रति भी अलग अलग व्यक्तियों की रूचि भी अलग अलग हो सकती है। अभिरुचि परिक्षण करने के कुछ उद्देश्य होते हैं, अभिरुचि परिक्षण के द्वारा विद्यार्थियों की रुचियों का अध्ययन करके उनकी समस्याओं का निदान किया जा सकता है। विविध पाठ्क्रमों एवं जीवन वृतियों के सापेक्ष विद्यार्थियों की अभिरुचियों को पहचानकर उनकी सहायता करने में अभिरुचि परिक्षण सहायक हो सकते हैं। विद्यार्थियों की अभिरुचियों को पहचान कर उनके शिक्षकों, अभिभावकों एवं परामर्शदाताओं को विद्यार्थियों को उनकी रुचियों के प्रति समर्थ बनाना जिससे कि उनकी अभिरुचियों के क्रम में उने शैक्षणिक एवं व्यावसायिक योजनाओं को तैयार करने में उनकी सहायता करना। इस प्रकार अभिरुचि परिक्षण के द्वारा किसी भी कार्य के लिए सही व्यक्ति का चुनाव किया जा सके।

अभिरुचियों का आंकलन करने का एक तरीका है शिक्षार्थियों से पूछना कि वे क्या करना चाहते हैं दूसरा तरीका है उनकी दैनिक गतिविधियों का विश्लेषण करना, और तीसरी विधि है अभिरुचि परीक्षणों एवं अभिरुचि मापनियों का उपयोग करना। अभिरुचि परिक्षण के लिए जो उपकरण उपलब्ध हैं उनमे से मुख्य निम्नलिखित हैं –

कुडर अभिरुचि मापनी-

कुडर अभिरुचि मापनीयों के विविध प्रारूप एवं संस्करण हैं जो की विभिन्न उद्देश्योंकी प्राप्ति को ध्यान में रखकर निर्मित किये गये हैं। कुडर अभिरुचि मापनियों के प्रकार निम्नलिखित हैं-

कुडर व्यावसायिक वरीयता अभिलेख-

कुडर व्यावसायिक वरीयता अभिलेख असावधानी, नासमझी,और सामाजिक रूप से वांछनीय किन्तु निराशाजनक उत्तरों के पसंद का पता लगाने के लिए 10 अभिरुचि पैमानों के साथ सत्यापन पैमाना प्रदान करता है।

कुडर सामान्य अभिरुचि सर्वेक्षण –

यह एक पुनरावलोकन और कुडर व्यावसायिक प्राथमिकता अभिलेख के नीचे प्रसार के लिए विकसित किया गया है यह ग्रेड 6 से 12 के लिए निर्मित किया गया है। यह सरलतम भाषा और आसान शब्दावली को संघटित करता है। यह दृढ व्यावसायिक रूचि ब्लैंक का एक पुनरावलोकन है।

16.6.3 व्यक्तित्व परिक्षण(Personality Test)

किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व के बारे में जानना प्राचीन समय की तुलना में आज आसान हो गया है इसका कारण मनो वैज्ञानिकों द्वारा विकसित किये गये कई प्रकार के व्यक्तित्व परिक्षण हैं। जिनके द्वारा किसी व्यक्ति के व्यवहार को सरलता से और जाना जा सकता है। यदि उसके व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाने की आवश्यकता है तो उसे उचित निर्देशन एवं परामर्श दिया जाता है। क्योंकी आज मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्ति के व्यक्तित्व गुणों का मापन संभव कर दिया है। यदि हम किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को भली भाँती जान जाते हैं तो उसमे निर्देशन एवं परामर्श के द्वारा वांछित बदलाव लाये जा सकते है। और इन्हीं गुणों को ध्यान में रखकर व्यक्ति के भावी जीवन को सफल बनाने की योजना बनायी जाती है।

व्यक्तित्व मापन की विस्वसनीय एवं वैध विधि व्यक्तित्व मापन की **प्रक्षेपीय विधि(Projective Method)** है इसी विधि के द्वारा वर्तमान में व्यक्तित्व परीक्षणों के द्वारा किसी व्यक्ति के व्यवहार को जानने का प्रयास किया जाता है।

मरफी के अनुसार –"व्यक्तित्व परिक्षण जो विधि पूर्वक किये जाते हैं वे व्यक्तित्व को समग्र रूप से ग्रहण करते हैं। इससे विशिष्ठ व्यवहार या प्रतिमान नहीं होता, इसे प्रक्षेपण कहते हैं क्योंकि व्यक्ति जो कार्य करता है वह स्वम को क्रियामें प्रक्षेपित करता है यही उसके व्यक्तित्व में प्रकट होती है"।

प्रक्षेपण विधि की विशेषताएं –

1- **स्वरुप हीन सामग्री** – इस विधि में प्रयुक्त की जाने वाली सामग्री स्वरूप हीन होती है। इसमें विषयी को अवबोध तथा विशेषण की पूर्ण स्वतंत्रता होती है। इस बिधि में कम सूचनाएं दी जाती हैं।

2- **अचेतन मन का अध्ययन** – मनोविश्लेषण वादियों के अनुसार दमित इच्छाएं अचेतन में पहुँच जाती हैं और मनुष्य के दैनिक व्यवहार को प्रभावित करते हैं। व्यक्ति का वास्तविक मूल्यांकन उसके आंतरिक व्यवहार से ही किया जा सकता है इसीकारण उसके अचेतन मन का अध्ययन आवश्यक हो जाता है।

3- **सम्पूर्ण व्यक्तित्व का अध्ययन** –व्यक्तित्व का अध्ययन अंश के रूप न करके समग्र रूप में किया जाता है क्योंकि व्यक्तित्व का संगठन गत्यात्मक होता है।

व्यक्तित्व के प्रक्षेपण विधि के लाभ-

- अचेतन मन का अध्ययन
- मानसिक स्थिति का अध्ययन
- शारीरिक दुर्बलताओं का अध्ययन
- मानसिक रोगों का अध्ययन
- भविष्य हेतु मार्ग दर्शन
- बुद्दी का स्तर जानने में
- मानसिक चिकत्सा में लाभ

प्रक्षेपीय विधि के निम्नलिखित दो परीक्षण लोकप्रिय है।

i. रोशा मसि लक्ष्य परीक्षण (Rorschach Inkblot Test)

इस परीक्षण का निर्माण हरमन रोशा ने किया था। इस परीक्षण का निर्माण मनोचिकित्सकीय डिसआर्डर का निदान करने के लिए किया जाता है। लेकिन वर्तमान में इसका उपयोग सामान्य व्यस्कों, किशोरों एवं बच्चों के लिए भी किया जाता है। इस परीक्षण में कुल 10 कार्ड होते हैं। जिसमें से प्रत्येक पर एक सममित मसि लक्ष्य बना होता है। प्रत्येक कार्ड व्यक्तिगत रूप से प्रशासित किया जाता है। ये कार्ड एक-एक करके एक निश्चित क्रम में

व्यक्ति के सामने प्रस्तुत किये जाते हैं तथा पूछा जाता है कि मसि लक्ष्य में उसे क्या दिखाई दे रहा है या मसि लक्ष्य किस आकृति जैसा लग रहा है। व्यक्ति के दिये गये उत्तरों के आधार पर उसके व्यक्तित्व के संबंध में निष्कर्ष ज्ञात किये जाते हैं। प्रतिक्रियाओं को स्थिति (W , D, d, or dd i.e. **समग्र**, अंश, लघु अंश अथवा मिनट विवरण), रूप एवं गति/चलन के रूप में रिकार्ड किया जाता है। यह परीक्षण व्यक्ति के बौद्धिक क्रियाविधि, सांवेगिक नियंत्रण, समायोजन, रूचियों, चिन्ता इत्यादि के बारे में सूचना प्रदान करता है। विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत व्यक्तियों के व्यक्तित्व का मापन करने के प्रयास भी किए गए हैं। इस परीक्षण के आधार पर लोगों के नौकरी या व्यवसाय में सफल होने की भविष्यवाणी भी की गयी। इसका प्रयोग रक्षा विभाग में विभिन्न पदों पर व्यक्तियों की नियुक्ति हेतु भी किया गया है। इसका प्रयोग भारत के सभी केन्द्रों व अन्य देशों के केन्द्रों पर परामर्श एवं निर्देशन देने में किया गया।

ii. प्रासंगिक अन्तर्बोध परीक्षण(Thematic apperception test)

प्रक्षेपीय ढंग से व्यक्तित्व मापने के इस लोकप्रिय परीक्षण का निर्माण सन् 1935 में सी0डी0 मार्गन तथा एच0ए0 मुरे ने किया था। इस परीक्षण की आधारभूत मान्यता यह है कि जब व्यक्ति के सम्मुख कोई अस्पष्ट सामाजिक परिस्थिति प्रस्तुत की जाती है तथा उससे उस परिस्थिति के अनुरूप कोई काल्पनिक कहानी बनाने के लिए कहा जाता है तो उस कहानी के विभिन्न पात्रों से वह व्यक्ति अपने व्यक्तित्व की विशेषताओं को अप्रत्यक्ष रूप से अभिव्यक्त कर देता है। कहानी के कथानक से उस व्यक्ति की आवश्यकताओं, चिंताओं, इच्छाओं, विचार प्रतिक्रियाओं, परिपक्कता स्तर, आत्म प्रतिमा, सामाजिक समायोजन, दृष्टिकोण आदि का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इस परीक्षण में कुल 38 कार्ड होते हैं। एक-एक करके प्रत्येक कार्ड को दिखा व्यक्ति से कहानी बनाने को कहा जाता है इसके पश्चात् प्रयोज्यों से बनायी गयी कहानियों का अंकन व विश्लेषण करके उसके व्यक्तित्व का आंकलन करने का प्रयास किया जाता है। यह परीक्षण भारत में परामर्शदाताओं व निर्देशनकर्त्ताओं के बीच काफी लोकप्रिय है।

रोशा परीक्षण तथा प्रासंगिक अन्तर्बोध परीक्षण में मुख्य अन्तर इस बात का है कि रोशा परीक्षण की सहायता से व्यक्तित्व की संरचना तथा संगठन की जानकारी करने का प्रयास किया जाता है। जबकि प्रासंगिक अन्तर्बोध परीक्षण से व्यक्तित्व के गुणों को ज्ञात करने की कोशिश की जाती है।

इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि किसी भी प्रकार के निर्देशन के लिए व्यक्तित्व का ज्ञान होना आवश्यक है। व्यक्तित्व के गुणों , विशेषताओं की जानकारी विक्तित्व को निखारने एवं व्यक्तित्व में व्याप्त कमियों को कम करने में सहायक होती हैं। व्यक्तित्व परीक्षणों का उपयोग व्यक्तित्व मूल्यांकन में किया जा सकता है।

16.6 निर्देशन और परामर्श में 'परीक्षण' के उपयोग (Use of 'test' in guidance and Counselling)

- **प्रश्नावली का का परामर्श तथा निर्देशन में उपयोग-**

निर्देशन एवं परामर्श में प्रश्नावली की महत्वपूर्ण भूमिका है, प्रश्नावली के द्वारा वांछित आंकड़े एकत्रित किये जाते हैं और उन आंकड़ों का विश्लेषण करने के पश्चात विद्यार्थियों/ परामर्श प्रार्थी की समस्याओं का निदान करके उनके भावी जीवन को उचित निर्देशन एवं परामर्श के द्वारा संवारा जा सकता है।

अनुसूची का परामर्श तथा निर्देशन में उपयोग-

प्रश्नावली एवं अनुसूची लगभग सामान ही होती हैं। अनुसूची उन व्यक्तियों पर प्रयोग की जाती हैं जो साक्षर नहीं है अर्थात लिखना एवं पढना नहीं जानते हैं। अनुसूची का कार्य भी आंकड़े एकत्रित करना ही है। इस प्रकार अनुसूची उन व्यक्तियों को निर्देशन एवं परामर्श देने में सहायक होती है जो स्वयं लिख –पढ़ नहीं सकते हैं।

अवलोकन का परामर्श तथा निर्देशन में उपयोग-

निर्देशन एवं परामर्श में अवलोकन विधि की भी महत्वपूर्ण भूमिका हैअवलोकन के द्वारा द्वारा किसी व्यक्ति अथवा समूह की गतिविधियों का मूल्यांकन किया जाता है। अवलोकन के द्वारा प्राप्त आकड़ों के विश्लेष्ण के उपरांत प्राप्त परिणामों के आधार पर सम्बंधित व्यक्ति अथवा समूह को निर्देशित किया जाता है।

साक्षात्कार का परामर्श तथा निर्देशन में उपयोग-

साक्षात्कार से प्रार्थी को सम्पूर्ण रूप से समझा जा सकता है। साक्षात्कार से अभिवृत्तियों, संवेगो तथा विचारों आदि का अध्ययन किया जा सकता है। साक्षात्कार ही एक ऐसी विधि है जिससे व्यक्ति के दृष्टिकोण, भावनाओं, प्रतिक्रियाओं आदि का अध्ययन किया जा सकता है।

आत्मकथा का परामर्श तथा निर्देशन में उपयोग-

आत्मकथा के द्वारा व्यक्ति से सम्बंधित व्यक्तिगत आंकड़े प्राप्त होते हैं जो कि स्वयं ब्यक्ति के द्वारा स्वयं के जीवन के विभिन्न पक्षों/ पहलुओं को दर्शाते हैं। इस प्रकार प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण कर सम्बंधित व्यक्ति को परामर्श एवं निर्देशन दिया जा सकता है और उसके भावी जीवन में सकारात्मक बदलावों का प्रयास किया जा सकता है।

रेटिंग स्केल का परामर्श तथा निर्देशन में उपयोग

रेटिंगस्केल का उपयोग किसी भी स्थिति, विचार या वस्तु में छात्रों के दृष्टि कोण को मापने के लिए लिया जाता है। इसके द्वारा किसी निश्चित व्यवहार को करने के लिए उपयोग कर्ता के झुकाव का आंकलन किया जा सकता है। और इस प्रकार यह जाना जा सकता है कि व्यक्ति का झुकाव किस ओर है? इस प्रकार प्राप्त जाकारी का विश्लेषण करके व्यक्ति को परामर्श एवं निर्देशन के द्वारा उचित एवं सकारात्मक मार्गदर्शन दिया जा सकता है।

समाजमिति का परामर्श तथा निर्देशन में उपयोग

समाजमिति विधि से प्राप्त जानकारी की सहायता से व्यक्ति के सामाजिक समायोजन संबंधी समस्याओं के समाधान ढुंढे जा सकते हैं। समाजमिति व्यक्ति की उसके समूह में स्थिति को दर्शाती है। समाजमिति प्रविधि सामान्य रूचियों और कौशलों से युक्त व्यक्तियों के चयन में सहायक सिद्ध होती है। समाजमिति से बालकों में विकसित होने वाले अलोकतन्त्रीय व्यवहार को जाना जा सकता है। इस विधि से नेतृत्व के गुणों से युक्त व्यक्तियों की खोज की जा सकती है।

केस स्टडी का परामर्श तथा निर्देशन में उपयोग

व्यक्ति अध्ययन में सारी सूचनाओं में निरन्तरता होती है। जिससे परामर्शदाता को इन तथ्यों के विषय में अध्ययन करने में सहायता मिलती है। और व्यक्ति को उचित निर्देशन एवं परामर्श दिया जा सकता है।

संचयी रिकार्ड का परामर्श तथा निर्देशन में का उपयोग

शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन के लिये बालक से संबंधित भिन्न-भिन्न प्रकार की सूचनाओं की आवश्यकता पड़ती है अतः परामर्शदाता को ये सभी सूचनाएँ संचित अभिलेख पत्रों के

माध्यम से ही उपलब्ध कराई जाती है। इसकी सहायता से कुसमायोजित एवं पिछड़े बालको की भी सहायता की जा सकती है।

परामर्शदाताओं को बालकों की उन विशिष्ट योग्यताओं की खोज करने में सहायता देता है जिनका विकास किया जाता है।

निर्देशन की प्रविधियां (प्रमापीकृत) का परामर्श तथा निर्देशन में उपयोग

उपलब्धि परिक्षण का परामर्श तथा निर्देशन में उपयोग

उपलब्धि परीक्षणों से प्राप्त आंकड़ों के द्वारा हम विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धियों को जान सकते हैं और इस बात का पता भी लगा सकते हैं कि किस विद्यार्थी की रूचि किस विषय में अधिक और किस विषय में कम है। और इस प्रकार उचित परामर्श एवं निर्देशन के द्वारा विद्यार्थियों को उसके भावी योजनाओं के लिए तैयारी करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है।

अभिरुचि परिक्षण का परामर्श तथा निर्देशन में उपयोग

अभिरुचि परिक्षण के द्वारा विद्यार्थियों की रुचियों का पता लगाया जा सकता है इसके द्वारा इस बात की भी जानकारी मिल सकती है कि अमुक विद्यार्थी अपने भावी जीवन में किस प्रकार के व्यवसाय में उत्कृष्ट प्रदर्शन कर सकता है। इस प्रकार प्राप्त आंकड़ों के द्वारा विद्यार्थियों को उनके पसंद की विषयों के चयन करने में एवं भविष्य में व्यवसाय चुनने में सहायता दी जा सकती है।

व्यक्तित्व परिक्षण का परामर्श तथा निर्देशन में उपयोग

व्यक्तित्व परिक्षण के द्वारा व्यक्ति के व्यवहार का तो पता लगाया ही जा सकता है साथ ही उसकी मानसिक स्थिति एवं दृष्टिकोण का भी पता लगाया जा सकता है व्यक्तित्व परीक्षण की सहायता से हम प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व के विषय में पूरी जानकारी हासिल कर उसका मार्गदर्शन कर सकते हैं एवं परामर्श दे सकते हैं।

16.8 सारांश (Summary)

प्रस्तुत ईकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह समझने में सक्षम हो चुके होंगें कि निर्देशन और परामर्श का एक विद्यार्थी के जीवन में कितना महत्व है। साथ ही आप यह भी समझ चुके होंगे की किन-किन उपकरणों के द्वारा हम निर्देशन एवं परामर्श हेतु आंकड़े एकत्रित कर सकते हैं। और उन

आंकड़ों के विश्लेषण से हम किसी निर्णय पर पहुँच सकते हैं। उपकरणों के सन्दर्भ में आप प्रमापिकृत एवं अप्रमापिकृत आंकड़ों की तुलना कर सकते हैं। और यह भी जानने में सक्षम हैं कि किन–किन परीक्षणों के द्वारा किस प्रकार की सूचनाएं अथवा आंकड़े एकत्रित किये जा सकते हैं। उदाहरण के लिए हम इन परीक्षणों से व्यक्तित्व के बारे में पता लगा सकते हैं, विद्यार्थियों के बुद्दी के स्तर को जान सकते हैं, उनकी रुचियों एवं पसंद का पता लगा सकते हैं। समाज मिति के द्वारा किसी विद्यार्थी अथवा विद्यार्थियों की समूह में स्थिति का पता लगा सकते हैं। विद्यार्थियों की विभिन्न विषयों एवं पाठ्य सह गामी क्रियायों में उपलब्धि का पता लगा सकते हैं। केस स्टडी एवं आत्मकथा के द्वारा किसी व्यक्ति के जीवन इतिहास की जानकारी हासिल कर सकते हैं। इन सब के अतिरिक्त हम अपनी कक्षाओं के प्रत्येक विद्यार्थी की व्यक्तिगत जानकारी एक्ट करके एक संचयी रिकार्ड तैयार कर सकते हैं जो कि उसके भविष्य की योजनाओं को क्रियान्वित करने में सहायक साबित हो सकता है।

16.9 शब्दावली

प्रमापीकृत उपकरण (Standardised Tools) -ऐसा उपकरण जिसका निर्माण उपकरण हेतु निर्धारित चरणों के अनुसार किया जाता है साथ ही साथ उसकी वैधता, विश्वसनियता एवं मानक स्थापित किये जाते हैं, प्रमापीकृत उपकरण कहलाता है।

प्रश्नावली (Questionnaire)- प्रश्नावली प्रश्नों की वह लम्बी सूची होती है जो व्यक्ति से सूचनाएं एकत्रित करने के लिये तैयार की जाती है।

समाजमिति (Sociometry) - समाजमिति, एक समूह के सदस्यों के बीच आपसी संबंध को मापता है

अवलोकन (Observation)- अवलोकन से विभिन्न प्रकार के व्यवहारों एवं क्रियाओं का विवरण प्राप्त किया जाता है।

16.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शर्मा. आर.ए. (2011) शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन तथा परामर्श आर.लाल.बुक डिपो
2. सक्सेना. राधारानी (2009) शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श राजस्थान hindi ग्रन्थ अकादमी जयपुर

3. मंगल, डॉ0 एस0 के0 एवं श्रीमती श्रुभ्रा (2003), मार्गदर्शन एवं परामर्श, आर्य बुक डिपो, मेरठ
4. गुप्ता, एस.पी. (2008), उच्चत्तर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद
5. सिंह, ए. के. (2010), शिक्षा मनोविज्ञान, भारती भवन पब्लिशर्स, पटना
6. Sharma, N.R. (2012). Educational and Vocational Guidance. Agra: Vinod Pustak Mandir
7. Mathur,S.S.(2012).Fundamentals of Guidance and Counselling.Agra: VinodPustak Mandir
8. Tiwari Ramakant. (2009) Guidance and Counselling Kunal books Dariyaganj New Delhi
9. https://egyankosh.ac.in/bitstream/123456789/46392/1/Unit-5.pdf
10. https://social-work.in/nirdeshan/
11. www.wikipedia.org/wiki
12. http://encyclopedia2.thefreedictionary.com

16.11 अभ्यास प्रश्न

1. परामर्श एवं निर्देशन को परिभाषित कीजिए। विद्यार्थियों के विकास में परामर्श एवं निर्देशन की भूमिका लिखिए ।
2. निर्देशन एवं परामर्श के उपकरणों से आप क्या समझते हैं? किन्हीं दो उपकरणों की विस्तार से चर्चा कीजिए।
3. प्रमापीकृत तथा अप्रमापीकृत प्रविधियों में अन्तर बताइए तथा प्रमापीकृत प्रविधि की व्याख्या किजिए।
4. विभिन्न प्रकार के परीक्षणों का निर्देशन तथा परामर्श में उपयोगिता की उदाहरण सहित व्याख्या किजिए।
5. व्यक्तित्व मापन की प्रक्षेपीय विधियों से आप क्या समझते हैं? किसी एक विधि का विस्तार पूरवक वर्णन कीजिए।

6. प्रमापिकृत एवं अप्रमापीकृत परीक्षणों की विधियों की किन्हीं दो दो विधियों को उदाहरन सहित समझाइए।